Maa Omwati Degree College (Hassanpur)

Subject- राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी

CLASS- B.A 2(SEM)

SESSION- 2024- 25

1

हिंदी : संकल्पना और अनुप्रयोग

(क) हिंदी भाषा के विविध रूप : राजभाषा

1. भाषा से आप क्या समझते हैं? भाषा को परिभाषित करते हुए उसके महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–भाषा का प्रश्न–भाषा एक ऐसा 'बहता नीर' है जो अबोध और अकूल होकर भी सर्वथा अव्यवस्थित अथवा दिशाहीन पथ का गामी नहीं। उसकी अपनी प्रकृति, प्रवृत्ति और मर्यादा-सीमा सुनिश्चित है। इस परिधि के भीतर रहकर भी भाषा की विकास-यात्रा अनेक वीथियों, सरणियों और मार्गों का अनुसरण करती हुई अविराम गति से निरन्तर प्रवाहमान रहकर अपने समूचे परिवेश को आप्लावित और रससिक्त करती चलती है। यदि भाषा न होती तो आज दिख रही मनुष्य की चतुर्दिक अबाध प्रगति का कहीं नामोनिशान नहीं होता। भाषा के प्रयोग द्वारा हम प्रतीकों की एक ऐसी सुदृढ़ व्यवस्था अर्जित कर लेते हैं जो ज्ञान को अक्षुण्ण रखने में सहायक होती है।

भारत में बहुत-सी भाषाएँ बोली जाती हैं। इनमें असमिया, ओड़िया, बंगला, उर्दू, गुजराती, मराठी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम, कश्मीरी, पंजाबी, हिन्दी, संस्कृत, सिन्धी, नेपाली, मणिपुरी, कोंकणी, बोडो, डोगरी मुख्य भाषाएँ हैं। इन भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग पूरे भारत में होता है। वास्तव में हिन्दी का अर्थ 'हिन्द की भाषा' है और यह भाषा पूरे भारत में अन्य भाषाओं की अपेक्षा अधिक बोली और समझी जाती है।

भाषा : सामान्य परिचय–भाषा एक सामाजिक क्रिया है, किसी व्यक्ति की कृति नहीं। समाज में यह विचार-विनिमय का साधन है। मनुष्य और मनुष्य के बीच, वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि-संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं। भाषा किसी-न-किसी वस्तु के बारे में कहती है। वह समाज सापेक्ष होती है। उसका कोई प्रयोजन होता है और विकसित होते-होते वह मनुष्य के विचार और अभिव्यक्ति का साधन बन जाती है। मानव जाति की प्रत्येक पीढ़ी नई भाषा उत्पन्न नहीं करती। वह अपने पूर्वज से उसे सीखती है और इस प्रकार भाषा परम्परागत सम्पत्ति है। उसकी धारा अविच्छिन्न चलती रहती है। साथ ही यह अर्जित सम्पत्ति है अर्थात् आपस के या सामाजिक साहचर्य द्वारा वह सीखनी पड़ती है।

भाषा से न केवल विषयगत जानकारी प्राप्त होती है, बल्कि इसके माध्यम से हमारा संवेगात्मक विकास होता है। भाषा के माध्यम से मानव अपने विचारों को सृजनात्मकता का जामा पहना कर साहित्य का निर्माण करता है। भाषा न केवल साहित्य-सृजन के लिए होती है, बल्कि अन्य विषयों की जानकारी के लिए भी माध्यम का कार्य करती है।

भाषा मनुष्य के लिए ईश्वर का अनोखा वरदान है। भाषा के बिना मनुष्य-समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। सभ्यता और संस्कृति के सोपान पर आरोहण करने के लिए भाषा की भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण है कि भाषा के बिना किसी प्रकार की उन्नति करना सम्भव नहीं। मैक्समूलर के शब्दों में, "भाषा यदि प्रकृति की देन है तो निःसन्देह यह प्रकृति की अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ रचना है, जिसे प्रकृति ने केवल मनुष्य के लिए ही सुरक्षित कर रखा था।"

पीछे कहा जा चुका है कि भाषा एक सामाजिक क्रिया है। अर्थात् आपस के या सामाजिक साहचर्य द्वारा वह सीखनी पड़ती है। वह सामाजिक और सांकेतिक संस्था है। ध्वनियों, स्वर-विकार, मुख-विकृति, बल-प्रयोग, आचरण का वेग आदि भाषा के आवश्यक गौण अंग माने जाते हैं, विशेषकर अविकसित जातियों की भाषाओं में। साहित्यिक पद पर आसीन होने के लिए प्रत्येक भाषा को इन अंगों का बहुत कुछ त्याग करना पड़ता है। उस समय भाषा के चार अंग ही प्रधान हो जाते हैं—शब्द, वाक्य, ध्वनि और अर्थ। शब्दों के अर्थ शाश्वत नहीं होते। स्थान, समाज, व्यक्ति आदि के भेद से उनमें परिवर्तन होते रहते हैं। सभ्यता के विकास, मानसिक और भौतिक परिवर्तनों के साथ-साथ, फलतः जटिलताओं और दुरूहताओं के विकास के साथ-साथ अथवा एक जाति के दूसरी जाति के सम्पर्क में आने से भाषा का विकास भी होता है। कहा जाता है, "चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी।" अर्थात् थोड़ी-थोड़ी दूरी पर समाज की भाषा में बदलाव आ ही जाता है, जो कि स्वाभाविक है। यही कारण है कि अलग-अलग क्षेत्रों में क्षेत्रीय भाषाएँ एक वृहत्तर परिवेश के मानक से जुड़ी रहती हैं। "विश्व में कोई भाषा ऐसी नहीं होगी जिसका प्रयोग उसके पूरे क्षेत्र में सभी स्तरों पर एक-सा हो। तत्त्वतः भाषा की एकरूपता या उसके मानकीकरण की बात सैद्धान्तिक ही अधिक है, व्यावहारिक कम।" (डॉ. भोलानाथ तिवारी)

मनुष्य की शारीरिक और मानसिक रचना इस प्रकार हुई है कि वह विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करने में समर्थ है। उसकी वागेन्द्रियाँ अन्य प्राणियों से भिन्न हैं। यही कारण है कि वह बाह्य वातावरण और परिस्थितियों के प्रभाव से प्रभावित विभिन्न वस्तुओं के लिए प्रतीकात्मक शब्दों का निर्माण कर सका। इसी प्रकार क्रमशः मौखिक, फिर लिखित भाषा की उत्पत्ति हुई और वह धीरे-धीरे विकसित होती गई। ज्ञानार्जन का आधार होने के कारण भाषा शिक्षा के समस्त क्रियाकलापों का भी आधार है। उसके बिना शिक्षा के किसी भी क्रियाकलाप की कल्पना नहीं की जा सकती। भाषा के स्वरूप को समझने के लिए हम निम्नलिखित संकल्पनाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे—

भाषा : अर्थ एवं परिभाषा—'भाषा' शब्द भाष् धातु से निष्पन्न हुआ है। शास्त्रों में कहा गया है—"भाष् व्यक्तायां वाचि" अर्थात् व्यक्त वाणी ही भाषा है। भाषा स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यक्ति प्रकट करती है।

भाषा का इतिहास उतना ही पुराना है जितना पुराना मानव का इतिहास। भाषा के लिए सामान्यतः यह कहा जाता है कि—'भाषा मनुष्य के विचार-विनिमय और भावों की अभिव्यक्ति का साधन है।" भाषा की परिभाषा पर विचार करते समय रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव की यह बात ध्यान देने योग्य है कि—"भाषा केवल अपनी प्रकृति में ही अत्यन्त जटिल और बहुस्तरीय नहीं है वरन् अपने प्रयोजन में भी बहुमुखी है।" उदाहरण के लिए, अगर भाषा व्यक्ति के निजी अनुभवों एवं विचारों को व्यक्त करने का माध्यम है, तब इसके साथ ही वह सामाजिक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति का उपकरण भी है। एक ओर अगर वह हमारे मानसिक व्यापार (चिन्तन प्रक्रिया) का आधार है तो दूसरी तरफ वह हमारे सामाजिक व्यापार (संप्रेषण प्रक्रिया) का साधन भी है। इसी प्रकार संरचना के स्तर पर भाषा अपनी विभिन्न इकाइयों में सम्बन्ध स्थापित कर अपना संश्लिष्ट रूप ग्रहण करती है जिनमें वह प्रयुक्त होती है। प्रयोजन की विविधता ही भाषा को विभिन्न सन्दर्भों में देखने के लिए बाध्य करती है। यही कारण है कि विद्वानों ने इसे विभिन्न रूपों में देखने और परिभाषित करने का प्रयत्न किया है—

1. **डॉ. कामता प्रसाद गुरु**—"भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों के समक्ष भलीभाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टतया समझ सकता है।"
   —हिन्दी व्याकरण
2. **आचार्य किशोरीदास वाजपेयी**—"विभिन्न अर्थों में संकेतित शब्दसमूह ही भाषा है, जिसके द्वारा हम अपने विचार या मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं।"
   —भारतीय भाषाविज्ञान
3. **डॉ. श्यामसुन्दर दास**—"मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि-संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं।"
   —भाषाविज्ञान
4. **डॉ. बाबूराम सक्सेना**—"जिन ध्वनि-चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है, उनको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।"
   —सामान्य भाषाविज्ञान
5. **डॉ. भोलानाथ तिवारी**—"भाषा उच्चारणावयवों से उच्चरित यादृच्छिक (arbitrary) ध्वनि-प्रतीकों की वह संचरनात्मक व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज-विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।" —भाषाविज्ञान
6. **रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव**—"भाषा वागेन्द्रिय द्वारा निः सृत उन ध्वनि प्रतीकों की संरचनात्मक व्यवस्था है जो अपनी मूल प्रकृति में यादृच्छिक एवं रूढ़िपरक होते हैं और जिनके द्वारा किसी भाषा-समुदाय के व्यक्ति अपने अनुभवों को व्यक्त करते हैं, अपने विचारों को संप्रेषित करते हैं और अपनी सामाजिक अस्मिता, पद तथा अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों को सूचित करते हैं।"
   —भाषाविज्ञान : सैद्धान्तिक चिन्तन

इस प्रकार भाषा यादृच्छिक वाक् प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसे मुख द्वारा उच्चारित किया जाता है और कानों से सुना जाता है और जिसकी सहायता से मानव-समुदाय परस्पर सम्पर्क और सहयोग करता है। उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि "मुख से उच्चरित ऐसे परम्परागत, सार्थक एवं व्यक्त ध्वनि संकेतों की समष्टि ही भाषा है जिनकी सहायता से हम आपस में अपने विचारों एवं भावों का आदान-प्रदान करते हैं।"

भाषा का महत्त्व–भाषा के महत्व को हम निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट कर सकते हैं–

1. भाषा : अभिव्यक्ति का माध्यम–अपने भावों को अभिव्यक्त करके दूसरे तक पहुँचाने हेतु भाषा का उद्भव हुआ। भाषा के माध्यम से हम न केवल अपने भावों, विचारों, इच्छाओं और आकांक्षाओं को दूसरे पर प्रकट करते हैं, अपितु दूसरों द्वारा व्यक्त भावों, विचारों और इच्छाओं को ग्रहण भी करते हैं। इस प्रकार वक्ता और श्रोता के बीच अभिव्यक्ति के माध्यम से मानवीय व्यापार चलते रहते हैं। इसलिए सुनना और सुनाना अथवा जानना और जताना भाषा के मूलभूत कौशल हैं जो सम्प्रेषण के मूलभूत साधन हैं। अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में भाषा के अन्यतम कौशल हैं–पढ़ना और लिखना, जो विधिवत् शिक्षा के माध्यम से विकसित होते हैं।

2. भाषाः चिन्तन का माध्यम–विद्यार्थी बहुत कुछ सुनें, बोलें या लिखे-पढ़ें, इतना पर्याप्त नहीं है, अपितु यह बहुत आवश्यक है कि वे जो कुछ पढ़ें और सुनें, उसके आधार पर स्वयं चिन्तन-मनन करें। भाषा विचारों का मूल-स्रोत है। भाषा के बिना विचारों का कोई अस्तित्व नहीं है और विचारों के बिना भाषा का कोई महत्त्व नहीं।

पाणिनीय शिक्षा में कहा गया है कि "बुद्धि के साथ आत्मा वस्तुओं को बोलने की इच्छा से मन को प्रेरित करती है। मन शारीरिक शक्ति पर दबाव डालता है जिससे वायु में प्रेरणा उत्पन्न होती है। वायु फेफड़ों में चलती हुई कोमल ध्वनि को उत्पन्न करती है, फिर बाहर की ओर जाकर और मुख के ऊपरी भाग से अवरुद्ध होकर वायु मुख में पहुँचती है और विभिन्न ध्वनियों को उत्पन्न करती है।" अतः वाणी के उत्पन्न होने के लिए चेतना, बुद्धि, मन और शारीरिक अवयव, ये चारों अंग आवश्यक हैं। अगर इन चारों में से किसी के पास एक या एकाधिक का अभाव हो तो वह भाषाहीन हो जाता है।

3. भाषाः संस्कृति का माध्यम–भाषा और संस्कृति दोनों परम्परा से प्राप्त होती हैं। अतः दोनों के बीच गहरा सम्बन्ध रहा है। जहाँ समाज के क्रियाकलापों से संस्कृति का निर्माण होता है, वहाँ सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के लिए भाषा का ही आधार लिया जाता है। पौराणिक एवं साहसिक कहानियाँ, पर्व-त्यौहार, मेला-महोत्सव, लोक-कथाएँ, ग्रामीण एवं शहरी जीवन-शैली, प्रकृति-पर्यावरण, कवि-कलाकारों की रचनाएँ, महान विभूतियों की कार्यावली, राष्ट्रप्रेम, समन्वय-भावना आदि सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रभाव भी भाषा पर पड़ता है।

दरअसल, किसी भी क्षेत्र विशेष के मानव समुदाय को परखने के लिए उसकी भाषा को समझना आवश्यक है। किसी निर्दिष्ट गोष्ठी के ऐतिहासिक उद्भव तथा जीवन-शैली की जानकारी प्राप्त करने हेतु उसकी भाषा का अध्ययन जरूरी है। संपृक्त जन-समुदाय के चाल-ढाल, रहन-सहन, वेशभूषा ही नहीं, अपितु उसकी सच्चाई, स्वच्छता, शिष्टाचार, सेवा-भाव, साहस, उदारता, निष्ठा, श्रमशीलता, सहिष्णुता, धर्मनिरपेक्षता, कर्तव्यपरायणता आदि उसकी भाषा के अध्ययन से स्पष्ट हो जाते हैं।

4. भाषाः साहित्य का माध्यम–भाषा साहित्य का आधार है। भाषा के माध्यम से ही साहित्य अभिव्यक्ति पाता है। किसी भी भाषा के बोलनेवाले जन-समुदाय के रहन-सहन, आचार-विचार आदि का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने वाला उस भाषा का साहित्य होता है। साहित्य के जरिए हमें उस निर्दिष्ट समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का परिचय मिलता है। केवल समकालीन जीवन का ही नहीं, बल्कि साहित्य हमें अपने अतीत से उसे जोड़कर एक विकसनशील मानव सभ्यता का पूर्ण परिचय देता है। साथ ही साहित्य के अध्ययन से एक उन्नत एवं उदात्त विचार को पनपने का अवसर मिलता है जिससे हम अपने मानवीय जीवन को उन्नत बनाने की प्रेरणा ग्रहण करते हैं। अतः भाषा का साहित्यिक रूप हमारे बौद्धिक एवं भावात्मक विकास में सहायक होता है और साहित्य की यह अनमोल सम्पत्ति भाषा के माध्यम से ही हम तक पहुँच पाती है। उत्तम साहित्य समृद्ध तथा उन्नत भाषा की पहचान है।

◆◆◆

2. राजभाषा के रूप में हिंदी का सामान्य परिचय दीजिए।

उत्तर–राजभाषा के रूप में हिन्दी–कोई भी भाषा जितने विषयों में प्रयुक्त होती जाती है, उसके उतने ही अलग-अलग रूप भी विकसित होते जाते हैं। हिन्दी के साथ भी यही हुआ है। पहले वह केवल बोलचाल की भाषा थी, तो उसका एक बोलचाल का ही रूप था। फिर वह साहित्यिक भाषा बनी तो उसका एक साहित्यिक रूप भी विकसित हो गया। समाचार पत्रों में 'पत्रकारिता

हिंदी' रूप उभर कर आया। वैसे ही 'खेलकूद की हिन्दी', 'बाजार की हिन्दी' भी सामने आई। स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी भारत की राजभाषा घोषित की गई तथा उसका प्रयोग न्यूनाधिक रूप में कार्यालयों में होने लगा तो क्रमशः उसका एक राजभाषा रूप विकसित हो गया।

सामान्यतया 'राजाभाषा' भाषा के उस रूप को कहते हैं जो राजकाज में प्रयुक्त होता है। भारत की आजादी के बाद एक राजभाषा आयोग की स्थापना की गई थी। उसी आयोग ने यह निर्णय लिया कि हिन्दी को भारत की राजभाषा बनाया जाए। तदनुसार संविधान में इसे राजभाषा घोषित किया गया था। प्रादेशिक प्रशासन में हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्यप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड राजभाषा हिन्दी का प्रयोग कर रहे हैं। साथ ही दिल्ली में भी इसका प्रयोग हो रहा है और केन्द्रीय सरकार भी अपने अनेकानेक कार्यों में इनके प्रयोग को बढ़ावा दे रही है।

राजभाषा एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ है–**"सरकारी कामकाज के लिए प्रयुक्त भाषा।"** हिंदी में 'राजभाषा' शब्द अंग्रेजी के **'ऑफिशियल लैंग्वेज' (Official Language)** के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता है। इस शब्द का प्रयोग क़ानूनी तौर पर स्वतंत्र भारत के संविधान में सर्वप्रथम किया गया। भारत की स्वतंत्रता और राष्ट्रीयता की रक्षा करने के जो अनेक साधन हैं, उनमें राजभाषा की स्वीकृति प्रशासन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।

जिस भाषा के द्वारा केंद्र प्रशासन संबंधी कार्यभार संभाले और संचालन करे, वही राजभाषा है। आज जनतंत्रात्मक- समाजवादी व्यवस्था पर आधारित स्वतंत्र शासन का युग है, जहाँ सरकार, विधानमंडल और प्रशासन, सभी जनता के सेवक मात्र हैं। एक राजभाषा के द्वारा ही केंद्र प्रशासन का कार्य कर, समस्त जनता पर व्यापक प्रभाव डाल सकता है।

भारत के संविधान के अध्याय '17' के अनुच्छेद '343' के अनुसार, "संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में लिखी हिंदी होगी।" यहाँ संघ की राजभाषा से तात्पर्य संघ के विधानांग, कार्यांग तथा न्यायांग–इन तीन प्रमुख अंगों के कार्यकलाप में प्रयुक्त भाषा से है।

राजभाषा की परिभाषाएं–राजभाषा को विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है–

डॉ. हरिमोहन के अनुसार, **"राजभाषा का सीधा अर्थ है, जिस भाषा में राज-काज किया जाता है। केंद्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों के द्वारा पत्र-व्यवहार, राज कार्य और सरकारी लिखा-पढ़ी के कामों में इसी भाषा का व्यवहार किया जाता है।"**

कोशकार रामचन्द्र वर्मा के **'प्रामाणिक हिन्दी कोश'** के अनुसार, **"किसी देश में प्रचलित वह भाषा जिसका प्रयोग प्रायः सभी राजकीय कार्यों और न्यायालयों में होता है।"**

डॉ. श्याम सुंदर दास के **'हिंदी शब्द सागर'** के अनुसार, **"वह भाषा जो सरकारी कामकाज तथा न्यायालयों के लिए स्वीकृत हो।"**

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, **"राज्यभाषा, 'ऑफिशियल लैंग्वेज' अंग्रेजी में, ऐसी भाषा जिसका प्रयोग राज्य के कार्यों में होता है।"**

डॉ. संजीव जैन के अनुसार, **"राजभाषा वह भाषा है जिसका प्रयोग केंद्रीय अथवा प्रांतीय सरकारें अपने कार्य व्यापार तथा अन्य प्रदेशों के साथ सरकारी कामकाज या पत्र-व्यवहार के लिए करती हैं। यह भाषा देश के बहुसंख्यकों की भाषा होती है। देश के अन्य प्रांतों के लोग भी इसे समान्य रूप से समझते हैं।"**

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन के उपरांत कहा जा सकता है कि राजभाषा एक पारिभाषिक शब्द है। यह संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त एक ऐसी तकनीकी, लिखित एवं औपचारिक भाषा है जो 'रजिस्टर' के रूप में किसी देश की सरकार के विधानांग, कार्यांग एवं न्यायांग के कार्यान्वयन के लिए माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है।

राजभाषा हिन्दी–14 सितंबर, 1949 को भारतीय संविधान द्वारा हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान की गई। भारत का संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ और तभी से देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी विधिवत् भारत संघ की राजभाषा है। किसी भी स्वाधीन देश के लिए जो महत्व उसके राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का है, वही महत्व उसकी राजभाषा का है। भारतीय संविधान में धारा 343 से 351 तक हिन्दी राजभाषा संबंधी व्यवस्थाएं की गई हैं।

भारत की संविधान सभा का पहला अधिवेशन दिसम्बर, 1946 को शुरू हुआ। 4 जुलाई, 1947 को जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया उसमें जवाहर लाल नेहरू ने संघीय संसद में कार्यवाही की भाषा हिन्दी या उर्दू या अंग्रेजी रखने की बात कही।

संविधान सभा के प्रारम्भिक दिनों में मौलिक अधिकार संबंधी उप-समिति द्वारा गांधी जी के विचारों के अनुसार, निम्नलिखित सूत्र स्वीकृत किए गए–

"राष्ट्रभाषा के रूप में नागरिक की इच्छानुसार, देवनागरी या फारसी लिपि में लिखित हिन्दुस्तानी, संघ की प्रथम राजभाषा होगी। अंग्रेजी उस अवधि के लिए द्वितीय राजभाषा होगी, जिसका निर्णय संघ विधि द्वारा करेगा। संघ के सभी शासकीय अभिलेख दोनों लिपियों में, हिन्दुस्तानी तथा अंग्रेजी में भी तब तक रखे जाएंगे, जब तक संघ विधि द्वारा कोई दूसरा निर्णय न करे।"

19 अप्रैल, 1947 को डॉ. अम्बेडकर ने अपनी विमत टिप्पणी में यह मत प्रकट किया कि हिन्दुस्तानी न केवल संघ की बल्कि सभी इकाइयों की भाषा स्वीकृत की जाए।

सन् 1946 में संविधान सभा बनी जिसमें मुख्यतः राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। साथ ही मुस्लिम लीग तथा अन्य स्वतंत्र सदस्य भी थे। संविधान सभा की पहली बैठक दिनांक 9/12/1946 को हुई और दिनांक 11/12/1946 को बाबू राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में यह निर्णय सन् 1946 में ही ले लिया था कि राजभाषा 'हिन्दुस्तानी' या 'अंग्रेजी' होगी, पर कोई भी सदस्य अध्यक्ष की अनुमति से सदन में अपनी 'मातृभाषा' में भाषण दे सकेगा। 14 जुलाई, 1947 को संविधान सभा के चौथे सत्र के दूसरे दिन ही यह संशोधन प्रस्तुत किया गया था कि 'हिन्दुस्तानी' के स्थान पर 'हिन्दी' शब्द रखा जाएगा। इस विषय पर हुए मतदान में हिन्दी के पक्ष में 63 वोट थे और हिन्दुस्तानी के पक्ष में 32 और इसी प्रकार देवनागरी के संदर्भ में हुए मतदान के पक्ष में 63 तथा विपक्ष में 18 वोट पड़े। 10 नवंबर, 1948 की स्टीयरिंग कमेटी में यह निश्चय किया गया कि संविधान हिन्दी में भी तैयार होना चाहिए। फरवरी, 1948 में 'संविधान' का जो प्रारूप प्रस्तुत हुआ उसमें राजभाषा विधेयक की कोई धारा नहीं थी। मात्र इतना उल्लेख था कि संसद की भाषा अंग्रेजी या हिन्दी होगी।

इस विषय पर मुख्य बहस अगस्त से सितंबर, 1949 में हुई। हिन्दी से संबंधित एक प्रारूप समिति बना दी गई जिसमें सर्वश्री आयंगर, टी. ओ. कृष्णमाचारी अय्यर, श्री कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशी, डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर तथा राव थे। 16 अगस्त को प्रारूप कमेटी ने रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें 10 वर्ष तक अंग्रेजी के चलते रहने की व्यवस्था की गयी। बाद में 22 अगस्त को अंबेडकर जी ने नया फार्मूला रखा, जिसमें मुख्य बिंदु थे—

1. पंद्रह वर्ष की अवधि का प्रस्ताव, जिसको बाद में संसद बढ़ा सकती थी।
2. अंतर्राष्ट्रीय अंक।
3. उच्च न्यायालय में अंग्रेजी।
4. प्रादेशिक भाषाओं की सूची।
5. भाषा आयोग की व्यवस्था आदि।

डॉ. रघुवीर ने अंग्रेजी के बहिष्कार का सुझाव देते हुए कहा, **"मुझे डर है कि अगले पंद्रह वर्षों में इस देश में अंग्रेजी प्रभाव की जड़ उससे दुगनी मजबूत हो जाएगी, जितनी अपने डेढ़ सौ वर्षों के शासनकाल में अंग्रेजों ने कायम की थी।"**

मुख्य बहस 12 से 14 सितंबर तक चली। मुंशी आयंगर के फार्मूले के नाम से विख्यात अनुच्छेद 343-351 तक है तथा साथ में संविधान के परिशिष्ट में दी गई अष्टम अनुसूची भी है।

14 सितंबर, 1949 का दिन भाषा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण और 'युग प्रवर्तक' दिवस माना जाना चहिए। इसी दिन संविधान सभा ने एकमत से हिन्दी को भारतीय संघराज्य की राज्यभाषा के रूप में स्वीकृत किया। बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन ही वह व्यक्ति थे, जिन्होंने इस विषय में सबसे अधिक लग्न से काम किया ।

राजभाषा हिन्दी : महत्त्वपूर्ण तथ्य

1. अशोक के समय में 'पालि' राजभाषा थी।
2. मुहम्मद गौरी से लेकर अकबर के समय तक हिन्दी और फारसी राजभाषा थी।
3. ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1833 ई तक फारसी को राजभाषा बनाए रखा।
4. ब्रिटिश शासन में लार्ड मैकाले के प्रयास से अंग्रेजी राजभाषा के पद पर सुशोभित हुई।
5. पं. मदन मोहन मालवीय के प्रयत्नों से सन 1901 में संयुक्त प्रांत की कचहरी की भाषा के रूप में हिन्दी को उर्दू के समान अधिकार मिला।
6. संविधान सभा में हिन्दी को राजभाषा बनाने का अंतिम निर्णय गोपालस्वामी आयंगर का स्वीकार किया गया।
7. अनुच्छेद 343-351 तक राजभाषा संबंधी प्रावधान संविधान के 17 वें भाग में किए गए हैं।
8. संविधान की 8वीं अनुसूची में 22 भाषाएं सम्मिलित हैं।
9. संविधान के अनुच्छेद 351 में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देशों का उल्लेख है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि राजभाषा हिन्दी का स्वरूप अत्यंत व्यापक है। यह राजनीतिक महत्त्व की भाषा है जो राष्ट्रीय समस्याओं और बौद्धिक स्तर को सुलझाने में सक्षम है। यह सरकारी कामकाज की भाषा के साथ-साथ जनसामान्य के बीच, शिक्षित-अशिक्षित सभी वर्गों में परस्पर व्यवहार का माध्यम हुआ करती है।

राजभाषा हिन्दी की विशेषताएँ–राजभाषा हिन्दी की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. साहित्यिक हिन्दी में जहाँ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के माध्यम से अभिव्यक्ति की जाती है, राजभाषा हिन्दी में केवल अभिधा का ही प्रयोग होता है।
2. साहित्यिक हिन्दी में एकाधिकार्थता, चाहे शब्द के स्तर पर हो या वाक्य के स्तर पर, काव्य-सौन्दर्य के अनुकूल मानी जाती है। इसके विपरीत राजभाषा, हिन्दी में सदैव एकार्थता ही काम्य होती है।
3. राजभाषा अपने पारिभाषिक शब्दों में भी हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों से पूर्णतः भिन्न है। इसके अधिकांश शब्द प्राय कार्यालयी प्रयोगों के लिए ही उसके अपने अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जैसे–

आयुक्त	=	Commissioner
निविदा	=	Tender
विवाचक	=	Arbitrator
आयोग	=	Commission
प्रशासकीय	=	Administrative
मन्त्रालय	=	Ministry
उन्मूलन	=	Abolition
आवंटन	=	Allotment आदि।

4. हिन्दी में सामान्यतः समस्रोतीय घटकों से ही शब्दों की रचना होती है। जैसे–संस्कृत शब्द 'निर्धन' + संस्कृत भाववाचक संज्ञा प्रत्यय 'ता' = निर्धनता। किन्तु अरबी-फारसी शब्द 'गरीब' + अरबी-फारसी भाववाचक संज्ञा प्रत्यय 'ई' = गरीबी। हिन्दी में न तो निर्धन + ई = निर्धनी बनेगा और न ही गरीब + ता = गरीबता। लेकिन राजभाषा में काफी सारे शब्द विषम स्रोतीय घटकों से बने हैं। जैसे–

उपकिरायेदार	=	Sub-letting
जिलाधीश	=	Collector
उपजिला	=	Sub-district
अरद्द	=	uncancelled
अस्टांपित	=	unstamped
अपंजीकृत	=	unregistered
मुद्राबन्द	=	sealed
राशन-अधिकारी	=	ration-officer... आदि।

अंग्रेजी, फ्रांसीसी, चीनी, रूसी आदि समृद्ध भाषाओं में एक ही शैली मिलती है, पर राजभाषा हिन्दी में एक ही शब्द के लिए कई शब्द हैं। जैसे–

(i) कार्यालय – दफ़्तर – ऑफिस
(ii) न्यायालय – अदालत – कोर्ट – कचहरी
(iii) शपथ-पत्र – हलफनामा – एफिडेविट
(iv) विवाह – शादी – निकाह आदि।

5. राजभाषा हिन्दी का प्रयोग राजतन्त्र का कोई व्यक्ति करता है जो प्रयोग के समय व्यक्ति न होकर तंत्र का एक अंग होता है। इसलिए वह वैयक्तिक रूप से कुछ न कहकर निर्वैयक्तिक रूप से कहता है। यही कारण है कि हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों में जबकी कर्तृवाच्य की प्रधानता होती है, राजभाषा हिन्दी के कार्यालयी रूप में कर्मवाच्य की प्रधानता होती है। उसमें कथन व्यक्ति-सापेक्ष न होकर व्यक्ति-निरपेक्ष होता है। जैसे–'सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है', 'कार्यवाही की जाए', 'स्वीकृति दी जा सकती है' आदि।

◆◆◆

(ख) हिंदी भाषा के विविध रूप : राष्ट्रभाषा

3. राष्ट्रभाषा का अभिप्राय स्पष्ट करते हुए राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी भाषा का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की विवेचना कीजिए।

उत्तर–राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी–राष्ट्रभाषा उसे कहते हैं जो सम्पूर्ण राष्ट्र में सामान्य तौर पर बोली और समझी जाती है। राष्ट्र के अधिक से अधिक लोग उसी भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति करते हैं। कहना सही होगा कि राष्ट्रभाषा में राष्ट्र की आत्मा बोलती है। समूचे राष्ट्र की जनता की सोच, संस्कृति, विश्वास, धर्म और समाज सम्बन्धी धारणाएँ, जीवन के विविधतापूर्ण व्यावहारिक पहलू, आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ, निजी और सामूहिक सुख-दुःख के भाव, लोकनीति सम्बन्धी विविध विचार और दृष्टिकोण राष्ट्रभाषा के माध्यम से ही साकार होते हैं। भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में प्रयुक्त सभी भाषाएँ राष्ट्रभाषा हैं किन्तु जब राष्ट्र की जनता स्थानीय और तात्कालिक हितों और पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर अपने राष्ट्र की कई भाषाओं में से किसी एक भाषा को विशेष प्रयोजनों के लिए चुनकर उसे राष्ट्रीय अस्मिता एवं गौरव-गरिमा का एक आवश्यक उत्पादन समझने लगती है तो वह भाषा राष्ट्रभाषा के रूप में मान्य हो जाती है। राष्ट्रभाषा राष्ट्रीय एकता और अंतरप्रांतीय संवाद-सम्पर्क की आवश्यकता की उपज होती है। इस सन्दर्भ में अमर कथाशिल्पी मुंशी प्रेमचंद का यह कथन उल्लेखनीय है–**"भारत की राष्ट्रीयता एक राष्ट्रभाषा पर निर्भर है और दक्षिण के हिन्दी प्रेमी राष्ट्रभाषा का प्रचार करके राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं। राष्ट्रभाषा का होना लाजिमी है। अगर सम्पूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनना है तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा।"**

ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल में हिन्दी–हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य के सन्दर्भ में आधुनिक युग का आरम्भ सन् 1850 ई. के आस-पास माना जाता है। यद्यपि इससे लगभग एक शताब्दी पहले से ही ईस्ट इंडिया कंपनी के रूप में अंग्रेज विदेशियों ने अपनी भाषायी कूटनीति का जाल फैलाना आरम्भ कर दिया था तथापि अनेक वर्षों तक उनका षड्यन्त्र भारतीय जनता समझ नहीं पायी। इसका एक कारण यह भी था कि ब्रिटिश शासन ने भारत में अपने साम्राज्य की जड़ें मजबूत करने के लिए जो शिक्षा-नीति और भाषा-नीति अपनायी, उसमें हिन्दी को भी प्रमुख स्थान प्राप्त था, क्योंकि उसके बिना वे भारतीय जनता पर शासन नहीं कर सकते थे। ध्यातव्य है कि सन् 1800 ई. में कलकत्ता में जब फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की गई तो उसमें हिन्दी (जिसे वे 'हिन्दुस्तानी' कहते थे) विभाग भी खोला गया। यहीं भारत की बहुप्रचलित कौरवी बोली को खड़ीबोली हिन्दी के रूप में विकसित करने का अवसर मिला। कॉलेज की शिक्षा नीति के अन्तर्गत इस खड़ीबोली में अनेक पुस्तकें लिखवायी गई। धीरे-धीरे हिन्दी का यही रूप देश भर में, शिक्षा और साहित्य, बोलचाल और पत्र-व्यवहार, संवाद-संचार आदि में विकसित और प्रचलित होता गया। सन् 1801 ई. में ईस्ट इंडिया कंपनी ने यह घोषणा की कि प्रशासनिक सेवा में केवल उसी व्यक्ति को जिम्मेदार पद पर नियुक्त किया जाए जिसे गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए कानूनों को अमल में लाने के लिए 'हिन्दुस्तानी' का भी ज्ञान हो। इसलिए फ्रेडरिक जॉन शोर, मैटकॉफ, फ्रेडरिक पिन्कॉट आदि ने हिन्दी सीखी। स्मरणीय है कि यह सब काम भारत के एक अहिन्दी भाषी क्षेत्र कलकत्ता में हो रहा था। इस प्रकार आधुनिककाल की वास्तविक शुरुआत से पहले ही हिन्दी प्रकारान्तर से राष्ट्रभाषा के रूप में मान्य हो चुकी थी।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम और हिन्दी–वर्ष 1857 ई. में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम लड़ा गया। इसमें सर्वत्र हिन्दी ही माध्यम थी, अंग्रेजी या फ़ारसी नहीं। सभी क्रान्ति समाचार, संवाद और सन्देश हिन्दी में प्रकाशित किए जाते थे। उस प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम का मुखपत्र **'पयाम-ए-आजादी'**, जिसका हिन्दी अर्थ है–**'स्वाधीनता-सन्देश'**, दिल्ली से देवनागरी और फ़ारसी दोनों लिपियों में निकलता था। प्रसिद्ध राष्ट्रभक्त और स्वतन्त्रता सेनानी अज़ीमउल्ला खाँ इसके सम्पादक थे।

स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान हिन्दी–धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर तो हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने के अनेक उल्लेखनीय प्रयास बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक हुए ही, राजनैतिक स्तर पर इस दिशा में सर्वाधिक उल्लेखनीय योगदान मिला भारत के स्वाधीनता आन्दोलन से, जिसके सूत्रधार महात्मा गाँधी थे। भारत के राजनैतिक मंच पर गाँधी जी का अभ्युदय वर्ष 1916 के आसपास हुआ। इससे पहले वे हिन्दी अच्छी तरह नहीं जानते थे, कुछ-कुछ

समझ सकते थे। फिर भी उन्होंने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी का समृद्ध ज्ञान प्राप्त कर लिया। सन् 1916-17 ई. में, कांग्रेस अधिवेशन, कलकत्ता में वे पहली बार एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उभरे और तभी से उन्होंने एक राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करना अपने समूचे स्वदेशी आन्दोलन तथा राष्ट्रीय कार्यक्रम का अभिन्न अंग बना लिया। उल्लेखनीय है कि वर्ष 1916 ई. में ही उन्होंने अधिवेशन का सारा कार्य हिन्दी में चलाने का शुभारम्भ कराया। यहाँ तक कि अधिवेशन के अध्यक्ष बाल गंगाधर तिलक से भी उन्होंने हिन्दी में भाषण देने का आग्रह किया। श्रीमति एनी बेसेंट द्वारा इस पर तनिक असहमति का भाव दिखाने पर गाँधी जी ने स्पष्ट किया कि **"कांग्रेस का करीब-करीब सारा ही काम अंग्रेजी में चलाने से राष्ट्र को बहुत नुकसान उठाना पड़ा है।"** इसी अनुक्रम में दिसंबर, 1916 में गाँधी जी के निर्देशन पर लखनऊ में हिन्दी और देवनागरी को राष्ट्रीय दर्जा देने के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास हुआ, उसके समर्थकों में श्री रामास्वामी अय्यर तथा श्री रंगस्वामी आयंगर जैसे दक्षिण भारतीय प्रतिनिधि अग्रणी रहे।

कलकत्ता से लौटने के उपरान्त कानपुर में एक सार्वजनिक सभा को सम्बोधित करते हुए लोकमान्य तिलक ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि **"मैं उन लोगों में से हूँ जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।"**

सन् 1939 ई. में जब भारत के कई प्रदेशों में कांग्रेस की निर्वाचित सरकारों का गठन हुआ तो मद्रास के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री राजगोपालाचारी ने मद्रास प्रान्त के सभी विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण अनिवार्य कर दिया। उस समय महात्मा गाँधी ने अन्य राज्यों को भी इस नीति का अनुसरण करने की प्रेरणा देते हुए लिखा कि **"अगर हमें अखिल भारतीय राष्ट्रीयता प्राप्त करनी है तो प्रान्तीय आवरण को भेदना ही पड़ेगा। जो लोग यह मानते हैं कि भारत एक देश है, उन्हें राजाजी का समर्थन करना ही चाहिए।"**

सारांशतः स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में बड़ी तेजी से विकास हुआ। स्वाधीनता आन्दोलन का प्रत्यक्ष या परोक्ष समर्थन करने वाले असंख्य नेताओं, क्रान्तिकारियों, बलिदानी वीरों, लेखकों, कवियों और पत्रकारों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में भरपूर योगदान किया।

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी का विकास—भाषा राष्ट्रीय अस्मिता की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है, इसलिए देश की स्वतन्त्रता का स्वप्न भी भाषा की मुक्ति से जुड़ा हुआ है। वर्ष 1947 ई. में जब देश आजाद हुआ तब संविधान निर्माताओं को ऐसी भाषा की आवश्यकता महसूस हुई जो राष्ट्र के विभिन्न समूहों की भाषा बन सके, जिसमें भारतीय संस्कृति की सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति हो सके, जो इस विशाल देश की प्रशासनिक भाषा बनने का दायित्व वहन कर सके। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी के भाषिक विकास के सन्दर्भ में निम्नलिखित बिन्दुओं का उल्लेख किया जा सकता है–

(i) राजभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करते हुए संवैधानिक प्रावधान।

(ii) तकनीकी शब्दावली एवं विधि कोश आयोग की स्थापना।

(iii) हिन्दी भाषा के मानकीकरण के सरकारी एवं गैर-सरकारी प्रयास।

(iv) हिन्दी में अनुवाद कार्य।

(v) भारतीय भाषाओं में परस्पर लिप्यन्तरण को प्रोत्साहित करना।

(vi) गैर-हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए सरकारी प्रयास।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि हिन्दी भाषा का न केवल भारत के एक राष्ट्र के रूप में विकास ऐतिहासिक महत्त्व रहा है, अपितु भारत के अधिकांश क्षेत्रों में यह बोली-समझी जाती है। आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी इसका महत्त्व दिनों-दिन बढ़ रहा है। प्रत्येक भारतवासी भी इसे अपनी राष्ट्रभाषा मानता है। अतः ऐसे में संवैधानिक रूप से भी अब यह भाषा 'राष्ट्रभाषा' कहलाने के योग्य है। अतः भारत सरकार को चाहिए कि अब देर न करते हुए हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा' का दर्जा प्रदान करे। अब हिन्दी 'राजभाषा' बनने की अपेक्षा रखती है।

(ग) हिंदी भाषा के विविध रूप : संपर्क भाषा

4. संपर्क भाषा अथवा जनभाषा से आप क्या समझते हैं? संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा की विवेचना कीजिए।

उत्तर–संपर्क भाषा (जनभाषा) : परिभाषा एवं सामान्य परिचय–हम जानते हैं कि भाषा मनुष्य के विचार-विनिमय और भावों की अभिव्यक्ति का साधन है। सम्पर्क भाषा का आशय जनभाषा से है। किसी क्षेत्र का सामान्य व्यक्ति प्रचलित शैली में जो भाषा बोलता है, वह जनभाषा है। दूसरे शब्दों में, क्षेत्र विशेष की संपर्क भाषा ही जनभाषा है। इसलिए जरूरी नहीं कि जनभाषा शुद्ध साहित्यिक रूप वाली ही हो या वह व्याकरण के नियमों से बंधी हो।

सम्पर्क भाषा या जनभाषा वह भाषा होती है जो किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश के ऐसे लोगों के बीच पारस्परिक विचार-विनिमय के माध्यम का काम करे जो एक-दूसरे की भाषा नहीं जानते। दूसरे शब्दों में, विभिन्न भाषा-भाषी वर्गों के बीच सम्प्रेषण के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, वह सम्पर्क भाषा कहलाती है। इस प्रकार 'सम्पर्क भाषा' की सामान्य परिभाषा होगी–"एक भाषा-भाषी जिस भाषा के माध्यम से किसी दूसरी भाषा के बोलने वालों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके, उसे सम्पर्क भाषा या जनभाषा (Link Language) कहते हैं।"

बकौल डॉ. पूरनचंद टंडन, "सम्पर्क भाषा से तात्पर्य उस भाषा से है जो समाज के विभिन्न वर्गों या निवासियों के बीच सम्पर्क के काम आती है। इस दृष्टि से भिन्न-भिन्न बोली बोलने वाले अनेक वर्गों के बीच हिन्दी एक सम्पर्क भाषा है और अन्य कई भारतीय क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलने वालों के बीच भी सम्पर्क भाषा है।" (आजीविका साधक हिन्दी, पृ. 151) डॉ. महेन्द्र सिंह राणा ने सम्पर्क भाषा को इन शब्दों में परिभाषित किया है, "परस्पर अबोधगम्य भाषा या भाषाओं की उपस्थिति के कारण जिस सुविधाजनक विशिष्ट भाषा के माध्यम से दो व्यक्ति, दो राज्य, कोई राज्य और केन्द्र तथा दो देश सम्पर्क स्थापित कर पाते हैं, उस भाषा विशेष को सम्पर्क भाषा या सम्पर्क साधक भाषा (Contact Language or Interlink Language) कहा जा सकता है।" (प्रयोजनमूलक हिन्दी के आधुनिक आयाम, पृ. 79) इस क्रम में डॉ. दंगल झाल्टे द्वारा प्रतिपादित परिभाषा उल्लेखनीय है–"अनेक भाषाओं की उपस्थिति के कारण जिस सुविधाजनक विशिष्ट भाषा के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति, राज्य-राज्य, राज्य-केन्द्र तथा देश-विदेश के बीच सम्पर्क स्थापित किया जाता है, उसे सम्पर्क भाषा (Contact or Inter Language) की संज्ञा दी जा सकती है।" (प्रयोजनमूलक हिन्दी-सिद्धान्त और प्रयोग, पृ. 53)

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सम्पर्क भाषा मात्र दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के बीच ही सम्पर्क का माध्यम नहीं बनती, जो एक-दूसरे की भाषा से परिचित नहीं हैं, अपितु दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी राज्यों के बीच तथा केन्द्र और राज्यों के बीच भी संपर्क स्थापित करने का माध्यम बन सकती है।

सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी–भारत एक बहुभाषी देश है और बहुभाषा-भाषी देश में सम्पर्क भाषा का विशेष महत्त्व है। अनेकता में एकता हमारी अनुपम परम्परा रही है। वास्तव में सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारत सदैव एक ही रहा है। हमारे इस विशाल देश में जहाँ अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं और जहाँ लोगों के रीति-रिवाजों, खान-पान, पहनावे और रहन-सहन तक में भिन्नता हो, वहाँ सम्पर्क भाषा ही एक ऐसी कड़ी है जो एक छोर से दूसरे छोर तक के लोगों को जोड़ने और उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का काम करती है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने सम्पर्क भाषा के प्रयोग क्षेत्र को तीन स्तरों पर विभाजित किया है–एक तो वह भाषा जो एक राज्य (जैसे–महाराष्ट्र या असम) से दूसरे राज्य (जैसे–बंगाल या मणिपुर) के राजकीय पत्र-व्यवहार में काम आए। दूसरे, वह भाषा जो केन्द्र और राज्यों के बीच पत्र-व्यवहारों का माध्यम हो। और तीसरे वह भाषा जिसका प्रयोग एक क्षेत्र/प्रदेश का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र/प्रदेश के व्यक्ति से अपने निजी कामों में करे।

आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमारी यह कामना थी कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होगी जिससे देश एकता के सूत्र में सदा के लिए जुड़ा रहेगा। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि सभी महापुरुषों ने एक मत से इसका समर्थन किया, क्योंकि हिन्दी हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों की ही नहीं अपितु राष्ट्रीय चेतना एवं स्वाधीनता आन्दोलन की अभिव्यक्ति की भाषा भी रही है।

भारत में 'हिन्दी' बहुत पहले सम्पर्क भाषा के रूप में रही है और इसीलिए यह बहुत पहले से 'राष्ट्रभाषा' कहलाती है क्योंकि हिन्दी की सार्वदेशिकता सम्पूर्ण भारत के सामाजिक स्वरूप का प्रतिफल है। भारत की विशालता के अनुरूप ही राष्ट्रभाषा विकसित हुई है जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम–कहीं भी होने वाले मेलों–चाहे वह प्रयाग में कुंभ हो अथवा अजमेर की दरगाह हो या प्रदेशों की हमारी सांस्कृतिक एकता के आधार स्तंभ तीर्थस्थल हों–सभी स्थानों पर आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिन्दी का ही अधिकतर प्रयोग होता है। इस प्रकार इन सांस्कृतिक परम्पराओं से हिन्दी ही सार्वदेशिक भाषा के रूप में लोकप्रिय है, विशेषकर दक्षिण और उत्तर के सांस्कृतिक सम्बन्धों की दृढ़ शृंखला के रूप में हिन्दी ही सशक्त भाषा बनी। हिन्दी का क्षेत्र विस्तृत है।

सम्पर्क भाषा हिन्दी का आयाम, जनभाषा हिन्दी, सबसे व्यापक और लोकप्रिय है जिसका प्रसार क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर से बढ़कर भारतीय उपमहाद्वीप तक है। शिक्षित, अर्धशिक्षित, अशिक्षित, तीनों वर्गों के लोग परस्पर बातचीत आदि के लिए और इस प्रकार मौखिक माध्यम में जनभाषा हिन्दी का व्यवहार करते हैं। भारत की लिंग्वे फ्रांका, लैंग्विज ऑफ वाइडर कम्युनिकेशन, पैन इंडियन लैंग्विज, अन्तर प्रादेशिक भाषा, लोकभाषा, भारत-व्यापी भाषा, अखिल भारतीय भाषा- ये नाम 'जनभाषा' हिन्दी के लिए प्रयुक्त होते हैं। हमारे देश की बहुभाषिकता के ढाँचे में हिन्दी विभिन्न भौगोलिक और सामाजिक क्षेत्रों के अतिरिक्त भाषा-व्यवहार के क्षेत्रों में भी सम्पर्क सिद्धि का ऐसा प्रकार्य निष्पादित कर रही है जिसका न केवल कोई विकल्प नहीं, अपितु जो हिन्दी की विविध भूमिकाओं को समग्रता के साथ निरूपित करने में भी समर्थ है।

हिन्दी ने पिछले हजार वर्षों में विचार-विनिमय का जो उत्तरदायित्व निभाया है, वह एक अनूठा उदाहरण है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि हिन्दी पहले 'राष्ट्रभाषा' कहलाती थी, बाद में इसे 'सम्पर्क भाषा' कहा जाने लगा और अब इसे 'राजभाषा' बना देने से इसका क्षेत्र सीमित हो गया है। वस्तुतः यह उनका भ्रम है। जैसाकि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि हिन्दी सदियों से सम्पर्क भाषा और राष्ट्रभाषा एक साथ रही है और आज भी है। भारत की संविधान सभा द्वारा 14 सितम्बर, 1949 को इसे राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लेने से उसके प्रयोग का क्षेत्र और विस्तृत हुआ है। जैसे–बंगला, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम आदि को क्रमशः बंगाल, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल आदि की राजभाषा बनाया गया है। ऐसा होने से क्या उन भाषाओं का महत्त्व कम हो गया है? निश्चय ही नहीं। बल्कि इससे उन सभी भाषाओं का उत्तरदायित्व और प्रयोग क्षेत्र पहले से अधिक बढ़ गया है। जहाँ वे पहले केवल परस्पर बोलचाल में काम आती थीं या उनमें साहित्य की रचना होती थी, वहीं अब उनमें प्रशासनिक कार्य भी हो रहे हैं। यही स्थिति हिन्दी की भी है। इस प्रकार हिन्दी सम्पर्क और राष्ट्रभाषा तो है ही, राजभाषा बनाकर इसे अतिरिक्त सम्मान प्रदान किया गया है। इस प्रसंग में डॉ. सुरेश कुमार का कथन बहुत ही प्रासंगिक है–"हिन्दी को केवल सम्पर्क भाषा के रूप में देखना भूल होगी। हिन्दी आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्भव काल से मध्यदेश के निवासियों के सामाजिक सम्प्रेषण तथा साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की भाषा रही है और अब भी है। भाषा-सम्पर्क की बदली हुई परिस्थितियों में (जो पहले फारसी, तुर्की, अरबी तथा बाद में मुख्य रूप से अंग्रेजी के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप विकसित हुई) तथा स्वतंत्र भारतीय गणराज्य में सभी भारतीय भाषाओं को अपने-अपने भौगोलिक क्षेत्र में व्यावसायिक और सांस्कृतिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग में लाने के निर्णय के बाद, हिन्दी का सम्पर्क भाषा प्रकार्य गुण और परिमाण की दृष्टि से इतना विकसित हो गया है कि उसके सम्बन्ध में चिन्तन तथा अनुवर्ती कार्य, एक सैद्धान्तिक और व्यावहारिक आवश्यकता बन गए हैं। वास्तव में भाषा सम्पर्क की स्थिति ही किसी सम्पर्क भाषा के उद्भव और विकास को प्रेरित करती है या एक सुप्रतिष्ठित भाषा के सम्पर्क प्रकार्य को संपुष्ट करती है। हिन्दी के साथ दोनों स्थितियों का सम्बन्ध है। आन्तरिक स्तर पर हिन्दी अपनी बोलियों के व्यवहारकर्ताओं के बीच सम्पर्क की स्थापना करती रही है और अब भी कर रही है, तथा बाह्य स्तर पर वह अन्य भारतीय भाषा-भाषी समुदायों के मध्य एकमात्र सम्पर्क भाषा के रूप में उभरकर आई है जिसके अब विविध आयाम विकसित हो चुके हैं। कुल मिलाकर हिन्दी का वर्तमान गौरवपूर्ण है। उसकी भूमिका आज भी सामान्य-जन को जोड़ने में सभी भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक कारगर है।

(घ) हिंदी भाषा के विविध रूप : मानक भाषा

5. मानक भाषा से आप क्या समझते हैं? मानक भाषा के लक्षण बताइए।

अथवा

मानक भाषा के रूप में हिन्दी भाषा का मूल्यांकन कीजिए।

अथवा

मानक भाषा एवं राजभाषा में अंतर बताइए।

उत्तर–मानक भाषा : अर्थ एवं परिभाषा–मानक भाषा को कई नामों से पुकारते हैं। इसे कुछ लोग 'परिनिष्ठित भाषा' कहते हैं और कई लोग 'साधु भाषा'। इसे 'नागर भाषा' भी कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे 'Standard Language' कहते हैं। मानक का अर्थ होता है–एक निश्चित पैमाने के अनुसार गठित। मानक भाषा का अर्थ होगा–ऐसी भाषा जो एक निश्चित पैमाने के अनुसार लिखी या बोली जाती है। मानक भाषा व्याकरण के अनुसार ही लिखी और बोली जाती है अर्थात् मानक भाषा का पैमाना उसका व्याकरण है। हम जब किसी अपरिचित व्यक्ति से मिलते हैं तो उससे मानक भाषा में ही बातचीत करते हैं। जब हम कक्षा में किसी प्रश्न का उत्तर देते हैं तो हम मानक भाषा का ही प्रयोग करते हैं। हम पत्र-व्यवहार में मानक भाषा ही लिखते हैं। समाचार पत्रों में जो भाषा लिखी जाती है, वह भी मानक ही होती है। आकाशवाणी और दूरदर्शन के समाचार मानक भाषा में ही प्रसारित किए जाते हैं। हमारे प्रशासन के सारे कामकाज मानक भाषा में ही होते हैं। कहने का आशय यह है कि मानक भाषा हमारे बृहत्तर समाज को सांस्कृतिक स्तर पर आपस में जोड़ती है और हम उसी के माध्यम से एक-दूसरे तक पहुँचते हैं। मानक भाषा हमारी बात दूसरों तक ठीक उसी रूप में पहुँचाती है जो हमारा आशय होता है। अतः मानक भाषा सर्वमान्य भाषा होती है। वह व्याकरण सम्मत होती है और उसमें निश्चत अर्थ सम्प्रेषित करने की क्षमता होती है। गठन और सम्प्रेषण की एकरूपता उसका सबसे बड़ा लक्षण है। यह भाषा सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतीक बन जाती है। धीरे-धीरे इस मानक भाषा की शब्दावली, उसका व्याकरण, उसके उच्चारण का स्वरूप निश्चित और स्थिर हो जाता है और इसका प्रसार और विस्तार पूरे भाषा क्षेत्र में हो जाता है। इस प्रकार मानक भाषा की परिभाषा निम्नलिखित शब्दों में दी जा सकती है–

"मानक भाषा किसी भाषा के उस रूप को कहते हैं जो उस भाषा के पूरे क्षेत्र में शुद्ध माना जाता है तथा जिसे उस प्रदेश का शिक्षित और शिष्ट समाज अपनी भाषा का आदर्श रूप मानता है और प्रायः सभी औपचारिक स्थितियों में, लेखन में, प्रशासन और शिक्षा के माध्यम के रूप में यथासाध्य उसी का प्रयोग करता है।"

इसी के आधार पर मानक भाषा के निम्नलिखित लक्षण निश्चित होते हैं–

1. वह व्याकरणसम्मत होती है।
2. वह सर्वमान्य होती है।
3. उसमें क्षेत्रीय अथवा स्थानीय प्रयोगों से बचने की प्रवृत्ति होती है, अर्थात् वह एकरूप होती है।
4. वह हमारे सांस्कृतिक, शैक्षिक, प्रशासनिक, संवैधानिक क्षेत्रों का कार्य सम्पादित करने में सक्षम होती है।
5. वह सुस्पष्ट, सुनिधारित एवं सुनिश्चित होती है। उसके सम्प्रेषण से कोई भ्रान्ति नहीं होती।
6. वह नवीन आवश्यकताओं के अनुरूप निरन्तर विकसित होती रहती है।
7. वह नये शब्दों के ग्रहण और निर्माण में समर्थ होती है।
8. वैयक्तिक प्रयोगों की विशिष्टता, क्षेत्रीय विशेषता अथवा शैलीगत विभिन्नता के बावजूद उसका ढाँचा सुदृढ़ एवं स्थिर होता है।
9. उसमें किसी प्रकार की त्रुटि दोष मानी जाती है।
10. वह परिनिष्ठित, साधु एवं संभ्रान्त होती है।

इस दृष्टि से आज हिन्दी भी एक मानक भाषा है अर्थात् जहाँ-जहाँ हिन्दी लिखी या पढ़ी जाती है या पढ़े-लिखे लोग उसका व्यवहार करना चाहते हैं तो इस बात का ध्यान रखा जाता है कि वह व्याकरणसम्मत हो और उसका व्याकरण वही हो जो सर्वमान्य है।

मानक हिन्दी : अर्थ–मानक हिन्दी भाषा का अर्थ हिन्दी भाषा के उस स्थिर रूप से है जो अपने पूरे क्षेत्र में शब्दावली तथा व्याकरण की दृष्टि से समरूप है। इसलिए वह सभी लोगों द्वारा मान्य है, सभी लोगों द्वारा सरलता से समझी जा सकती है। अन्य भाषा रूपों के मुकाबले वह अधिक प्रतिष्ठित है। मानक हिन्दी भाषा ही देश की अधिकृत हिन्दी भाषा है। वह राजकाज की भाषा है। वह ज्ञान-विज्ञान की भाषा है, साहित्य-संस्कृति की भाषा है। अधिकांश विद्वान, साहित्यकार, राजनेता औपचारिक अवसरों पर इसी भाषा का प्रयोग करते हैं। आकाशवाणी व दूरदर्शन पर जिस हिन्दी में समाचार प्रसारित होते हैं, प्रतिष्ठित समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में जिस हिन्दी का प्रयोग होता है, जिस हिन्दी में सामान्यतः मूल लेखन व अधिकृत अनुवाद होता है, वह मानक हिन्दी भाषा ही है। मानक हिन्दी भाषा, हिन्दी के विभिन्न रूपों में सर्वमान्य रूप है। वह रूप पूरी तरह सुनिश्चित व सुनिर्धारित है तथापि इसमें गतिशीलता भी है।

मानक हिन्दी की विशेषताएं–मानक भाषा के जितने लक्षण ऊपर बतलाए गए हैं, वे सभी लक्षण मानक हिन्दी भाषा में विद्यमान हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार मानक भाषा में चार तत्त्वों का होना आवश्यक है–1. ऐतिहासिकता, 2. मानकीकरण, 3. जीवन्तता और 4. स्वायत्तता। ये चारों तत्त्व मानक हिन्दी भाषा में विद्यमान हैं। हिन्दी भाषा की ऐतिहासिकता तो सर्वविदित है। इसका एक गौरवशाली इतिहास है, विपुल साहित्यिक परम्परा है। शताब्दियों से लोग हिन्दी भाषा का प्रयोग करते आ रहे हैं। हिन्दी का मानक रूप भी गत शताब्दी में आकार लेने लगा था। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान हिन्दी का मानक स्वरूप विकसित होने लगा और स्वतंत्रता के पश्चात तो हिन्दी का मानक स्वरूप सुनिश्चित व सुनिर्धारित हो गया। मानक हिन्दी में जीवन्तता भी है। जीवन्तता इसी से सिद्ध होती है कि प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. जयन्त नारलीकर ब्रह्माण्ड के स्वरूप पर अपना व्याख्यान मानक हिन्दी भाषा में देते हैं। कविता और कहानी से लेकर विज्ञान और दर्शन तक सभी क्षेत्रों में आज मानक हिन्दी भाषा का प्रयोग होता है। यह भाषा नए युग के साथ चलने में पूरी तरह सक्षम है। मानक हिन्दी में स्वायत्तता भी है। वह किसी अन्य भाषा पर टिकी हुई नहीं है। उसकी स्वतंत्र शब्दावली और अपना व्याकरण है। इन चारों तत्त्वों के प्रकाश में यही कहा जा सकता है कि मानक हिन्दी भाषा एक सशक्त, गतिशील और सर्वमान्य भाषा है।

मानक हिन्दी का स्वरूप–हिन्दी की आधुनिक मानक शैली का विकास हिन्दी भाषा की एक बोली, जिसका नाम खड़ीबोली है, के आधार पर हुआ है। हिन्दी मानक भाषा है, जबकि खड़ीबोली उसकी आधारभूत भाषा का वह क्षेत्रीय रूप है जो दिल्ली, रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, सहारनपुर आदि में बोला जाता है। खड़ीबोली क्षेत्र में रहने वाले प्रायः प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति द्वारा जो कुछ बोला जाता है, वह खड़ीबोली है, किन्तु जैसे ब्रज, बुन्देली, निमाड़ी अथवा मारवाड़ी क्षेत्रो में हिन्दी की शिक्षा प्राप्त व्यक्ति परस्पर सम्भाषण अथवा औपचारिक अवसरों पर मानक हिन्दी बोलते हैं वैसे ही खड़ीबोली क्षेत्र के व्यक्ति भी औपचारिक अवसरों पर मानक हिंदी का प्रयोग करते हैं। हम इसको इस तरह समझें–मैथिलीशरण गुप्त चिरगाँव के थे। वे घर में बुन्देलखण्डी बोलते थे। हजारीप्रसाद द्विवेदी बलिया के थे, वे घर में भोजपुरी बोलते थे। किन्तु ये सभी व्यक्ति जब साहित्य लिखते हैं तो मानक हिन्दी का व्यवहार करते हैं। संक्षेप में, मानक भाषा अपनी भाषा का एक विशिष्ट प्रकार्यात्मक स्तर है। अब हम हिन्दी के निम्नलिखित चार वाक्य लेंगे और देखेंगे कि मानक भाषा की कसौटी पर कौन-सा वाक्य सही उतरता है–

1. मैंने भोजन कर लिया है।
2. मैंने खाना खा लिया है।
3. मैं खाना खा लिया हूँ।
4. हम खाना खा लिये हैं।

विभिन्न क्षेत्रीय एवं सामाजिक भिन्नताओं के आधार पर तीसरे एवं चौथे प्रकार्यात्मक स्तरों के अनेक भेद हो सकते हैं। किन्तु पहले या दूसरे वाक्य का व्यवहार औपचारिक स्तर पर मानक भाषा में सर्वत्र होगा। हिन्दी का सही रूप जो सर्वत्र एक-सा है, सर्वमान्य है, व्याकरणसम्मत है और सम्भ्रांत है, मानक हिन्दी का वाक्य है।

मानक हिन्दी के प्रकार–हिन्दी के अनेक रूप हैं और अनेक अर्थ हैं। हिन्दी के सारे रूपों को हम सुविधा के लिए दो वर्गों में बाँट सकते हैं–

1. सामान्य हिन्दी
2. क्षेत्रीय बोलियाँ

हिन्दी की क्षेत्रीय बोलियाँ छोटे-छोटे क्षेत्रों या छोटे-छोटे समुदायों के बीच ही प्रचलित हैं। सामान्य हिन्दी इन सब रूपों का महत्तम समापवर्तक रूप है। यदि बोलीगत सारे रूप हिन्दी की परिधि पर हैं तो उनका एक रूप ऐसा भी है जो केन्द्रवर्ती रूप है। वह केन्द्रवर्ती रूप ही मानक हिन्दी का रूप है। विभिन्न बोलियों के क्षेत्रीय अथवा सामुदायिक रूपों का मानक भाषा के रूप में पर्यवसान कई कारणों से होता है। इन कारणों को हम संक्षेप में इस प्रकार उल्लिखित कर सकते हैं–

1. एक-सी शिक्षा का प्रसार
2. यातायात की सुविधाओं का विस्तार
3. जनसंचार माध्यमों की लोकप्रियता
4. महानगरों का विकास
5. साहित्य की वृद्धि और मुद्रित अक्षर की व्यापकता
6. सिनेमा का प्रभाव
7. सरकारी नौकरी में स्थानान्तरण
8. सैनिकों की भर्ती
9. राष्ट्रीय एकता की चेतना।

उपर्युक्त कारणों से धीरे-धीरे ऐसी हिन्दी का निर्माण और प्रचलन हुआ जो हिन्दी के विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों में समान रूप से समझी जा सकती है और उसका व्यवहार किया जा सकता है।

हमारे देश में औद्योगिकीकरण जिस गति से हो रहा है, उससे भी क्षेत्रीय और सामुदायिक बोलियों के स्थान पर एक सामान्य भाषा फैल रही है। हिन्दी की शिक्षा का प्रसार भी इन दिनों बहुत हुआ है। आकाशवाणी और दूरदर्शन के प्रभाव के कारण मानक हिन्दी सामान्य जन तक पहुँच रही है।

हिन्दी भाषा : मानक और अमानक की पहचान– मानक भाषा लिखने के काम आती है और बोलने के भी। लिखित और उच्चरित मानक हिन्दी के जो प्रयोग व्याकरणसम्मत, सर्वमान्य, एकरूप और परिनिष्ठित हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है–

- बहुत से लोग बड़ी 'ई' की मात्रा का गलत प्रयोग करते हैं, जैसे–शक्ती, तिथी, कान्ती, शान्ती। वास्तव में इनके मानक रूप हैं–शक्ति, तिथि, कान्ति, शान्ति आदि।
- बहुत से लोग 'ऋ' को 'रि' बोलते हैं, जैसे–रिण, रितु। यह अमानक प्रयोग है, किन्तु 'ऋ' अब शुद्ध स्वर नहीं रह गया है। उच्चारण में 'रि को 'ऋ' का उच्चारण स्वीकार कर लिया गया है, किन्तु लिखने में संस्कृत शब्दों में 'ऋ' ही मानक प्रयोग है, जैसे–ऋण, ऋतु आदि।
- हिन्दी में अंग्रेजी के कुछ ऐसे शब्द प्रचलित हो गए हैं जिनमें 'ॉ' की ध्वनि होती है, जैसे–डॉक्टर, कॉलेज, ऑफिस। हिन्दी में डाक्टर, कालेज, आफिस बोलना या लिखना अमानक प्रयोग माना जाता है।
- कुछ शब्द 'इ' और 'ई' दोनों मात्राओं से लिखे जाते हैं, जैसे–हरि/हरी, स्वाति/स्वाती। किन्तु व्यक्ति के नाम का मानक रूप वही माना जाता है जो नियम द्वारा मान्य है या वह स्वयं लिखता है, जैसे–डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सही है, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय नहीं, क्योंकि डॉ. हरीसिंह अपना नाम 'हरीसिंह' लिखते थे।
- कुछ लोग कुछ शब्दों में बड़ी 'ई' के स्थान पर छोटी 'इ' की मात्रा लगाते हैं, जैसे–श्रीमति, मैथिलिशरण। ये अमानक प्रयोग हैं। इनके मानक रूप हैं–श्रीमती, मैथिलीशरण।
- ऐसे ही निम्नलिखित शब्दों के अन्त में ह्रस्व 'उ' का प्रयोग मानक है, दीर्घ 'ऊ' का नहीं।

मानक	**अमानक**
इन्दु	इन्दू
प्रभु	प्रभू
शम्भु	शम्भू

- हिन्दी में 'र' के साथ जब 'उ' अथवा 'ऊ' की मात्रा लगायी जाती है तब उसका रूप होता है–'रुपया' अथवा 'रूप'।
- जिन शब्दों में हिन्दी में 'औ' की मात्रा होती है, उनका उच्चारण 'अ', 'उ' की तरह करना चाहिए, ओ की तरह नहीं। जैसे 'औरत' का मानक उच्चारण 'अउरत' की तरह होगा, 'ओरत' की तरह नहीं। इसी प्रकार 'ए' का उच्चारण भी सावधानी से करना चाहिए। 'मैं' का उच्चारण 'मंय' की तरह होगा, 'में' की तरह नहीं। 'सेनिक', 'गोरव' उच्चारण अमानक हैं; 'सैनिक', 'गौरव' आदि मानक।
- संस्कृत के शब्दों में दो स्वरों को एक साथ लिखना अमानक है, जैसे–'स्थाई' अमानक है, मानक 'स्थायी' है।

- हिन्दी में आजकल अनुनासिक चिह्न चन्द्रबिन्दु (ँ) के स्थान पर अनुस्वार लिखा जाने लगा है, जैसे–'हँस' के स्थान पर 'हंस'। ऐसा लोग लापरवाही के कारण करते हैं। मुद्रण की सुविधा के लिए भी अब हिन्दी में अनुनासिक चिह्न एवं चन्द्रबिन्दु के स्थान पर अनुस्वार लिखा जाने लगा है, जैसे–कुंवर, मां, बांस आदि; परन्तु इनके मानक रूप हैं–कुँवर, माँ, बाँस।
- जिन शब्दों के अन्त में 'ई' या 'ई' की मात्रा (ी) होती है उनका जब बहुवचन बनाया जाता है तो वह ह्रस्व 'इ' की मात्रा में परिवर्तित हो जाती है, जैसे–मिठाई-मिठाइयाँ, दवाई-दवाइयाँ, लड़की-लड़कियाँ आदि। इसी प्रकार यदि शब्दों के अन्त में 'ऊ' की मात्रा हो तो उनके बहुवचन में ह्रस्व 'उ की मात्रा हो जाती है, जैसे–आँसू-आँसुओं, लड्डू-लड्डुओं आदि।
- मानक हिन्दी में अब 'क' के स्थान पर 'क़' का प्रयोग भी होने लगा है। 'क़' विदेशी (फारसी, अंग्रेजी) शब्दों में आता है, जैसे–'क़लम'। इसी प्रकार ख़, ग़, ज़, फ़ ध्वनियाँ भी हिन्दी में स्वीकार कर ली गयी हैं। ख़त, ग़ैरत, ज़नाब, सफ़ा बोलना पढ़े-लिखे होने की निशानी मानी जाती है।
- 'व' और 'ब' में भेद होता है। 'व' के स्थान पर 'ब' बोलना उचित नहीं है। इसी प्रकार 'ज्ञ' और 'क्ष' केवल संस्कृत शब्दों में ही प्रयुक्त होते हैं।
- हिन्दी में 'श', 'ष', 'स' तीन अलग-अलग ध्वनियाँ हैं–सड़क, शेष, विष, षटकोण आदि मानक शब्द रूप हैं।
- 'ष्ट' और 'ष्ठ' का उच्चारण प्रायः भ्रम उत्पन्न करता है। इनके बोलने और लिखने में शुद्धता का ध्यान रखना चाहिए, जैसे–'इष्ट', 'नष्ट', 'भ्रष्ट', 'स्वादिष्ट', 'कनिष्ठ', 'ज्येष्ठ', 'घनिष्ठ', 'प्रतिष्ठा' आदि।
- रेफ लगाने में प्रायः भूल होती है। रेफ वास्तव में 'र' का हलन्त रूप है। यह जहाँ बोला जाता है, सदैव उसके आगे के अक्षर पर लगता है, जैसे–कर्म, धर्म, आशीर्वाद आदि। 'आर्शीवाद' लिखना गलत है।
- संस्कृत में रेफ से संयुक्त व्यंजन का द्वित्व होता भी है और नहीं भी होता। कर्त्तव्य-कर्तव्य, अर्द्ध-अर्ध, आर्य्य-आर्य, भार्य्या-भार्या आदि दोनों रूप मानक हैं। हिन्दी में भी ये दोनों रूप शुद्ध स्वीकारे गये हैं, परन्तु निम्नलिखित शब्दों का द्वित्व अलग नहीं किया जा सकता–महत्त्व, तत्त्व, उज्ज्वल, निस्संदेह, निश्शंक ही शुद्ध रूप हैं; महत्व, तत्व, उज्वल, निसंदेह, निशंक नहीं।
- हिन्दी में नया, गया, लाया तो ठीक माने जाते हैं, पर उनके स्त्रीवाची रूप कभी नयी, गयी, लायी लिखे जाते हैं, तो कभी नई, गई, लाई। वास्तव में आई और आयी, लाई और लायी, भाई और भायी में फर्क होता है। देखिए–

आई	माँ (मराठी में)
आयी	'आया' क्रिया का स्त्रीलिंग रूप
लाई	धान का खिला हुआ रूप
लायी	'लाया' का स्त्रीलिंग रूप
भाई	बन्धु
भायी	'भाया' क्रिया का स्त्रीलिंग रूप

  इस प्रकार 'बनिए' और 'बनिये' में भी अन्तर करना चाहिए। 'बनिए' बनना क्रिया का रूप है जबकि 'बनिये' बनिया का बहुवचन है। जिन शब्दों के एकवचन में य हो, उनके बहुवचन और स्त्रीलिंग रूपों में भी य ही होना चाहिए।
- सम्बोधन में बहुत से लोग देशवासियों, भाइयों जैसे प्रयोग करते हैं। यह अमानक हैं। सम्बोधन बहुवचन में 'ओ' का प्रयोग होना चाहिए, 'ओं' का नहीं।
- हिन्दी में जन, गण, वृन्द जैसे शब्द बहुवचनवाची हैं, अतः गुरुजन, विधायकगण, पक्षीवृन्द ही सही हैं; गुरुजनों, विधायकगणों, पक्षीवृन्दों जैसे रूप आमानक हैं।
- हिन्दी के कारक चिह्नों में सबसे अधिक कठिनाई 'ने' को लेकर होती है। मानक हिन्दी में 'ने' का प्रयोग कर्ता-कारक में सकर्मक धातुओं से बने भूतकालिक क्रिया रूपों के साथ होता है। जैसे–
  1. मैंने कहा।
  2. राम ने रावण को मारा।
  3. मैंने गाना गाया।

किन्तु निम्न वाक्यों में 'ने' का प्रयोग अमानक है-

1. मैं ने हँसा।
2. राम ने बहुत रोया।

- मानक हिन्दी में विशेषण का लिंग संज्ञा के लिंग के अनुरूप बदलने की परिपाटी नहीं है। संस्कृत में सुन्दर बालक किन्तु 'सुन्दरी बालिका' जैसे प्रयोग प्रचलित हैं। हिन्दी में हम 'सुन्दर लड़की' और 'सुन्दर लड़का' कहते हैं। वास्तव में हिन्दी में संज्ञा के लिंग के अनुरूप विशेषण का लिंग नहीं बदला जाना चाहिए।
- निश्चयवाचक अव्यय के रूप में हिन्दी में 'न', 'नहीं' और 'मत' मानक हैं; 'ना' नहीं। इस तरह के वाक्य ठीक नहीं हैं- 'ना वह बैठा और ना ही उसने बात की।'

वास्तव में भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया एक लम्बी प्रक्रिया है। अतः जिन शब्दों, अभिव्यक्तियों और वाक्य रूपों का मानकीकरण हो चुका है, उनका पालन करना चाहिए।

मानक भाषा एवं राजभाषा में अंतर–

1. मानक भाषा प्रधानतः साहित्य, शिक्षा एवं प्रशासन की भाषा होती है, जबकि राजभाषा प्रधानतः प्रशासन की भाषा होती है।
2. मानक भाषा का व्याकरण सम्मत होना अनिवार्य होता है, जबकि राजभाषा में कभी-कभी व्याकरणिक नियमों की अवहेलना भी देखी जा सकती है।
3. मानक हिन्दी भाषा की प्रयुक्तियों में कर्तृवाच्य की प्रधानता होती है, जबकि राजभाषा में कर्मवाच्य की।
4. मानक भाषा में कोशगत शब्दों की प्रधानता होती है, जबकि राजभाषा में पारिभाषिक शब्दों की प्रचुरता होती है।
5. मानक भाषा सर्वमान्य होती है जबकि राजभाषा राजकीय मान्यता प्राप्त होती है।
6. मानक भाषा में अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना–तीनों शब्द-शक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्तियाँ की जाती हैं, जबकि राजभाषा में केवल अभिधा के माध्यम से ही अभिव्यक्ति की जाती है।
7. मानक भाषा में एकाधिकार्थता चाहे शब्द स्तर पर हो या वाक्य के स्तर पर, काव्य-सौंदर्य के अनुकूल मानी जाती है। इसके विपरीत, राजभाषा हिन्दी में सदैव एकार्थता ही काम्य होती है।
8. मानक भाषा में समस्रोतीय घटकों से ही शब्दों की रचना होती है, जबकि राजभाषा में विषम स्रोतीय घटकों से भी शब्द रचना हो सकती है।

◆◆◆

(ङ) हिंदी भाषा के विविध रूप : साहित्यिक भाषा

6. साहित्य की भाषा या साहित्यिक भाषा के रूप में हिंदी भाषा का परिचय दीजिए।

उत्तर–साहित्य की भाषा या साहित्यिक भाषा के रूप में हिंदी–वह भाषा जिसमें साहित्य की रचना की जाती है साहित्यिक भाषा कहलाती है। वर्तमान समय में हिंदी की साहित्यिक भाषा के रूप में खड़ी बोली हिंदी, जो मानक भाषा भी है। अधिक प्रचलित है, हालांकि हिंदी भाषा की विभिन्न बोलियों (18) में लिखा गया समस्त साहित्य हिंदी साहित्य के अंतर्गत आता है तथा आलोचित एवं विवेचित होता है। यहाँ हम जिस साहित्यिक हिंदी भाषा पर चर्चा करेंगे वह खड़ी बोली हिंदी ही है।

साहित्यिक भाषा संवेदना, सौंदर्य और चमत्कार की भाषा होती है। यह भावनाओं तथा संवेदनाओं को जगाती है। इसके अंतर्गत कविता, कहानी, कला तथा साहित्य की विविध विधाओं की भाषा आती है। हिंदी की अनेक साहित्यिक कृतियाँ साहित्यिक हिंदी का उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

खड़ी बोली हिन्दी आज राजभाषा और साहित्यिक भाषा के रूप में स्थापित है। खड़ी बोली हिन्दी का इतिहास भी पुराना है। खड़ी बोली में भी साहित्यिक रचनाएँ ब्रजभाषा और अवधी के साथ ही प्रारम्भ हो गई थीं। वर्तमान समय में, जिसे हम मानक हिन्दी के रूप में जानते हैं, वह खड़ी बोली का ही परिवर्तित रूप है। खड़ी बोली के सन्दर्भ में प्रायः यह भ्रम रहा है कि इसका साहित्यिक भाषा के रूप में विकास अवधी और ब्रजभाषा के बाद उन्नीसवीं सदी में हुआ। वास्तविकता यह है कि पुरानी हिन्दी के बाद जिस समय हिन्दी की अन्य बोलियाँ विकसित हुई, ठीक उसी समय खड़ी बोली का भी विकास होने लगा था।

खड़ी बोली की आरम्भिक प्रवृत्तियाँ सिद्ध एवं नाथ साहित्य में मिलती हैं। 'ण' के स्थान पर 'न' का प्रयोग, अकारान्त-एकारान्त एवं अनुनासिकता जैसे भाषिक प्रयोग सिद्धों एवं नाथों के साहित्य में दिखाई देते हैं। खड़ी बोली को काव्य-भाषा के रूप में अपनाने का प्रथम श्रेय सूफी सन्त शेख फरीद शकरगंज को दिया जा सकता है। अमीर खुसरो, जिनका वास्तविक नाम अबुल हसन था, खड़ी बोली के पहले प्रमुख कवि माने जाते हैं। यह बात आश्चर्यजनक लगती है कि 14 वीं शताब्दी के आरम्भ में वे ऐसी भाषा का प्रयोग कर रहे थे, जैसी खड़ी बोली आधुनिक काल में दिखती है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि आधुनिक काल में खड़ी बोली का विकास जिस प्रकार हिन्दवी और फ़ारसी की अन्तर्क्रिया से हुआ है, खुसरो लगभग वैसे ही वातावरण में रहकर काव्य-रचना कर रहे थे। इसके बावजूद 14वीं सदी में लिखित उनकी खड़ी बोली आज की खड़ी बोली के इतनी अधिक निकट है कि आश्चर्य में डाल देती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी इस बात को रेखांकित किया है- "क्या उस समय भाषा घिसकर इतनी चिकनी हो गई थी, जितनी अमीर खुसरो की पहेलियों में मिलती है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 39) उनकी पहेलियों में खड़ी बोली अपने आधुनिक एवं शुद्ध रूप में नजर आती है–

एक थाल मोती से भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाल फिरे, मोती उससे एक न गिरे।

खुसरो की कविताओं में खड़ी बोली का दूसरा रूप वहाँ दिखाई देता है, जहाँ वे खड़ी बोली और ब्रजभाषा के आरम्भिक रूपों को मिला देते हैं।

इन शैलियों के अतिरिक्त अमीर खुसरो ने ऐसी रचनाएँ की हैं, जिनमें खड़ी बोली, ब्रजभाषा और फारसी एक ही प्रवाह में शामिल हो गई हैं। कुल मिलाकर यह मानना पड़ता है कि अमीर खुसरो भाषिक प्रयोगों में अपने समय तथा भविष्य की भाषिक प्रवृत्तियों का सुन्दर समन्वय स्थापित कर पा रहे थे।

इसके बाद सन्त साहित्य में भी खड़ी बोली के आधार पर साहित्यिक रचनाएँ दिखाई देती हैं। कबीर की भाषा को तो पंचमेल खिचड़ी कहा ही गया। इनके अलावा अन्य सन्तों ने भी खड़ी बोली के शब्दों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। कहीं-कहीं तो इन सन्तों की रचनाएँ मूलतः खड़ी बोली की ही प्रतीत होती हैं। जैसे -

जो बिछुड़े हैं पियारे से भटकते दर-बदर फिरते।
हमार यार है हममें हमन को इन्तजारी क्या।।

उपर्युक्त उदाहरण में भाषिक संरचना मूलतः खड़ी बोली पर आधारित है, जबकि हमन जैसे प्रयोग इसके पूर्वीपन को तथा 'दर-बदर' जैसे प्रयोग फारसी प्रभाव को स्पष्ट करते हैं। सतरहवीं शताब्दी के सन्त मलूकदास के साहित्य में भी यह प्रवृत्ति दिखाई देती है -

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका कह गए, सबके दाता राम।।

इसी प्रकार रीतिकालीन काव्य में दरिया साहब, पलटू साहब तथा यारी साहब जैसे सन्त कवि जिस भाषा में लिख रहे थे, वह खड़ी बोली के ही निकट थी।

अकबर के दरबारी कवि अब्दुर्रहीम 'खानखाना' की रचना 'मदनाष्टक' में खड़ी बोली का स्पष्ट प्रयोग दिखाई देता है। उसकी भाषा आज की खड़ी बोली जैसी ही है। रहीम का एक उदाहरण द्रष्टव्य है, जिसमें खड़ी बोली मिश्रित ब्रजभाषा देखी जा सकती है -

रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरे मोती मानुस चून।।

रहीम ने खड़ी बोली में पर्याप्त प्रयोगधर्मिता का परिचय दिया है।

तेरहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में सुल्तान अलाउद्दीन के दक्षिण अभियान के कारण कई अधिकारी, कर्मचारी और व्यापारी बीजापुर तथा गोलकुण्डा आदि क्षेत्रों में गए तथा उनके साथ उनकी भाषा भी गई। यह भाषा दिल्ली के आसपास की वही भाषा थी, जिसे कौरवी कहा जाता है और जिसका नाम आधुनिक काल में खड़ी बोली पड़ा। चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में मुहम्मद तुगलक के आदेश के कारण बहुत बड़ी संख्या में दिल्ली के लोग देवगिरि या दौलताबाद जाकर बसे जिससे भाषिक संक्रमण की प्रक्रिया और तीव्र हुई। धीरे-धीरे इन लोगों की भाषा पर उस क्षेत्र की भाषाओं–मराठी, तेलुगु और कन्नड़ आदि का प्रभाव पड़ने लगा। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में एक ऐसी मिश्रित भाषा पैदा हुई, जो अपने व्याकरणिक ढाँचे में खड़ी बोली के समान थी, बाहरी कलेवर में फ़ारसी के समान थी तथा प्रकृति में सामासिक थी। इस भाषा में सूफी फकीरों तथा अन्य अनेक साहित्यकारों ने चौदहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक साहित्यिक रचनाएँ की। इन्हीं रचनाओं के समग्र रूप को दक्खिनी साहित्य कहते हैं।

दक्खिनी हिन्दी के रचनाकारों में प्रायः किसी न किसी मात्रा में खड़ी बोली से निकटता दिखाई पड़ती है। इनकी कुछ रचनाएँ तो ऐसी हैं, जो उत्तर भारत में खड़ी बोली की रचनाओं के रूप में विख्यात हैं। उदाहरण के लिए वली दकनी की यह ग़ज़ल -

जिसे इश्क का तीर कारी लगे, उसे जिन्दगी क्यों न भारी लगे।

वली को कहे तू अगर एक वचन, रकीबों के दिल में कटारी लगे।

इसके अतिरिक्त अन्य कवियों की रचनाएँ भी खड़ी बोली हिन्दी से काफी मिलती-जुलती हैं। ख्वाजा बन्दानवाज तथा मुल्ला वजही की रचनाओं से एक-एक पंक्ति के उदाहरण क्रमशः द्रष्टव्य हैं—

मैं आशिक उस पीव का जिसने मुझे जीव दिया है।

सूरज यूँ है रंग आसमानी मने, कि खिल्या कमल फूल पानी मने।

दक्खिनी हिन्दी के प्रथम हिन्दी गद्यकार ख्वाजा बन्दानवाज गेसूदराज माने जाते हैं। परवर्ती गद्य लेखकों में मीराँजी शम्सुल उश्शाक, शाह कलन्दर, बुरहानुद्दीन जानम, अमीनुद्दीन आला आदि उल्लेखनीय हैं। दक्खिनी हिन्दी गद्य का श्रेष्ठ साहित्य मुल्ला वजही की रचना 'सबरस' में दिखाई देता है। दक्खिनी हिन्दी में खड़ी बोली के सभी स्वर तथा सभी व्यंजन तो मिलते ही हैं, अन्य प्रवृत्तियाँ भी मिलती हुई प्रतीत होती हैं।

अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक खड़ी बोली पर आधारित साहित्यिक भाषा को 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' संज्ञा प्राप्त थी।

खड़ी बोली की काव्यधारा में नजीर अकबराबादी का भी विशेष महत्त्व है। पर उनके साहित्य को हिन्दी खड़ी बोली के विकास में स्थान नहीं दिया जाता है। खड़ी बोली एक प्रकार से मुसलमानों की काव्यभाषा मानी जाती थी। यह स्थिति भारतेन्दु युग तक विद्यमान थी।

उन्नीसवीं सदी में खड़ी बोली हिन्दी का विकास—उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली का विकास बहुत तेजी से हुआ, उतनी ही तेजी से ब्रजभाषा का पतन भी हुआ। ब्रजभाषा लगभग दो-तीन शताब्दियों तक एक मात्र साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित थी। इस तीव्र और जटिल परिवर्तन के पीछे कई कारण देखे जा सकते हैं। वस्तुतः आधुनिकता के आगमन ने इस परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आधुनिक संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में ब्रजभाषा चुक-सी गई थी और वहीं खड़ी बोली में ऐसी विशेषताएँ विद्यमान थीं जो आधुनिक युग की बदलती संवेदनाओं को वहन कर सकें। हिन्दी का आधुनिक काल अनेक सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनों का साक्षी बना। यह वह समय था, जब भारतवासी अंग्रेजों के विरुद्ध आजादी की लड़ाई लड़ रहे थे। अंग्रेजी का प्रभाव देश की भाषा और संस्कृति पर दिखाई पड़ने लगा था। मुगल सत्ता के समाप्त हो जाने से अरबी-फ़ारसी के शब्दों के प्रचलन में कमी हुई थी और खड़ी बोली का प्रभाव बढ़ा था। अंग्रेज शासक सामान्य व्यवहार की भाषा खड़ी बोली से परिचित हुए। उन्होंने खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार पर ध्यान दिया। सन् 1800 में अंग्रेज सरकार ने फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। इस कॉलेज के प्रिंसिपल जॉन गिलक्रिस्ट ने खड़ी बोली को पूरे भारत की व्यावहारिक भाषा के रूप में मानते हुए उसकी कई शैलियों का विकास करवाया।

खड़ी बोली के विकास में ईसाई मिशनरियों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। धर्म-प्रचार के लिए उन्होंने बाईबल के कुछ विशेष अंशों का सरल हिन्दी में अनुवाद करवाकर छोटी-छोटी पुस्तकों के रूप में उनका निःशुल्क वितरण किया। इससे देवनागरी लिपि तथा खड़ी बोली का व्यापक प्रचार-प्रसार होने लगा।

इस प्रक्रिया में कई भारतीय बुद्धिजीवी अपने-अपने धर्म तथा समाज की सुरक्षा के लिए आगे आए, जिसमें दयानन्द सरस्वती (आर्य समाज), राजा राममोहन रॉय (ब्रह्म समाज), श्रद्धाराम फिल्लौरी (हिन्दू धर्म सभा) का योगदान महत्त्वपूर्ण है। इन लोगों ने भी अपनी प्रचार सामग्री को सरल-सहज खड़ी बोली हिन्दी में प्रस्तुत किया। इनके अलावा थियोसोफिकल सोसायटी के माध्यम से एनी बेसेण्ट ने हिन्दी भाषा को बढ़ावा दिया।

प्रेस की स्थापना उन्नीसवीं शताब्दी में एक ऐसी घटना थी, जिसने भारतीय समाज को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन से सम्प्रेषण की सम्भावनाएँ कई गुना बढ़ गई। इस प्रकार प्रेस के आगमन ने खड़ी बोली के विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उन्नीसवीं सदी में खड़ी बोली का साहित्यिक स्वरूप—

भारतेन्दु पूर्व युग—इस युग में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका फोर्ट विलियम कॉलेज की रही। इस कॉलेज के प्रिंसिपल जॉन गिलक्रिस्ट ने भारतीय भाषाओं का गहन अध्ययन किया; व्याकरण और शब्दकोष का निर्माण भी कराया। वे हिन्दी भाषा को हिन्दुस्तानी कहते थे। उनकी ही देखरेख में लल्लूजीलाल, सदल मिश्र, सदासुखलाल नियाज, इंशाअल्ला खाँ ने प्रमुख रूप से इस भाषा में साहित्य रचना की।

सन 1830 में जन्मे मुंशी सदासुखलाल नियाज ने हिन्दी खड़ी बोली का प्रयोग अपनी रचनाओं में बखूबी किया। खड़ी बोली या कौरवी का उद्भव शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप में हुआ है। इसका क्षेत्र देहरादून का मैदानी भाग, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, दिल्ली, बिजनौर, रामपुर, मुरादाबाद कहा जा सकता है। मुंशी सदासुखलाल नियाज के अलावा इंशाअल्ला खां ने भी इस दौरान रचनाएँ की। इनके द्वारा लिखित 'रानी केतकी की कहानी' को हिन्दी की पहली कहानी होने का गौरव प्राप्त है। लल्लूजीलाल ने गिलक्रिस्ट के अनुरोध पर 'प्रेमसागर' नामक पुस्तक खड़ी बोली में लिखी, जिसमें कृष्णलीला का वर्णन है। 'सिंहासन बत्तीसी', 'बेताल पचीसी', 'शकुन्तला नाटक' इनकी अन्य पुस्तकें हैं। इन पुस्तकों की भाषा है तो खड़ी बोली ही, पर उसमें ब्रज और उर्दू का भरपूर मिश्रण हुआ है। इससे पहले गिलक्रिस्ट स्वयं हिन्दी के व्याकरण पर पुस्तक लिख चुके थे। सन् 1796 में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'ग्रामर ऑफ हिन्दुस्तानी लैंग्वेज' में पहले-पहल भारत में देवनागरी लिपि की छपाई के लिए टाइप का इस्तेमाल हुआ। हालांकि इससे पहले हॉलैण्ड के निवासी जौजेशुआ केटलर 'हिन्दुस्तानी' शीर्षक से हिन्दी का प्रथम व्याकरण डच भाषा में लिख चुके थे, और सन् 1716 में एम्स्टर्डम में प्रकाशित पुस्तक 'चाइना इलस्ट्रेटा' में पहली बार देवनागरी के अक्षर छापे जा चुके थे।

इसी काल के एक और लेखक सदल मिश्र हैं। इनकी रचनाओं में 'नासिकेतोपाख्यान' प्रसिद्ध है। इस पुस्तक में सदल मिश्र ने अरबी और फारसी के शब्दों का प्रयोग नहीं के बराबर किया है। खड़ी बोली में लिखी गई इस पुस्तक में संस्कृत के शब्द अधिक हैं। सन् 1600-1850 के बीच कालजयी कृतियाँ तो नहीं मिलतीं, पर इस दौरान हिन्दी गद्य अपना निश्चित स्वरूप ग्रहण करता रहा। जिस तरह जैन मुनियों ने 8-9 वीं शती में अपने मतों के प्रचार-प्रसार के लिए जनभाषा को अपनाया था, ठीक उसी प्रकार 18-19 वीं शताब्दी में ईसाई पादरियों ने भी हिन्दी का सहारा लिया। चार्ल्स विल्किंस ने बाइबल का हिन्दी अनुवाद कर उसे छपवाया। हिन्दी के लिए 30 मई, 1826 का दिन एक और मील का पत्थर बना, जब हिन्दी का पहला समाचार पत्र 'उद्दन्त मार्तण्ड' कलकत्ता से निकला। हालाँकि यह साप्ताहिक समाचार पत्र एक साल छः महीने ही निकल सका और 11 दिसम्बर, 1827 को बन्द हो गया। यह भी एक संयोग है कि हिन्दी का पहला समाचारपत्र अहिन्दी भाषाभाषी क्षेत्र से निकला। हिन्दी प्रदेश में छपने वाला हिन्दी का पहला समाचारपत्र 'बनारस अखबार' था। सन् 1885 में यह काशी से निकला। इसका प्रकाशन राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' ने शुरू किया था और पण्डित गोविन्द रघुपति धन्ते इसके सम्पादक बनाए गए थे। इसकी भाषा उर्दू मिश्रित हिन्दी थी और लिपि देवनागरी। हिन्दीभाषी क्षेत्र से निकलने वाला पहला दैनिक समाचारपत्र 'हिन्दोस्तां' है जिसे प्रतापगढ़ कालाकाँकर के राजा रामपाल सिंह ने निकाला था और पण्डित मदनमोहन मालवीय उसके संपादक थे। इस दौरान सन् 1877 में श्रद्धाराम फुल्लौरी का उपन्यास 'भाग्यवती' भी छपा। अनेक विद्वान इसे हिन्दी का पहला उपन्यास मानते हैं।

हालाँकि हिन्दी उपन्यास को जो लोकप्रियता बाबू देवकीनन्दन खत्री ने दिलाई, उसकी तुलना हाल ही में लोकप्रिय हुए उपन्यास 'हैरी पॉटर' से की जा सकती है। वैसे तो उन्होंने कुल दस उपन्यास लिखे, पर 'चन्द्रकान्ता' और 'चन्द्रकान्ता-सन्तति' को जैसी लोकप्रियता मिली, उसका कोई जवाब नहीं। कहते हैं कि उनका उपन्यास पढ़ने के लिए लोगों ने हिन्दी सीखी। दिलचस्प बात यह है कि उन्होंने यह उपन्यास एक बारगी नहीं लिखा। वे टुकड़ों में लिखते थे और उसके हर एक भाग को बयान कहा जाता था। एक-एक कर जब ये बयान छपते, उन्हें पढ़ने के लिए और आगे की कहानी जानने के लिए लोग उत्सुक रहते थे। इलाके में जो लोग हिन्दी पढ़ सकते थे, उनकी पूछ बढ़ जाती थी और लोग उन्हें घेरकर नव्यतम भाग की कथा सुनते थे। हैरी पॉटर की कहानियों की तरह इसकी भी कथा विशुद्ध फन्तासी पर आधारित थी।

भारतेन्दु युग–भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी नवजागरण की नींव रखी। 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल' मानने वाले हिन्दी के इस पुरोधा ने अपने नाटकों, कविताओं, कहावतों और किस्सागोई के माध्यम से हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए खूब काम किया। उन्होंने अपने पत्र 'कविवचनसुधा' के माध्यम से हिन्दी का प्रचार-प्रसार भी किया। फोर्ट विलियम कॉलेज के तहत कार्यरत चारों भाषा मुंशियों ने खड़ी बोली हिन्दी को स्थापित करने का जो स्तुत्य कार्य किया था, भारतेन्दु ने उसे कविता के माध्यम से आगे बढ़ाया। उन्होंने हिन्दी को ब्रज से मुक्त किया और जीवन के यथार्थ से हिन्दी को गर्वबोध दिया। उनकी रचनाओं में अंग्रेजी शासन व्यवस्था के खिलाफ गहरी कसक भी थी। कुछ बानगियाँ इस प्रकार हैं -

अंग्रेजी पढ़ी के जदपि सब गुण होत प्रवीन
पै निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन।
निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल।
सब गुरुजन को बुरा बतावे, अपनी खिचड़ी अलग पकावे

भीतर तत्त्व न झूठी तेजी, क्यों सखी साजन? नहीं अंग्रेजी।
नई नई नित तान सुनावे, अपने जाल में जगत फँसावे
नित नित करी हमें बल सून, क्यों सखी साजन? नहीं कानून।

हिन्दी के इस नवजागरण काल में ही 'नागरी प्रचारिणी सभा' का गठन हुआ। सन् 1893 में काशी में स्थापित इस संस्था ने हिन्दी के काम और नाम को और आगे बढ़ाया। इस बीच महेन्द्र भट्टाचार्य ने 'पदार्थ विज्ञान' नामक पुस्तक लिख कर सिद्ध कर दिया कि हिन्दी सिर्फ साहित्य की भाषा ही नहीं, बल्कि विज्ञान की भाषा भी हो सकती है।

बीसवीं सदी में खड़ी बोली हिन्दी का विकास–

सन् 1900 (जनवरी) में 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ और उसमें किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'इन्दुमती' छपी। इसके साथ ही हिन्दी कहानी के एक नए अध्याय का जन्म हुआ, जो पहले के आख्यानों और किस्सागोई से भिन्न थी। अनेक विद्वान तो 'इन्दुमती' को ही हिन्दी की पहली कहानी होने का गौरव देते हैं।

बीसवीं सदी का आरम्भ हिन्दी भाषा के विकास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। इस समय देश में कई तरह के आन्दोलन चल रहे थे। ये आन्दोलन चाहे राजनीतिक हों या सामाजिक, इन सबका माध्यम हिन्दी ही थी। बड़ी बात यह है कि हिन्दी अब केवल उत्तर-भारत तक ही सीमित नहीं रह गई थी, वह पूरे देश की भाषा बन गई थी। सन् 1918 में दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना कर महात्मा गांधी ने उत्तर और दक्षिण भारत के बीच भाषा सेतु का निर्माण किया। इस प्रसंग को याद कर भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा–"सन् 1917 में महात्मा गांधी चम्पारण में थे और मुझे उनके साथ कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, तब उन्होंने दक्षिण में हिन्दी का प्रचार कार्य आरम्भ करने का विचार किया और उनके कहने पर स्वामी सत्यदेव और गांधी जी के प्रिय पुत्र देवदास गांधी ने वहाँ जाकर यह कार्य आरम्भ किया। बाद में सन् 1918 में हिन्दी साहित्य सम्मलेन के इन्दौर अधिवेशन में इस प्रचार कार्य को सम्मलेन का मुख्य कार्य स्वीकार किया गया।" इसी बीच देश में साम्प्रदायिक विद्वेष का वातावरण उठ खड़ा हुआ। इस वातावरण ने भाषा संस्कृति को भी अपने घेरे में ले लिया। महात्मा गांधी जिस तरह हिन्दी-मुस्लिम एकता के हिमायती थे, वैसे ही वे हिन्दी-उर्दू सम्मिलन के भी पक्षधर थे। उनका स्पष्ट मानना था कि "यदि हिन्दी और उर्दू का संगम हो जाए, तो सरस्वती प्रकट हो जाए, जो गंगा और यमुना दोनों से महान और विशाल होगी। यह सरस्वती ऐसी बड़ी हुगली के समान होगी, जिसका पंक दूर कर दिया गया है।" हिन्दी और उर्दू के झगड़े को समेटते हुए उन्होंने भाषा को एक और नाम दिया 'हिन्दुस्तानी'। इस हिन्दुस्तानी भाषा में न तो संस्कृत की क्लिष्टता थी और न ही उर्दू की दुरूहता। यह ऐसी सहज-सरल बोलचाल की भाषा थी जो देश के व्यापक क्षेत्र में बोली-समझी जाती थी।

साहित्य की दृष्टि से तेलुगु, तमिल, बांग्ला, मराठी आदि भाषाएँ बेशक हिन्दी से आगे थीं, परन्तु बोलने वालों के लिहाज से हिन्दुस्तानी सबसे आगे थी। सन् 1918 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए गांधी जी ने हिन्दुस्तानी की पुरजोर वकालत करते हुए कहा कि यही देश की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। सन् 1900 से लेकर 1950 तक हिन्दी के अनेक रचनाकारों ने इसके विकास में योगदान दिया। इनमें प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा आदि प्रमुख कहे जा सकते हैं। इस काल को हिन्दी का दूसरा स्वर्णयुग कहा जा सकता है। भक्तिकाल के बाद एक लम्बा अन्तराल आया था, जिसमें आधुनिक हिन्दी भाषा गढ़ी जाती रही थी। यह काल उसकी सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति का काल था। इन लेखकों-कवियों ने हिन्दी के साहित्य को विश्व साहित्य के समकक्ष खड़ा कर दिया।

लगभग इसी समय आचार्य रामचन्द्र ने हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखकर हिन्दी में साहित्य के इतिहास लेखन की कमी को पूरा किया। हालाँकि यह भी सही है कि फ्रांसीसी विद्वान गार्सा द तासी इससे नौ दशक पहले हिन्दी साहित्य का इतिहास कलमबद्ध कर चुके थे, फिर भी आचार्य शुक्ल ने इतिहास बोध की जो विलक्षण प्रतिभा दिखाई और शुद्ध वैज्ञानिक तरीका अपनाया, वह अप्रतिम है।

साहित्य साधना के बीच दो और ऐसी बातें हुई, जिनका असर हिन्दी के विकास पर पड़ा। ये थी–सन् 1931 में हिन्दी की पहली फीचर फिल्म 'आलमआरा' का निर्माण और उसी के आसपास हिन्दी टाइपराइटर का आविष्कार। पहले ने यदि देश की लाखों करोड़ों निरक्षर जनता को भारत की परम्परागत वाचिक परम्परा से पुनः जोड़ने का काम किया, तो दूसरे ने यन्त्र की आधुनिक धारा से हिन्दी को जोड़ा। इसके बाद हिन्दी को पीछे मुड़कर देखने की जरूरत शायद ही हुई। यह सच भी है कि हिन्दी के प्रचार-प्रसार में फिल्मों और उनके गानों का जितना योगदान रहा है, उतना किसी और का नहीं। यह हिन्दी फिल्मों का ही प्रभाव रहा कि रूसी लोग 'मेरा जूता है जापानी' गाने के बोल पर थिरकते रहे। हाल ही की फिल्म 'स्लमडॉग मिलिनियर' के गाने 'जय हो' ने तो ऑस्कर जीत कर हिन्दी की शान कहीं और बढ़ा दी।

15 अगस्त, 1947 को देश के आजाद होने पर लोगों के अरमान जागे, आकांक्षाएँ बढ़ीं। सोच बनी कि अन्य देशों की तरह हमारा भी अपना संविधान, अपना कानून, अपना ध्वज, अपना गीत और अपनी भाषा हो! संविधान और कानून तो खैर जरूरी थे, पर राष्ट्र की एक विशिष्ट पहचान भी उतनी ही जरूरी थी, जो राष्ट्रगान, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रभाषा से ही पूरी हो सकती थी। आजादी के लड़ाई के संघर्षपूर्ण दौर में हिन्दी या हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा का दर्जा तो खैर प्राप्त हो चुका था, अब उसे राजभाषा का दर्जा दिए जाने की जरूरत थी, परन्तु यह सवाल संविधान सभा में जैसे ही आया, मानो भूचाल आ गया। अन्ततः निदान यह निकला कि देश की राजभाषा तो नागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी ही हो, पर कुछ वर्षों तक वह अंग्रेजी का दामन थाम कर चले। संविधान निर्माताओं के इस एक फैसले ने हिन्दी को इतना कमजोर कर दिया कि आज भी उस पर अंग्रेजी का साया पसरा हुआ है।

ऐसा भी नहीं कि हमारी सरकार ने हिन्दी के विकास के लिए कोई काम न किया। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी शब्दावली आयोग आदि संस्थानों के साथ-साथ अनेक प्रादेशिक हिन्दी अकादमियों का गठन कर हिन्दी के संवर्धन के काम को बढ़ाया जाता रहा है। संसदीय राजभाषा समिति भी राज-काज में हिन्दी के प्रयोग पर नजर रखने के साथ ही उसके प्रयोग को प्रोत्साहित करती रही है, पर हिन्दी को सबसे बड़ी शक्ति मिली है बाजार से। अधिसंख्य लोगों की भाषा होने के कारण बाजार-तन्त्र इसी भाषा को अपने उत्पादों के प्रचार की भाषा बनाने को बाध्य होता रहा है। दूरदर्शन आदि माध्यमों के आने के बाद इसकी शक्ति में और भी इजाफा हुआ है। दरअसल, भारत में ज्ञान की वाचिक परम्परा रही है। पुस्तकें तो बहुत बाद में आईं। यहाँ लोग निरक्षर होते हुए भी ज्ञान के भण्डार कहे जा सकते हैं। सिनेमा और टेलीविजन जैसे माध्यमों ने अक्षर ज्ञान की इस अनिवार्यता को समाप्त कर आधुनिक सम्पर्क क्रान्ति से हिन्दी को जोड़ दिया है। इसका दूसरा असर यह हुआ कि लिपि से अलग होकर हिन्दी और उर्दू का फासला आप से आप कम हो गया। फलतः हिन्दी एक बेहद सशक्त भाषा के तौर पर उभर कर आई; एक ऐसी भाषा जिसके पीछे करोड़ों आम जनों का सम्बल है और जो बोलने-समझने वालों की संख्या की दृष्टि से आज विश्व में दूसरा स्थान रखती है।

निष्कर्ष–यद्यपि खड़ी बोली हिन्दी के प्रयोग के कुछ उदाहरण हमें प्राचीन हिन्दी साहित्य में मिल जाते हैं, पर यह निर्विवाद सत्य है कि खड़ी बोली ने आधुनिक काल में ही स्वस्थ स्वरूप ग्रहण किया है। खड़ी.बोली हिन्दी को अपना वर्तमान साहित्यिक रूप ग्रहण करने में कई सौ साल का समय लगा है। हम जानते हैं कि खड़ी बोली की विकास परम्परा ब्रजभाषा और अवधी आदि साहित्यिक भाषाओं से तो जुड़ी ही है, अन्य भारतीय भाषाओं से भी जुड़ी है। इस सन्दर्भ में उर्दू और दक्खिनी का नाम खासतौर से लिया जा सकता है। खड़ी बोली के स्वरूप ग्रहण में फोर्ट विलियम कॉलेज और भारतेन्दु मण्डल के रचनाकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में छायावाद के प्रारम्भ तक खड़ी बोली गद्य और पद्य का पूर्ण विकास हो चुका था। आज खड़ी बोली हिन्दी में पर्याप्त साहित्य सर्जन तो हो ही रहा है, यह मीडिया के लिए भी उत्कृष्ट भाषा बनी हुई है।

◆◆◆

(च) हिंदी भाषा के विविध रूप : संचार की भाषा

7. संचार भाषा के रूप में हिंदी भाषा का परिचय दीजिए।

उत्तर–संचार भाषा के रूप में हिंदी–भावों का संचार या संप्रेषण मुख्यतः भाषिक और भाषिकेतर, दो रूपों में होता है। भाषिक रूप मुख्यतः लिखित और उच्चरित दो रूपों में होता है। लिखित रूप लिपिबद्ध होने से स्थान और समय की दूरी पार कर लेता है। वर्तमान युग को कंप्यूटर या संचार का युग माना गया। संचार माध्यम से आज हम एक स्थान पर बैठे हुए विश्व के कोने-कोने की जानकारी पा लेते हैं। समाचार-पत्र, आकाशवाणी और दूरदर्शन संसार के प्रमुख संचार माध्यम हैं। इन वैज्ञानिक आधारों पर भाषा संचार का माध्यम बनती है। ऐसी भाषा को संचार भाषा की संज्ञा दी जाती है। हिंदी भारतवर्ष के अधिकांश लोगों द्वारा समझी और प्रयोग की जाने वाली भाषा है। इसका प्रयोग भारतवर्ष से बाहर गयाना, सूरीनाम, फिजी, ट्रिनीडाड, टुबैगो, कनाडा और अमेरिका आदि देशों में होता है।

विभिन्न संचार माध्यमों में हिंदी अभिव्यक्ति का साधन है। इलेक्ट्रानिक संचार माध्यमों का आधार पाकर हिंदी दिक्काल की सीमा पार कर वैश्विक धरातल को अपना चुकी है। संचार माध्यमों—आकाशवाणी, दूरदर्शन, दूरसंचार और कंप्यूटर में हिंदी के बढ़ते प्रयोग और प्रयुक्तियों को देख सकते हैं।

1. आकाशवाणी और हिंदी—श्रव्य संचार माध्यमों में आकाशवाणी सर्वाधिक लोकप्रिय है। हिंदी का प्रयोग भारतवर्ष के अतिरिक्त विदेश में भी किया जाता है। बी.बी.सी. लंदन से हिंदी का आकर्षक प्रयोग सुनाई देता है। ऐसी भाषा में उच्चारण की शुद्धता पर विशेष बल दिया जाता है। व्याकरण-सम्मत रूप होने के साथ बलाघात, विराम, मात्रा और आरोह-अवरोह पर विशेष ध्यान देना होता है। आकाशवाणी का समाचार पठन या प्रसारण जनसामान्य के लिए होता है। इसलिए विज्ञान, खेल-कूद, चिकित्सा, कृषि और स्वास्थ्य आदि सभी विषयों की भाषा यथासाध्य सरल रखी जाती है।

आकाशवाणी के माध्यम से हिंदी में वार्ता, परिसंवाद, नाटक और गीत आदि प्रस्तुत किए जाते हैं। आकाशवाणी के प्रारंभिक चरण में हिंदी की प्रस्तुति प्रायः ऐसी होती है-

"यह आकाशवाणी का ....केन्द्र है।
अब आप...................से समाचार सुनिए।"

2. दूरदर्शन और हिंदी—वर्तमान समय में दूरदर्शन सर्वाधिक लोकप्रिय दृश्य-श्रव्य माध्यम है। भारतवर्ष की अधिकांश जनसंख्या के द्वारा हिंदी का प्रयोग किया जाता है। उपभोक्ता संस्कृति के प्रसार-प्रचार के कारण दूरदर्शन पर हिंदी को गंभीरता से अपनाया जा रहा है। दूरदर्शन पर आने वाले हिंदी सीरियलों की प्रतिस्पर्धा हिंदी के महत्त्व को उजागर करती है। प्रचार-प्रसार की दृष्टि से विज्ञापन में हिंदी के बढ़ते प्रयोग से हिंदी का उज्ज्वल भविष्य सामने आ रहा है। दृश्य-श्रव्य माध्यम होने के कारण प्रयोक्ता को पर्याप्त अभ्यास करना होता है। दूरदर्शन की हिंदी भाषा की विविधता को विभिन्न चैनलों और उनके कार्यक्रमों में देख सकते हैं। सीरियलों में परिमार्जित, व्यंग्यप्रधान और खिचड़ी भाषा उनके प्रारूप के अनुसार मिलती है। विज्ञापनों की हिंदी का अपना ही रूप होता है। चलचित्र जगत के अदाकारों, मुख्यतः अभिनेत्रियों की अंग्रेजी मिश्रित हिंदी का अपना ही रूप होता है, यथा—"मैं चलूँगी बट जल्दी आ जाऊँगी।" दूरदर्शन कार्यक्रम के अन्त में 'अभिवादन', 'नमस्कार' आदि शब्दों का प्रयोग करना विशेष प्रभाव छोड़ता है।

3. दूरसंचार और हिंदी—दूरसंचार के माध्यमों में टेलीग्राम, टेलीफोन, फैक्स आदि विशेष उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। तार की भाषा की संरचना संक्षिप्तता लिए हुए होती है। हिंदी में तार देने से शुल्क कम लगता है और वाक्य के पदों को गिनकर शुल्क लिया जाता है। वाक्य के पद आधार पर शिरोरेखा लगाना अनिवार्य है; यथा- "तुम्हारे लिए दिल्ली से छतरी ले जा रहा है।" टेलीफोन आज लगभग सर्वसुलभ संचार माध्यम है।

4. कंप्यूटर-इंटरनेट और हिंदी—वर्तमान युग में कंप्यूटर मानव को प्रत्येक दिशा में गति देने वाला लोकप्रिय यंत्र है। कंप्यूटर पर हिंदी के सभी कार्य संभव हैं और हो रहे हैं। त्वरित गति से लेखन, छपाई के साथ सामग्री का स्थायी संसाधन संभव है। इंटरनेट पर दूर-देश से ई-मेल के माध्यम से समाचार आदान-प्रदान संभव हो गया है। इंटरनेट पर दूर-देश के पुस्तकालय की किसी भी पुस्तक की सामग्री उपलब्ध कर सकते हैं। चिकित्सा के लिए हर देश के डॉक्टर से सलाह ले सकते हैं। यह श्रेष्ठतम संचार माध्यम है।

◆◆◆

2

राजभाषा हिंदी

(क) राजभाषा : तात्पर्य और स्वरूप

1. राजभाषा से आप क्या समझते हैं? राजभाषा को परिभाषित करते हुए इसके स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

अथवा

राजभाषा हिंदी की विशेषताएं बताइए।

अथवा

राजभाषा के स्वरूप एवं क्षेत्र पर विचार करें।

उत्तर–राजभाषा किसी देश या राज्य की वह भाषा होती है जो सभी राजकीय प्रयोजनों में प्रयुक्त होती है। राजभाषा अर्थात राज-काज की भाषा, शासकीय काम-काज की भाषा। अतः प्रशासन की भाषा को राजभाषा का दर्जा दिया जाता है। साधारण शब्दों में कहा जाये तो 'राजभाषा' वह भाषा है जो सरकारी कार्यालयों में प्रयुक्त होती है तथा सम्पूर्ण शासन व्यवस्था इसमें अपने क्रियाकलाप करती है।

आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा के अनुसार, **"सरकार के शासन, विधान, कार्यपालिका और न्यायपालिका क्षेत्रों में जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसे राजभाषा कहते हैं। यही कार्यालयी भाषा भी कहलाती है।"**

अतः राजभाषा को शासक की भाषा के अर्थ में भी लिया जा सकता है। केंद्र की राजभाषा को संघभाषा भी कहा जाता है। प्रशासन तथा न्याय की भाषा होने के कारण सरकारी दृष्टि से राजभाषा का बहुत महत्व होता है। राजभाषा का प्रयोग मुख्य रूप से चार क्षेत्रों में किया जाता है–

1. शिक्षा क्षेत्र, 2. शासन, 3. न्यायपालिका , 4. जनसंचार।

राजभाषा का अर्थ एवं परिभाषाएँ–राजभाषा एक पारिभाषिक शब्द है जिसका अर्थ है–**"सरकारी कामकाज के लिए प्रयुक्त भाषा।"** हिंदी में 'राजभाषा' शब्द अंग्रेजी के **'ऑफिशियल लैंग्वेज' (Official Language)** के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता है। इस शब्द का प्रयोग क़ानूनी तौर पर स्वतंत्र भारत के संविधान में सर्वप्रथम किया गया। भारत की स्वतंत्रता और राष्ट्रीयता की रक्षा करने के जो अनेक साधन हैं उनमें राजभाषा की स्वीकृति प्रशासन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।

जिस भाषा के द्वारा केंद्र प्रशासन संबंधी कार्यभार संभाले और संचालन करे, वही राजभाषा है। आज जनतंत्रात्मक- समाजवादी व्यवस्था पर आधारित स्वतंत्र शासन का युग है, जहाँ सरकार, विधानमंडल और प्रशासन, सभी जनता के सेवक मात्र हैं। एक राजभाषा के द्वारा ही केंद्र प्रशासन का कार्य कर, समस्त जनता पर व्यापक प्रभाव डाल सकता है।

भारत के संविधान के अध्याय '17' के अनुच्छेद '343' के अनुसार, "संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में लिखी हिंदी होगी।" यहाँ संघ की राजभाषा से तात्पर्य संघ के विधानांग, कार्यांग तथा न्यायांग–इन तीन प्रमुख अंगों के कार्यकलाप में प्रयुक्त भाषा से है।

राजभाषा की परिभाषाएं–राजभाषा को विभिन्न विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषित किया है–

डॉ. हरिमोहन के अनुसार, **"राजभाषा का सीधा अर्थ है, जिस भाषा में राज-काज किया जाता है। केंद्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों के द्वारा पत्र-व्यवहार, राज कार्य और सरकारी लिखा-पढ़ी के कामों में इसी भाषा का व्यवहार किया जाता है।"**

कोशकार रामचन्द्र वर्मा के **'प्रामाणिक हिन्दी कोश'** के अनुसार, **"किसी देश में प्रचलित वह भाषा जिसका प्रयोग प्रायः सभी राजकीय कार्यों और न्यायालयों में होता है।"**

डॉ. श्याम सुंदर दास के **'हिंदी शब्द सागर'** के अनुसार, **"वह भाषा जो सरकारी कामकाज तथा न्यायालयों के लिए स्वीकृत हो।"**

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, **"राज्यभाषा, 'ऑफिशियल लैंग्वेज' अंग्रेजी में, ऐसी भाषा जिसका प्रयोग राज्य के कार्यों में होता है।"**

डॉ. संजीव जैन के अनुसार, **"राजभाषा वह भाषा है जिसका प्रयोग केंद्रीय अथवा प्रांतीय सरकारें अपने कार्य व्यापार तथा अन्य प्रदेशों के साथ सरकारी कामकाज या पत्र-व्यवहार के लिए करती हैं। यह भाषा देश के बहुसंख्यकों की भाषा होती है। देश के अन्य प्रांतों के लोग भी इसे समान्य रूप से समझते हैं।"**

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन के उपरांत कहा जा सकता है कि राजभाषा एक पारिभाषिक शब्द है। यह संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त एक ऐसी तकनीकी, लिखित एवं औपचारिक भाषा है जो 'रजिस्टर' के रूप में किसी देश की सरकार के विधानांग, कार्यांग एवं न्यायांग के कार्यान्वयन के लिए माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है।

राजभाषा हिन्दी--14 सितंबर, 1949 को भारतीय संविधान द्वारा हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान की गई। भारत का संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ और तभी से देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी विधिवत् भारत संघ की राजभाषा है। किसी भी स्वाधीन देश के लिए जो महत्व उसके राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का है, वही महत्व उसकी राजभाषा का है। भारतीय संविधान में धारा 343 से 351 तक हिन्दी राजभाषा संबंधी व्यवस्थाएं की गई हैं।

भारत की संविधान सभा का पहला अधिवेशन दिसम्बर, 1946 को शुरू हुआ। 4 जुलाई, 1947 को जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया उसमें जवाहर लाल नेहरू ने संघीय संसद में कार्यवाही की भाषा हिन्दी या उर्दू या अंग्रेजी रखने की बात कही।

संविधान सभा के प्रारम्भिक दिनों में मौलिक अधिकार संबंधी उप-समिति द्वारा गांधी जी के विचारों के अनुसार, निम्नलिखित सूत्र स्वीकृत किए गए–

"राष्ट्रभाषा के रूप में नागरिक की इच्छानुसार, देवनागरी या फारसी लिपि में लिखित हिन्दुस्तानी, संघ की प्रथम राजभाषा होगी। अंग्रेजी उस अवधि के लिए द्वितीय राजभाषा होगी, जिसका निर्णय संघ विधि द्वारा करेगा। संघ के सभी शासकीय अभिलेख दोनों लिपियों में, हिन्दुस्तानी तथा अंग्रेजी में भी तब तक रखे जाएंगे, जब तक संघ विधि द्वारा कोई दूसरा निर्णय न करे।"

19 अप्रैल, 1947 को डॉ. अम्बेडकर ने अपनी विमत टिप्पणी में यह मत प्रकट किया कि हिन्दुस्तानी न केवल संघ की बल्कि सभी इकाइयों की भाषा स्वीकृत की जाए।

सन् 1946 में संविधान सभा बनी जिसमें मुख्यतः राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। साथ ही मुस्लिम लीग तथा अन्य स्वतंत्र सदस्य भी थे। संविधान सभा की पहली बैठक दिनांक 9/12/1946 को हुई और दिनांक 11/12/1946 को बाबू राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में यह निर्णय सन् 1946 में ही ले लिया था कि राजभाषा 'हिन्दुस्तानी' या 'अंग्रेजी' होगी, पर कोई भी सदस्य अध्यक्ष की अनुमति से सदन में अपनी 'मातृभाषा' में भाषण दे सकेगा। 14 जुलाई, 1947 को संविधान सभा के चौथे सत्र के दूसरे दिन ही यह संशोधन प्रस्तुत किया गया था कि 'हिन्दुस्तानी' के स्थान पर 'हिन्दी' शब्द रखा जाएगा। इस विषय पर हुए मतदान में हिन्दी के पक्ष में 63 वोट थे और हिन्दुस्तानी के पक्ष में 32 और इसी प्रकार देवनागरी के संदर्भ में हुए मतदान के पक्ष में 63 तथा विपक्ष में 18 वोट पड़े। 10 नवंबर, 1948 की स्टीयरिंग कमेटी में यह निश्चय किया गया कि संविधान हिन्दी में भी तैयार होना चाहिए। फरवरी, 1948 में 'संविधान' का जो प्रारूप प्रस्तुत हुआ उसमें राजभाषा विधेयक की कोई धारा नहीं थी। मात्र इतना उल्लेख था कि संसद की भाषा अंग्रेजी या हिन्दी होगी।

इस विषय पर मुख्य बहस अगस्त से सितंबर, 1949 में हुई। हिन्दी से संबंधित एक प्रारूप समिति बना दी गई जिसमें सर्वश्री आयंगर, टी. ओ. कृष्णमाचारी अय्यर, श्री कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशी, डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर तथा राव थे। 16 अगस्त को प्रारूप कमेटी ने रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें 10 वर्ष तक अंग्रेजी के चलते रहने की व्यवस्था की गयी। बाद में 22 अगस्त को अंबेडकर जी ने नया फार्मूला रखा, जिसमें मुख्य बिंदु थे–

1. पंद्रह वर्ष की अवधि का प्रस्ताव, जिसको बाद में संसद बढ़ा सकती थी।
2. अंतर्राष्ट्रीय अंक।
3. उच्च न्यायालय में अंग्रेजी।
4. प्रादेशिक भाषाओं की सूची।
5. भाषा आयोग की व्यवस्था आदि।

डॉ. रघुवीर ने अंग्रेजी के बहिष्कार का सुझाव देते हुए कहा, **"मुझे डर है कि अगले पंद्रह वर्षों में इस देश में अंग्रेजी प्रभाव की जड़ उससे दुगनी मजबूत हो जाएगी, जितनी अपने डेढ़ सौ वर्षों के शासनकाल में अंग्रेजों ने कायम की थी।"**

मुख्य बहस 12 से 14 सितंबर तक चली। मुंशी आयंगर के फार्मूले के नाम से विख्यात अनुच्छेद 343-351 तक है तथा साथ में संविधान के परिशिष्ट में दी गई अष्टम अनुसूची भी है।

14 सितंबर, 1949 का दिन भाषा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण और 'युग प्रवर्तक' दिवस माना जाना चहिए। इसी दिन संविधान सभा ने एकमत से हिन्दी को भारतीय संघराज्य की राज्यभाषा के रूप में स्वीकृत किया। बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन ही वह व्यक्ति थे, जिन्होंने इस विषय में सबसे अधिक लग्न से काम किया ।

राजभाषा हिन्दी : महत्त्वपूर्ण तथ्य

1. अशोक के समय में 'पालि' राजभाषा थी।
2. मुहम्मद गौरी से लेकर अकबर के समय तक हिन्दी और फारसी राजभाषा थी।
3. ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1833 ई तक फारसी को राजभाषा बनाए रखा।
4. ब्रिटिश शासन में लार्ड मैकाले के प्रयास से अंग्रेजी राजभाषा के पद पर सुशोभित हुई।
5. पं. मदन मोहन मालवीय के प्रयत्नों से सन 1901 में संयुक्त प्रांत की कचहरी की भाषा के रूप में हिन्दी को उ[illegible] के समान अधिकार मिला।
6. संविधान सभा में हिन्दी को राजभाषा बनाने का अंतिम निर्णय गोपालस्वामी आयंगर का स्वीकार किया गया।
7. अनुच्छेद 343-351 तक राजभाषा संबंधी प्रावधान संविधान के 17 वें भाग में किए गए हैं।
8. संविधान की 8वीं अनुसूची में 22 भाषाएं सम्मिलित हैं।
9. संविधान के अनुच्छेद 351 में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देशों का उल्लेख है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि राजभाषा हिन्दी का स्वरूप अत्यंत व्यापक है। यह राजनीतिक महत्त्व की भाषा है, राष्ट्रीय समस्याओं और बौद्धिक स्तर को सुलझाने में सक्षम है। यह सरकारी कामकाज की भाषा के साथ-साथ जनसामान्य के बीच, शिक्षित-अशिक्षित सभी वर्गों में परस्पर व्यवहार का माध्यम हुआ करती है।

राजभाषा हिन्दी की विशेषताएँ–राजभाषा हिन्दी की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. साहित्यिक हिन्दी में जहाँ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के माध्यम से अभिव्यक्ति की जाती है, राजभाषा हिन्दी में केवल अभिधा का ही प्रयोग होता है।
2. साहित्यिक हिन्दी में एकाधिकार्थता, चाहे शब्द के स्तर पर हो या वाक्य के स्तर पर, काव्य-सौन्दर्य के अनुकूल मानी जाती है। इसके विपरीत, राजभाषा हिन्दी में सदैव एकार्थता ही काम्य होती है।
3. राजभाषा अपने पारिभाषिक शब्दों में भी हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों से पूर्णतः भिन्न है। इसके अधिकांश शब्द प्रायः कार्यालयी प्रयोगों के लिए ही उसके अपने अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जैसे–

आयुक्त	=	Commissioner
निविदा	=	Tender
विवाचक	=	Arbitrator
आयोग	=	Commission
प्रशासकीय	=	Administrative
मन्त्रालय	=	Ministry
उन्मूलन	=	Abolition
आवंटन	=	Allotment आदि।

4. हिन्दी में सामान्यतः समस्रोतीय घटकों से ही शब्दों की रचना होती है। जैसे—संस्कृत शब्द 'निर्धन' + संस्कृत भाववाचक संज्ञा प्रत्यय 'ता' = निर्धनता। किन्तु अरबी-फारसी शब्द 'गरीब' + अरबी-फारसी भाववाचक संज्ञा प्रत्यय 'ई' = गरीबी। हिन्दी में न तो निर्धन + ई = निर्धनी बनेगा और न ही गरीब + ता = गरीबता। लेकिन राजभाषा में काफी सारे शब्द विषम स्रोतीय घटकों से बने हैं। जैसे—

उपकिरायेदार	=	Sub-letting
जिलाधीश	=	Collector
उपजिला	=	Sub-district
अरद्द	=	uncancelled
अस्टांपित	=	unstamped
अपंजीकृत	=	unregistered
मुद्राबन्द	=	sealed
राशन-अधिकारी	=	ration-officer... आदि।

अंग्रेजी, फ्रांसीसी, चीनी, रूसी आदि समृद्ध भाषाओं में एक ही शैली मिलती है, पर राजभाषा हिन्दी में एक ही शब्द के लिए कई शब्द हैं। जैसे—

(i) कार्यालय – दफ़्तर – ऑफिस

(ii) न्यायालय – अदालत – कोर्ट – कचहरी

(iii) शपथ-पत्र – हलफनामा – एफिडेविट

(iv) विवाह – शादी – निकाह आदि।

5. राजभाषा हिन्दी का प्रयोग राजतन्त्र का कोई व्यक्ति करता है जो प्रयोग के समय व्यक्ति न होकर तंत्र का एक अंग होता है। इसलिए वह वैयक्तिक रूप से कुछ न कहकर निर्वैयक्तिक रूप से कहता है। यही कारण है कि हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों में जबकी कर्तृवाच्य की प्रधानता होती है, राजभाषा हिन्दी के कार्यालयी रूप में कर्मवाच्य की प्रधानता होती है। उसमें कथन व्यक्ति-सापेक्ष न होकर व्यक्ति-निरपेक्ष होता है। जैसे—'सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है', 'कार्यवाही की जाए', 'स्वीकृति दी जा सकती है' आदि।

राजभाषा : स्वरूप एवं क्षेत्र—स्वतंत्रता पूर्व ब्रिटिश शासन काल में समस्त राजकाज अंग्रेजी में होता था। सन् 1947 में स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात् महसूस किया गया कि स्वतंत्र भारत देश की अपनी राजभाषा होनी चाहिए। एक ऐसी राजभाषा जिससे प्रशासनिक तौर पर पूरा देश जुड़ा रह सके। भारतवर्ष के विचारों की अभिव्यक्ति करनेवाली सम्पर्क भाषा 'हिन्दी' को 'राजभाषा' के रूप में स्वतंत्र भारत के संविधान में 14 सितम्बर, 1949 को राजभाषा समिति ने मान्यता दी। संविधान सभा में भारतीय संविधान के अन्तर्गत हिन्दी को राजभाषा घोषित करने का प्रस्ताव दक्षिण भारतीय नेता गोपालस्वामी आयंगर ने रखा था। इससे हिन्दी को देश की संस्कृति, सभ्यता, एकता तथा जनता की समसामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली भाषा के रूप में भारतीय संविधान ने देखा। 26 जनवरी, 1950 से संविधान लागू हुआ और हिन्दी को राजभाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता मिली।

हमारे संविधान में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किए जाने के साथ हिन्दी का परम्परागत अर्थ, स्वरूप तथा व्यवहार क्षेत्र व्यापकतर हो गया। हिन्दी के जिस रूप को राजभाषा स्वीकार किया गया है, वह वस्तुतः खड़ीबोली हिन्दी का परिनिष्ठित रूप है। जहाँ तक राजभाषा के स्वरूप का प्रश्न है, इसके सम्बन्ध में संविधान में कहा गया है कि इसकी शब्दावली मूलतः संस्कृत से ली जाएगी और गौणतः सभी भारतीय भाषाओं सहित विदेश की भाषाओं के भी प्रचलित शब्दों को अंगीकार किया जा सकता है। राजभाषा शब्दावली (जैसे— अधिसूचना, निदेश, अधिनियम, आकस्मिक अवकाश, अनुदान आदि) को देखकर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी एक अलग प्रयुक्ति (register) है। शब्द निर्माण के सम्बन्ध में राजभाषा के नियम बहुत ही लचीले हैं। यहाँ किन्हीं भी दो या दो से अधिक भाषाओं के शब्दों की संधि आराम से की जा सकती है, जैसे—'उप जिला मजिस्ट्रेट', 'रेलगाड़ी' आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि राजभाषा के अन्तर्गत शब्द निर्माण के नियम बहुत ही लचीले हैं।

राजभाषा का सम्बन्ध प्रशासनिक कार्य प्रणाली के संचालन से होने के कारण उसका सम्पर्क बुद्धिजीवियों, प्रशासकों, सरकारी कर्मचारियों तथा प्रायः शिक्षित समाज से होता है। स्पष्ट है कि राजभाषा जनमानस की भावनाओं, सपनों, चिन्तनों से सीधे-सीधे न जुड़कर एक अनौपचारिक माध्यम रूप में प्रशासन तथा प्रशासित के बीच सेतु का काम करती है। बावजूद इसके, सरकार की नीतियों को जनता तक पहुँचाने का यह एकमात्र माध्यम है। साधारण जनता में प्रशासन के प्रति आस्था उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रशासन का सारा कामकाज जनता की भाषा में हो जिससे प्रशासन और जनता के बीच की खाई को पाटा जा सके। यह राजभाषा हिन्दी सरकारी कार्यालयों में प्रयुक्त होकर 'कार्यालयी हिन्दी', 'सरकारी हिन्दी, 'प्रशासनिक हिन्दी' के नाम से हिन्दी के एक नए स्वरूप को रेखांकित करती है। राजभाषा का प्रयोग सरकारी पत्र व्यवहार, प्रशासन, न्याय-व्यवस्था तथा सार्वजनिक कार्यों के लिए किया जाता है जिसमें पारिभाषिक शब्दावली का बहुतायत प्रयोग किया जाता है। अधिकतर मामलों में अनुवाद का सहारा लिये जाने के कारण यह कार्यालयी हिन्दी अपनी प्रकृति में निहायत ही शुष्क, अनौपचारिक तथा सूचना प्रधान होती है। जहाँ तक 'राजभाषा हिन्दी' के क्षेत्र का प्रश्न है, इसके प्रयोग के तीन क्षेत्र हैं–1. विधायिका, 2. कार्यपालिका और 3. न्यायपालिका। ये राष्ट्र के प्रशासन के तीन प्रमुख अंग हैं।

राजभाषा का प्रयोग इन्हीं तीन प्रशासन के अंगों में होता है। विधायिका क्षेत्र के अन्तर्गत आनेवाले संसद के दोनों सदन और राज्य विधानमंडल के दो सदन आते हैं। कोई भी सांसद/विधायक हिन्दी या अंग्रेजी या प्रादेशिक भाषा में विचार व्यक्त कर सकता है, परन्तु संसद में कार्य हिन्दी या अंग्रेजी में ही किया जाना प्रस्तावित है। कार्यपालिका क्षेत्र के अंतर्गत मंत्रालय, विभाग, समस्त सरकारी कार्यालय, स्वायत्त संस्थाएँ, उपक्रम, कम्पनी आदि आते हैं। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी भाषा का अधिकाधिक प्रयोग प्रस्तावित है जबकि राज्य स्तर पर वहाँ की राजभाषाएँ इस्तेमाल होती हैं। न्यायपालिका में राजभाषा का प्रयोग मुख्यतः दो क्षेत्रों में किया जाता है–कानून और उसके अनुरूप की जाने वाली कार्यवाही अर्थात् कानून, नियम, अध्यादेश, आदेश, विनियम, उपविधियाँ आदि और उनके आधार पर किसी मामले में की गई कार्रवाई और निर्णय आदि। राजभाषा के कार्य क्षेत्रों को अधिक स्पष्ट करते हुए आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा ने 'राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ एवं समाधान' में लिखा है–"राजभाषा का प्रयोग मुख्यतः चार क्षेत्रों में अभिप्रेत है–शासन, विधान, न्यायपालिका और कार्यपालिका। इन चारों में जिस भाषा का प्रयोग हो, उसे राजभाषा कहेंगे। राजभाषा का यही अभिप्राय और उपयोग है।"

◆◆◆

2. राजभाषा हिन्दी की व्यावहारिक कठिनाइयों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–राजभाषा हिंदी की व्यावहारिक कठिनाइयाँ–इसमें दो मत नहीं हो सकते कि स्वतंत्रता प्राप्ति के छह दशकों के बाद भी सरकारी कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग केवल नाममात्र का होता है। समय-समय पर हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए सरकारी आदेश भी जारी होते रहते हैं। लेकिन जो लोग अंग्रेजी में काम करने के अभ्यस्त हो चुके हैं, वे उन आदेशों की अवहेलना करते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि आज भी हमारे मन में अंग्रेजी भाषा के प्रति आकर्षण बना हुआ है। राजभाषा हिंदी के मार्ग में निम्नलिखित बाधाएँ उल्लेखनीय हैं–

(1) पारिभाषिक शब्दावली की समस्या–हिंदी के प्रयोग में सबसे बड़ी बाधा पारिभाषिक शब्दावली की है। हमारे पास किसी एक अंग्रेजी शब्द के लिए अनेक पारिभाषिक शब्द हैं। विशेषकर विज्ञान, तकनीकी और कानून से संबंधित किसी शब्द विशेष के लिए एक से अधिक समानार्थी शब्द उपलब्ध हो जाते हैं। उदाहरण के रूप में–एटम के लिए 'अणु', 'परमाणु' और 'नाभिक' तीन शब्द प्रचलित हैं। इसी प्रकार इंस्पेक्टर को कोई अधीक्षक कहता है, कोई निरीक्षक और कोई पर्यवेक्षक कहता है। पारिभाषिक शब्दों में एकरूपता न होने के कारण राजभाषा हिंदी में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो चुकी है। भले ही भारत के शिक्षा मंत्रालय द्वारा एक पारिभाषिक शब्दावली को तैयार किया गया था, परंतु अब अलग-अलग राज्य पारिभाषिक शब्द बना रहे हैं, फलस्वरूप पिछले कुछ वर्षों में हिंदी में आवश्यकता से अधिक पारिभाषिक शब्द तैयार हो चुके हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि पारिभाषिक शब्दों का एक प्रामाणिक शब्दकोष तैयार किया जाना चाहिए ताकि एक ही पारिभाषिक शब्द का प्रयोग हो सके। साथ ही जिन विषयों के लिए हिंदी में पारिभाषिक शब्दों की कमी है, उनके लिए सरल पारिभाषिक शब्द बनाए जाने चाहिए।

(2) अनुवाद की समस्या–स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सभी सरकारी काम अंग्रेजी भाषा में ही हो रहे थे। जब हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया तब मौलिक रूप से हिंदी में काम करने की बजाए अंग्रेजी से अनुवाद करने की प्रथा चल निकली।

जहाँ तक भाषा की प्रकृति और आकृति का प्रश्न है, हिंदी और अंग्रेजी में जमीन-आसमान का अंतर है। यही कारण है कि अनूदित वाक्यों में स्वाभाविकता नहीं होती। अनुवादक पहले तो अंग्रेजी में सोचते हैं और बाद में हिंदी में उसका अनुवाद करते हैं। जबकि होना यह चाहिए कि अनुवादक को केवल हिंदी में सोचना चाहिए और सरल वाक्यों में छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए। दूसरा, वही व्यक्ति अनुवादक होना चाहिए, जिसका अंग्रेजी तथा हिंदी दोनों भाषाओं पर पूर्ण अधिकार हो।

(3) टंकण सम्बंधी समस्या–पिछले कुछ सालों से सरकारी कार्यालयों में टाइपराइटर का अधिक प्रयोग होने लगा है। टाइपिस्ट के बिना न तो सरकारी कामकाज हो सकता है और न ही गैर-सरकारी। दूसरा, हिंदी की अपेक्षा अंग्रेजी का टंकण सरल व सुगम है। कारण यह है कि अंग्रेजी में न तो मात्राएँ लगती हैं और न ही संयुक्त अक्षर होते हैं। अंग्रेजी टंकण में कुल 52 टाइप होते हैं। जबकि हिंदी में लगभग 450 टाइप काम में लाने पड़ते हैं। हिंदी टाइप में न केवल समय अधिक लगता है बल्कि कागज भी अधिक लगता है। दूसरा, हिंदी टाइपराइटरों के कुंजी पटलों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है जिससे टाइप करने वाला व्यक्ति ठीक से टाइप नहीं कर पाता। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी के वर्णों में वैज्ञानिक दृष्टि से कुछ परिवर्तन किया जाना चाहिए। साथ ही टाइपराइटरों के कुंजीपटल का एक मानक रूप तैयार होना चाहिए। हिंदी टंकण का स्वरूप अगर सरल बन जाएगा तो निश्चय से टंकण की समस्या कुछ हद तक दूर हो जाएगी।

(4) समानार्थक शब्दों की समस्या–किसी भी भाषा के प्रत्येक शब्द का पर्याय दूसरी भाषा में नहीं मिल सकता। उदाहरण के रूप में, हिंदी में यज्ञ, तपस्या, श्रद्धा, भक्ति, मनोविकार आदि शब्दों के उचित पर्यायवाची अंग्रेजी भाषा में नहीं मिल सकते। इसी प्रकार अंग्रेजी के कोट, ओवरकोट, टाई आदि के समानार्थी शब्द हिंदी में नहीं मिल सकते। इस समस्या का समाधान करने के लिए ऐसे शब्दों को राजभाषा हिंदी में ज्यों-का-त्यों लिखना पड़ेगा, ताकि हिंदी के शब्द भंडार में वृद्धि हो।

(5) वर्तनी की समस्या–हिंदी भाषा में वर्तनी की सबसे बड़ी समस्या है। कुछ वर्णों में एकरूपता न होने के कारण पाठक भ्रम में पड़ जाता है। हिंदी में दो प्रकार के अ (अ, ग्र), दो प्रकार के झ (झ, भ्क), दो प्रकार के ण (ण, रा), दो प्रकार भ (भ, भ) और दो प्रकार के ध (ध, **ध**) हैं। इसी प्रकार मात्राओं को लेकर भी बड़ी भारी गड़बड़ी है। इससे हिंदी सीखने वालों को कठिनाई आती है। परंतु अब मानक वर्तनी में इस समस्या का हल निकाल लिया गया है। परंतु मानक वर्तनी के प्रयुक्त होने में काफी समय लगेगा।

(6) तत्सम शब्दों के प्रति मोह–कुछ विद्वान संस्कृत को हिंदी की जननी मानते हैं। इसलिए उनका आग्रह है कि हिंदी में तत्सम प्रधान शब्दावली का अधिक प्रयोग किया जाए। लेकिन वे इस बात को भूल जाते हैं कि हिंदी आज के वैज्ञानिक युग की भाषा है। साथ ही, हम इस भाषा को पूरे राष्ट्र की भाषा के रूप में देखना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में यदि तत्सम प्रधान शब्दों का अधिक प्रयोग किया जाएगा तो यह भाषा दुरूह तथा आग्रह बन जाएगी जिससे हमें बचने का प्रयास करना चाहिए। हिंदी भाषा जितनी सहज-सरल होगी, उतनी ही लोकप्रिय होगी। संस्कृतनिष्ठ भाषा के विद्वानों ने हिंदी के विकास में बाधा का ही काम किया है। ऐसे लोग हिंदी से अरबी, फारसी, अंग्रेजी तथा उर्दू के शब्दों को बाहर निकालने के पक्षधर रहे हैं जो कि सर्वथा अनुचित है, क्योंकि ऐसा करने से हिंदी भाषा साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता तथा राजनीति की शिकार बनती रही है। हिन्दी भाषा को सहज एवं सरल बनाने के लिए दुरूह शब्दों का कम-से-कम प्रयोग करना चाहिए। इस संदर्भ में भारत सरकार के राजभाषा विभाग ने 17 मार्च, 1976 को सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग के बारे में ज्ञापन देते हुए कहा था– **"सरकारी काम-काज में इस्तेमाल की जाने वाली हिंदी सरल व सुबोध होनी चाहिए, जटिल व बोझिल नहीं।"** इस ज्ञापन के मद्देनजर राजभाषा हिंदी के समुचित प्रचार-प्रसार के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि हम केवल इस प्रकार की हिंदी भाषा का प्रयोग करें जिसे पढ़ने वाला समझ सके। उसे पता चल जाए कि लिखने वाले का उद्देश्य क्या है। हमें इस बात को भी याद रखना चाहिए कि हम हिंदी को देशभर की संपर्क भाषा बनाना चाहते हैं, न कि क्षेत्र या सम्प्रदाय की।

◆◆◆

3. राजभाषा को परिभाषित करते हुए राजभाषा हिंदी की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिए।

अथवा

राजभाषा के रूप में हिंदी के विकास का वर्णन कीजिए।

उत्तर–राजभाषा का अर्थ एवं स्वरूप – राष्ट्र द्वारा अपने दैनिक काम-काज में अपनाई जाने वाली भाषा को राष्ट्रभाषा कहते हैं, परंतु राजकीय कार्यों में सरकार जिस भाषा का प्रयोग करती है, उसे राजभाषा कहते हैं। एक विद्वान आलोचक के शब्दों में,

"राजभाषा वह भाषा होती है जिसे प्रशासनिक कार्यों के लिए या राजकार्य के लिए शासन तंत्र के विभिन्न मंत्रालय, विभाग, कार्यालय, न्यायालय या संसद आदि प्रयुक्त करते हैं। यह आवश्यक नहीं कि राष्ट्रभाषा ही राजभाषा हो।" अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि– **"देश की राजकीय व्यवस्था के राज-काज को चलाने के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसे राजभाषा कहते हैं।"**

हमारे देश में समय-समय पर अलग-अलग भाषाएँ राजभाषा के रूप में काम करती रही हैं। उदाहरण के रूप में, सम्राट अशोक से पहले संस्कृत भाषा में राज-काज चलता था। अशोक ने पालि को राजभाषा का दर्जा दिया। मुगलकाल में फारसी राजभाषा थी। अतः हम कह सकते हैं कि राजभाषा के द्वारा ही सभी प्रशासनिक कार्य किए जाते हैं। यूनेस्को के विशेषज्ञों के अनुसार, **"उस भाषा को राजभाषा कहा जाता है जो सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में स्वीकार की गई हो तथा जनता के बीच आपसी संपर्क के काम आती हो।"** सत्य तो यह है कि जब से प्रशासन की परंपरा चली, तब से राजभाषा का प्रयोग किया जाने लगा। राजभाषा को परिभाषित करते हुए **डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना** ने लिखा है–**"जो भाषा किसी राज्य के सरकारी कार्यों में सर्वाधिक प्रयुक्त होती है, उसे 'राजभाषा' कहते हैं। 'राजभाषा' में केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकारें अपने पत्र-व्यवहार किया करती हैं। सरकारी आदेश एवं आज्ञाएँ भी इसी भाषा में मुद्रित होते हैं और केंद्र एवं प्रदेशों के मध्य संपर्क स्थापित करने का कार्य भी इसी भाषा के द्वारा होता है। राजभाषा सदैव देश में शासनात्मक राज्य की स्थापना में बड़ी सहायता पहुँचाती है।"**

ब्रिटिश शासनकाल में पहले तो फारसी को ही राजभाषा के रूप में अपनाया गया, परंतु सन् 1855 ई. में **लॉर्ड मैकाले** ने अंग्रेजी को भारत की शिक्षा तथा प्रशासन की भाषा बनाया। आगे चलकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध जिन नेताओं ने स्वतंत्रता आंदोलन चलाया, वे सभी हिंदी भाषा के पक्षधर थे। 15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हुआ। तब से हिंदी को राजभाषा बनाने के प्रयास आरंभ हो गए। परंतु जब पूरे देश को एक सूत्र में बाँधने के लिए हिंदी को राजभाषा के रूप में अपनाने का समय आया तो कुछ अहिंदी भाषी नेताओं ने हिंदी का विरोध करना शुरु कर दिया। उनके मन में इस बात का भय था कि अगर हिंदी राजभाषा बन गई तो हिंदी भाषी लोग ही देश के उच्च पदों पर नियुक्त हो जाएँगे जिससे अहिंदी भाषी लोग पिछड़ जाएँगे। यहाँ तक कि संविधान सभा के सामने भी यह एक समस्या चुनौती बनकर उपस्थित हो गई। लंबे काल तक विचार-विमर्श होता रहा और हिंदी को लेकर अहिंदी भाषी आरोप लगाते रहे।

राजभाषा के रूप में हिंदी की घोषणा–अन्ततः 14 सितंबर, 1949 को संविधान में हिंदी राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई और 26 जनवरी, 1950 को यह भारत की राजभाषा बन गई। राजभाषा के बारे में गाँधी जी ने कुछ शर्तें रखी थीं जो इस प्रकार हैं–

(i) राजभाषा वही भाषा हो सकती है जिसे सरकारी अधिकारी आसानी से सीख सकें।

(ii) ऐसी राजभाषा संपूर्ण देश में राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक संपर्क का माध्यम होनी चाहिए।

(iii) ऐसी भाषा अधिकांश व्यक्तियों द्वारा बोली जाती हो।

(iv) संपूर्ण देश को उसे सीखने में आसानी होनी चाहिए।

(v) ऐसी भाषा का चयन करते समय संकुचित हितों की अवहेलना की जानी चाहिए।

15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले ब्रिटिश सरकार ने भारत के लिए संविधान बनाने के लिए स्थायी अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में एक संविधान सभा का गठन किया और इस संविधान सभा ने अपने कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए अनेक समितियों की स्थापना की, जिनमें **'प्रारूप समिति'** सबसे प्रमुख थी। इस समिति ने 21 जनवरी, 1948 को संविधान का प्रारूप तैयार किया जिस पर नवंबर, 1948 को संविधान सभा में विचार-विमर्श हुआ तथा 26 नवंबर, 1949 को यह प्रारूप संविधान द्वारा पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया गया। 20 जनवरी, 1950 को यह संविधान भारत में लागू कर दिया गया। इसी संविधान सभा में राजभाषा का भी प्रश्न उठा।

11 दिसंबर से लेकर 14 दिसंबर, 1949 तक संविधान सभा में राजभाषा को लेकर काफी वाद-विवाद हुआ। कुछ नेता गाँधी जी की स्मृति को स्थिर रखने के लिए आम बोलचाल की भाषा हिन्दुस्तानी को राजभाषा बनाने के पक्षधर थे, जबकि अधिकांश हिंदी भाषी नेता हिंदी को राजभाषा बनाने के पक्षधर थे। इसी प्रकार अंकों के रूप पर भी वाद-विवाद था। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, सेठ गोविंद दास आदि जैसे नेता देवनागरी अंकों के प्रबल समर्थक थे जबकि जवाहरलाल नेहरू समेत कुछ अन्य नेता रोमन अंकों का समर्थन कर रहे थे। फलतः पर्याप्त वाद-विवाद के बाद 'प्रारूप' में कुछ संशोधनों के पश्चात् राजभाषा के रूप में हिंदी को निम्नलिखित भागों व अनुच्छेदों के अंतर्गत लिया गया–

(1) भारतीय संविधान के भाग 2, अनुच्छेद 120 में संसद की भाषा का प्रावधान है।

(2) भारतीय संविधान के भाग 6, अनुच्छेद 210 में राज्य की विधानसभाओं के भाषा सम्बंधी निर्देश हैं।

(3) हिंदी के दृष्टिकोण से सबसे महत्त्वपूर्ण भाग 17 के चार अध्यायों में वर्णित अनुच्छेद 343, 344 (प्रथम अध्याय), 345, 346, 347 (दूसरा अध्याय), 348, 349 (तीसरा अध्याय), 350, 351 (चौथा अध्याय) में राजभाषा के रूप में हिंदी के विकास आदि का प्रावधान है।

संघ की राजभाषा विषयक व्यवस्था की विवेचना–संघ की राजभाषा के बारे में संविधान के अनुच्छेद 343 में यह कहा गया है कि संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी होगी। साथ ही अंकों के बारे में यह कहा गया है कि राजकाज में प्रयुक्त होने वाले अंकों का रूप अंतरराष्ट्रीय रूप होगा। यह व्यवस्था लागू करते समय संविधान निर्माताओं के मन में यह विचार था कि यह व्यवस्था अचानक लागू नहीं की जा सकती, क्योंकि भारत के अहिंदी भाषी क्षेत्रों में लोग न तो देवनागरी लिपि में हिंदी को जानते हैं और न ही हिंदी अंकों को जानते हैं। उन्हें यह सब सीखने के लिए कुछ समय लग जाएगा। इसलिए यह निर्णय लिया गया कि राजकाज में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग उस समय तक होता रहे जब तक पूरा देश देवनागरी लिपि में हिन्दी तथा हिन्दी के अंकों को जान नहीं लेता। इसलिए अनुच्छेद 343 में यह भी कहा गया, **"संविधान के लागू होने से 15 वर्ष तक संघ के उन सभी राजकार्यों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग होता रहेगा, जिनमें उसका प्रयोग संविधान के लागू होने से पहले होता रहा था।"** वस्तुतः संविधान निर्माता यह चाहते थे कि हिंदी का प्रयोग लगातार बढ़ता रहे और एक ऐसा समय आ जाए जब विदेशी भाषा अंग्रेजी का प्रयोग बंद कर दिया जाए और हिंदी का प्रयोग लागू कर दिया जाए। इसलिए अनुच्छेद 343 में यह भी कहा गया– **"उक्त 15 वर्ष के समय में भी राष्ट्रपति अपनी आज्ञा द्वारा संघ के किसी राजकार्य के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा तथा हिंदी अंकों के प्रयोग को अधिकृत कर सकता है।"**

इस व्यवस्था के साथ-साथ यह भी सोचा गया कि संभव है कि 15 वर्ष के बाद भी कुछ लोग हिंदी में कार्य करने की योग्यता न प्राप्त कर सकें और उन्हें अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग करना पड़े। इसलिए संविधान ने यह व्यवस्था भी की– **"उक्त व्यवस्था के होते हुए भी संसद उक्त 15 वर्ष की अवधि के बाद विधि द्वारा उन कार्यों के लिए, जिनका उल्लेख उस विधि में किया जाए, अंग्रेजी भाषा या देवनागरी अंकों के रूप के प्रयोग को अधिकृत कर सकती है।"**

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी को राजभाषा बनाने की यह व्यवस्था काफी लचीली है। संविधान निर्माता यह दिखाना चाहते थे कि अहिंदी भाषी लोगों को यह अनुभव न हो कि हिंदी को उन पर थोपने का प्रयास किया जा रहा है। यही कारण है कि हिंदी को राजभाषा का स्थान देने के साथ-साथ पंद्रह वर्ष तक अंग्रेजी को भी साथ-साथ चलने का अवसर प्रदान किया गया। आगे यह भी प्रावधान रखा गया कि पंद्रह वर्ष की काल सीमा के बाद हिंदी के पूरी तरह चालू होने के बाद भी संसद अंग्रेजी के प्रयोग को अधिकृत करने का कानून बना सकती है। यही कारण है कि पंद्रह वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद दक्षिण के कुछ क्षेत्रों से हिंदी को लागू किए जाने का विरोध होने लगा और अंग्रेजी के प्रयोग को चालू रखने की मांग बढ़ने लगी। फलस्वरूप संसद ने राजभाषा अधिनियम, 1963 पारित करके हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी के प्रयोग को पहले 15 वर्षों के लिए और फिर राजभाषा संशोधन अधिनियम, 1967 पारित करके उसके बाद उस समय तक के लिए अंग्रेजी के प्रयोग को अधिकृत कर दिया, जब तक अहिंदी भाषी राज्य ऐसा चाहें।

फिर भी हिंदी को राजकार्य के व्यवहार की भाषा बनाने के प्रयास चलते रहे। संविधान के अनुच्छेद 344 में यह प्रावधान किया गया कि संविधान लागू होने के 5 वर्ष की समाप्ति पर और उसके बाद की 10 वर्ष की समाप्ति पर राष्ट्रपति 1 अध्यक्ष तथा 13 प्रादेशिक भाषाओं के प्रतिनिधियों के आयोग को नियुक्त करेगा जो राजकार्य में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने तथा अंग्रेजी के प्रयोग को घटाने में अपनी सिफारिशें देगा। आयोग के अतिरिक्त आनुपातिक प्रतिनिधित्व के अनुसार लोक सभा के सदस्यों तथा राजभाषा के 10 सदस्यों की एक समिति के निर्माण का प्रावधान किया गया जो समय-समय पर राष्ट्रपति को सिफारिश करता रहेगा, जिसके फलस्वरूप हिंदी के शब्द-भंडार को इस प्रकार बढ़ाने की कोशिश की जाएगी ताकि यह भाषा राजकार्य के लिए सक्षम हो सके।

आज स्थिति यह है कि अनुच्छेद 346 के बाद अनुच्छेद 345, अनुच्छेद 346, अनुच्छेद 347, अनुच्छेद 348, अनुच्छेद 349, अनुच्छेद 350 और 351 आदि द्वारा हिंदी को राजभाषा बनाने और उसे विकसित करने के अनेक प्रावधान रखे गए। परंतु वस्तुस्थिति यह है कि आज भी राजभाषा के रूप में हिंदी की स्थिति अस्थिर है, क्योंकि सरकारी कार्यालयों में अब भी हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा का भी अबोध प्रयोग हो रहा है। इस संदर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णयों का उल्लेख करना आवश्यक होगा–

1. राजभाषा आयोग (1955)–भारतीय संविधान के अनुच्छेद 344 के अनुसार संविधान प्रारंभ होने के पाँच वर्ष पश्चा एक राजभाषा आयोग का गठन 7 जून, 1955 को किया गया जिसके अध्यक्ष श्री बाल गंगाधर खेर थे। इस आयोग ने स 1956 में 20 सूत्रीय सुझावों को राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसमें प्रमुख सुझाव इस प्रकार थे–

(1) 14 वर्ष की उम्र तक के विद्यार्थी को हिंदी का शिक्षण अनिवार्य कर दिया जाये। हिन्दी भाषी क्षेत्रों के विद्यार्थियों लिए दूसरी दक्षिण भारतीय भाषा को अनिवार्य किया जाना आयोग को मान्य नहीं है।

(2) प्रशासनिक कर्मचारी के लिए हिंदी का निश्चित अवधि में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए नियम लागू किये जा और ऐसा न करने वाले कर्मचारियों को दंडित किया जाये।

(3) राज्य और संघ सरकार के अधिकारियों के लिए किसी स्तर का हिंदी का ज्ञान अनिवार्य किया जाये।

संसदीय राजभाषा समिति (1957)–अनुच्छेद 344 के खण्ड (4) और (5) के अनुसार राष्ट्रपति ने इस आयोग क सिफारिशों पर प्रतिवेदन के लिए एक संसदीय समिति का गठन किया। इस समिति ने आयोग की कुछ सिफारिशों में संशोधन करने जैसे–हिंदी न सीखने वाले कर्मचारी को दंडित न करना, 45 वर्ष से अधिक आयु के कर्मचारी के लिए हिंदी के प्रशिक्षण में छूट देन सन् 1965 के बाद प्रधान राजभाषा हिंदी तथा गौण राजभाषा अंग्रेजी रहे आदि, सन् 1959 को अपना प्रतिवेदन राष्ट्रपति को सौंप दिया

संघ राजभाषा के संबंध में राष्ट्रपति का आदेश (1960)–संसदीय समिति के प्रतिवेदन को ध्यान में रखते हुए 27 अप्रैल 1960 को राष्ट्रपति ने संघ की राजभाषा के संबंध में एक आदेश पारित किया जिसमें हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली बनाने, शिक्षा मंत्रालय द्वारा हिन्दी प्रचार की व्यवस्था करने, संसदीय अधिनियम व विधेयकों का प्राधिकृ हिंदी-अनुवाद उपलब्ध करवाने आदि समेत 10 नियमों की व्यवस्था की गई। राष्ट्रपति के इस आदेश पत्र के आधार पर गृ मंत्रालय ने 27 मार्च, 1961 को एक कार्यालय ज्ञापन जारी किया जिसमें सभी मंत्रालयों से सरकारी संकल्प हिंदी में जारी करने हिंदी पत्रों के उत्तर हिंदी में देने आदि जैसे प्रबन्धों को व्यवहार में लाने का अनुरोध किया गया था।

राजभाषा अधिनियम, 1963–प्रथम राजभाषा आयोग की सिफारिशों व संसदीय राजभाषा समिति के प्रतिवेदनों को देखक दक्षिण भारत में हिंदी को राजभाषा बनाये जाने का तीव्र विरोध हुआ। फलतः सरकार ने उन्हें संतुष्ट करने के लिए यह अधिनियम लागू किया जिसके आधार पर 26 जनवरी, 1965 से सभी सरकारी कार्यालयों, प्रतिष्ठानों, उपक्रमों आदि में द्विभाषिक स्थिति क लागू करना, सभी राज्यों में सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी का प्रयोग करना प्रारंभ हुआ। इस प्रका इस अधिनियम से अंग्रेजी को हिंदी के गले का ढोल बना दिया गया।

राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967–यह (संशोधन) 27 नवम्बर, 1967 को लोकसभा में प्रस्तुत हुआ। इस अधिनिय की प्रमुख विशेषताएँ सार रूप में इस प्रकार हैं–

इस अधिनियम के अनुसार अंग्रेजी सरकारी कामकाज में सहभाषा के रूप में तब तक चलती रहेगी जब तक अहिन्दी भाष राज्य हिन्दी को एकमात्र राजभाषा बनाने के लिए सहमत न हो जायें। 26 जनवरी, 1965 से समस्त राजकीय प्रयोजनों के लि हिंदी का प्रयोग किया जायेगा। परंतु अंग्रेजी भी सह-राजभाषा के रूप में प्रयोग की जाती रहेगी। सरकारी संकल्पों, आदेशों, नियमं सूचनाओं आदि में हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी का भी प्रयोग किया जायेगा। कोई भी सरकारी कर्मचारी अपना सरकारी कार्य हिं या अंग्रेजी में कर सकता है। इसके लिए उसे दूसरी भाषा का अनुवाद देना आवश्यक नहीं है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकत है कि हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने के लिए संविधान निर्माताओं ने जो प्रावधान किए थे, उन्हीं प्रावधानों को तोड़-मरोड़ क कुछ नेताओं ने अपने अनुकूल बनाया और राजभाषा की जो स्थिति सन् 1965 से पहले थी, वह बाद में भी बनी रही।

राजभाषा नियम, 1976–राजभाषा अधिनियम, 1963 के प्रावधान के अनुरूप 1976 में कुछ नियम बनाये गए जिन राजभाषा नियम, 1976 कहा जाता है। इसके अनुसार हिंदी भाषा के आधार पर पूरे भारत को तीन क्षेत्रों 'क', 'ख', 'ग' बाँटा गया है। क्षेत्र 'क' हिन्दी भाषी राज्य हैं जहाँ पर पत्र भेजते समय केंद्र सरकार हिंदी का प्रयोग करेगी। यदि असाधारण परिस्थितिवश अंग्रेजी में पत्र भेजा जाता है तब उसका हिंदी अनुवाद साथ में भेजा जायेगा। इसके अनुसार केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त आयोग, समिति, निगम आदि भी सरकारी कार्यालय की परिभाषा में मिलाए गए। संघ द्वारा क्षेत्र 'ख' के राज्यों पंजाब गुजरात, महाराष्ट्र व चंडीगढ़ को पत्र प्रायः हिंदी में ही भेजे जाएँगे तथा क्षेत्र 'ग' के अहिंदी भाषी राज्यों में पत्र प्रायः अंग्रेजी में भेजे जाएँगे। हिंदी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर हिंदी में दिए जाएँगे तथा यदि कोई आवेदनकर्ता हिन्दी में हस्ताक्षर करता है तो उसका उत्तर हिंदी में दिया जाये।

संविधान में भाषा संबंधी कुछ विशेष निर्देश–संविधान में भाषा संबंधी कुछ विशेष निर्देश भी दिए गए हैं, जो इस प्रकार हैं–

(i) कोई भी व्यक्ति संघ अथवा राज्य के किसी भी अधिकारी को अपनी समस्या के समाधान के लिए संघ अथवा राज्यों में प्रयुक्त होने वाली किसी भी भाषा में आवेदन पत्र दे सकता है।

(ii) प्रत्येक राज्य के स्थानीय प्राधिकारी का यह प्रयास होगा कि भाषायी अल्पसंख्यक समूह के बच्चों को प्राथमिक स्तर पर उनकी मातृभाषा में ही शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था करे।

(iii) भाषायी अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रपति द्वारा एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की जाएगी।

(iv) संविधान के अनुच्छेद 351 में यह प्रावधान है कि संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा को प्रोत्साहित करने के लिए उसका इस प्रकार विकास करेगा कि वह भारत की मिश्रित संस्कृति को अभिव्यक्त करने का माध्यम बन सके। साथ ही संस्कृत तथा अन्य भाषाओं की शब्दावली, शब्दरूपों, शैलियों तथा अभिव्यक्तियों को मिलाकर हिंदी भाषा को समृद्ध बनाने का प्रयास करें।

◆◆◆

(ख) राजभाषा हिंदी संबंधी संवैधानिक प्रावधान

I. राजभाषा अधिनियम

4. राजभाषा अधिनियम क्या है? इसके प्रमुख प्रावधानों का परिचय दीजिए।

उत्तर–राजभाषा अधिनियम (1963)–संविधान के अनुच्छेद 343 (1) में यह घोषित किया गया था कि 26 जनवरी, 1965 से हिंदी संघ की राजभाषा हो जाएगी। राष्ट्रपति ने सन् 1952 तथा 1955 में आदेश जारी किए थे जिनके अंतर्गत सरकारी प्रयोजनों के लिए हिंदी का प्रयोग प्राधिकृत किया गया था। इसके कारण हिंदी के प्रयोग में एक ओर तेजी आ रही थी और दूसरी ओर 1965 की समयावधि भी समाप्त हो रही थी जब अंग्रेजी को पूरी तरह हट जाना था। इससे अहिंदी भाषी क्षेत्रों में, विशेषकर दक्षिण में तमिलनाडु में हिंदी का विरोध बढ़ने लगा था। अंग्रेजीपरस्त लोग यह चाहते थे कि अंग्रेजी अनिश्चित काल तक राजभाषा बनी रहे।

सन् 1955 में गठित राजभाषा आयोग तथा उसके बाद तीस सदस्यों की संसदीय समिति ने इस मामले में गंभीरतापूर्वक विचार करके यह राय प्रस्तुत की थी कि 1965 के बाद भी अंग्रेजी को पूरी तरह से हटाना मुश्किल होगा। अतः अहिंदी भाषी क्षेत्रों की शंकाओं दूर करने तथा संविधान के अनुच्छेद 343 (3) में दिए गए प्रावधानों के अंतर्गत 15 वर्ष की अवधि समाप्त हो जाने के बाद अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखने के लिए सन् 1963 में राजभाषा अधिनियम प्रस्तुत किया गया। इसे तत्कालीन गृह मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने 13 अप्रैल, 1963 को प्रस्तुत किया था। इसका उद्देश्य यह था कि 26 जनवरी, 1965 के बाद अंग्रेजी भाषा का प्रयोग जारी रखने के बारे में कानून बनाने के लिए संसद को अधिकार दिया जाए। संसद में इस संबंध में बहस के दौरान शास्त्री जी ने कहा था- "हम अंग्रेजी की वर्तमान स्थिति कायम नहीं रख सकते और न रखनी ही चाहिए।" काफी लंबी बहस के बाद 10 मई, 1963 को राजभाषा अधिनियम, 1963 पारित हुआ।

इस अधिनियम के महत्वपूर्ण प्रावधान (उपबंध) इस प्रकार थे–

इसकी धारा–3(3) में सरकारी कार्यालयों से जारी होने वाले सभी दस्तावेजों में हिंदी और अंग्रेजी का अनिवार्य रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए।

परिणामस्वरूप सामान्य आदेश, नियम, अधिनियम, सूचना, प्रशासनिक रिपोर्ट, प्रेस विज्ञप्तियाँ, संविदाएँ, करार, लाइसेंस, टेंडर, संसद के किसी सदन में रखे जाने वाले सरकारी-पत्र आदि अनिवार्य रूप से अंग्रेजी और हिंदी में जारी करने की व्यवस्था की गई। धारा–4 में यह प्रावधान किया गया कि इस वर्ष की समाप्ति के बाद राजभाषा के संबंध में एक समिति संसद द्वारा गठित की जाएगी। यह समिति संघ के राजकोष प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रयोग की स्थिति का जायजा लेगी और राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगी।

इसी अधिनियम की धारा–5 (1) में यह व्यवस्था की गई कि केंद्रीय अधिनियमों, विनियमों आदि का राष्ट्रपति के आदेश से प्रकाशित हिंदी पाठ मान्य होगा। धारा–5(2) के अंतर्गत संसद में प्रस्तुत किए जाने वाले अधिनियमों, संशोधनों आदि के अंग्रेजी पाठ के साथ-साथ उनका हिंदी में भी प्राधिकृत अनुवाद किया जाएगा। इसी अधिनियम की धारा–7 के अनुसार राष्ट्रपति की पूर्वानुमति से किसी भी राज्य के राज्यपाल राज्य के उच्च न्यायालय के निर्णयों, डिग्रियों आदि में अंग्रेजी के अलावा हिंदी के प्रयोग को भी प्राधिकृत कर सकते हैं।

राजभाषा अधिनियम (1963) 26 जनवरी, 1965 से लागू हुआ। 1965 से ही हिंदी सलाहकार का पद सर्जित किया गया जिसे राजभाषा नीति के कार्यान्वयन और निगरानी का काम सौंपा गया। इसके बाद भी संसद में हिंदी के राजभाषा स्वरूप को लेकर काफी बहस होती रही। दक्षिण में भाषाई आंदोलन हुए। नेहरू जी ने ससंद में कई अवसरों पर आश्वासन दिए कि अंग्रेजी का प्रयोग 26 जनवरी, 1965 के बाद भी जारी रहेगा। आखिर नेहरू जी के आश्वासनों को संवैधानिक रूप देने के लिए राजभाषा अधिनियम (1963) में संशोधन किया गया। यह संशोधन 16 दिसम्बर, 1967 को पारित हुआ। इसे अब राजभाषा (संशोधित) अधिनियम, 1967 कहा जाता है। इस संशोधन को लाने की जरूरत इसलिए भी महसूस की गई कि राजभाषा अधिनियम, 1963 में कई बातें पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हो पाई थीं, जैसे–राज्यों के बीच पत्र-व्यवहार किस भाषा में किया जाए और कुछ प्रयोजनों के लिए हिंदी का प्रयोग अनिवार्य करना भी जरूरी हो गया था।

राजभाषा अधिनियम की धारा-4 में यह व्यवस्था की गई कि 26 जनवरी, 1975 के बाद एक संसदीय राजभाषा समिति बनाई जाए। इसमें 30 सदस्य होंगे। यह समिति संघ के सरकारी प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रयोग में हुई प्रगति की समीक्षा करेगी और उसके संबंध में राष्ट्रपति को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करेगी।

राजभाषा अधिनियम, 1963 (संशोधित 1967) के साथ ही सरकार की भाषा नीति के संबंध में संकल्प पारित किया गया जो 18 जनवरी, 1968 को जारी हुआ। इसमें केंद्र सरकार को यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि वह सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए वार्षिक कार्यक्रम बनाए और इस संबंध में मूल्यांकन रिपोर्ट संसद में प्रस्तुत करे। इसी संकल्प में संविधान में आठवीं अनुसूची में उल्लिखित सभी भाषाओं के विकास की जिम्मेदारी भारत सरकार पर डाली गई। इसी में अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती परीक्षाओं में संविधान में दी गई भाषाओं के प्रयोग के बारे में व्यवस्था करने तथा संघ सेवाओं और पदों की भर्ती के लिए उम्मीदवारों के लिए अंग्रेजी या हिंदी का ज्ञान अनिवार्य कर दिया गया।

◆◆◆

II. राजभाषा नियम

5. राजभाषा नियम क्या है? विस्तार से बताइए।

उत्तर–राजभाषा नियम (1976)–25 जून, 1975 को गृह मंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग की स्थापना की गई और राजभाषा अधिनियम, 1963 व 1967 के प्रावधानों को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए अधिनियम की धारा 8 के अंतर्गत राजभाषा नियम, 1976 के रूप में भारत के राजपत्र में 17 जुलाई, 1976 को प्रकाशित किया गया। ये नियम केंद्र सरकार के सभी कार्यालयों और केंद्र सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाले निगमों आदि पर लागू होते हैं। अब सरकारी कामकाज के लिए भारत के विभिन्न भाषाई क्षेत्रों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया–

क-क्षेत्र : इसमें बिहार, झारखंड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान तथा दिल्ली और अंडमान-निकोबार केंद्र शासित क्षेत्र सम्मिलित हैं।

ख-क्षेत्र : इसमें गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब तथा चंडीगढ़ केंद्र शासित क्षेत्र सम्मिलित किए गए हैं।

ग-क्षेत्र : क और ख में निर्दिष्ट राज्यों के अतिरिक्त अन्य सभी राज्य और संघ शासित क्षेत्र इसमें सम्मिलित किए गए। इससे तात्पर्य यह है कि "ग" क्षेत्र में दक्षिण के चारों राज्य–आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक, गोवा, पूर्व के तीन राज्य–पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और असम, पूर्वांचल के छह राज्य–मेघालय, नागालैंड, त्रिपुरा, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश और मिजोरम, सिक्किम तथा पांडिचेरी, दादरा एवं नगर हवेली, लक्षद्वीप आदि केंद्र शासित क्षेत्र।

इन तीनों क्षेत्रों में स्थित केंद्र और राज्य सरकार के कार्यालयों के बीच पत्र-व्यवहार इस प्रकार से होगा–

1. केंद्र सरकार के कार्यालय से "क" क्षेत्र की राज्य सरकारों के कार्यालयों को अनिवार्य रूप से हिंदी में पत्र भेजे जाएंगे। यदि किसी कारण अंग्रेजी में पत्र भेजा जाता है तो उसका हिंदी अनुवाद भी भेजा जाएगा।
2. केंद्र सरकार के कार्यालय से "ख" क्षेत्र के राज्य सरकार या ऐसे राज्य में केंद्र सरकार से अलग कार्यालयों को सामान्य रूप से हिन्दी में पत्र भेजे जाएंगे। यदि किसी कारणवश अंग्रेजी में पत्र भेजा जाता है तो उसके साथ हिंदी अनुवाद भी भेजा जाएगा।
3. "ग" क्षेत्र में स्थित राज्य सरकार तथा केंद्र सरकार से भिन्न कार्यालयों को पत्र अंग्रेजी में भेजे जाएंगे। इससे यह भी तात्पर्य निकलता है कि केंद्र सरकार अपने कार्यालयों से पत्र-व्यवहार हिंदी में ही करेगी। वास्तव में अभी तक यह स्थिति प्रावधानों तक ही सीमित रही है। हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए उपाय किए जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त "ग" क्षेत्र के केंद्रीय सरकार के कार्यालयों से 'क' और 'ख' क्षेत्र के राज्यों में स्थित केंद्र सरकार से भिन्न कार्यालयों/व्यक्तियों को हिंदी या अंग्रेजी में पत्र भेजे जा सकते हैं। इन नियमों में यह भी व्यवस्था की गई कि सभी कर्मचारी अपनी सुविधा से अपने आवेदन/अनुमोदन हिंदी या अंग्रेजी में दे सकते हैं।

राजभाषा नियमों के नियम 10 (4) के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई कि जिन कार्यालयों में 90 प्रतिशत से अधिक कर्मचारी हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान रखते हैं उन कार्यालयों को भारत के राजपत्र में अधिसूचित किया जाएगा ताकि उन कार्यालयों के साथ पत्र व्यवहार हिंदी में ही किया जा सके।

नियम 11 के अनुसार केंद्र सरकार के कार्यालयों में प्रयुक्त संहिताएं, नियमावलियां, फार्म, क्रियाविधि साहित्य आदि हिंदी और अंग्रेजी में तैयार किया जाएगा और द्विभाषिक रूप से प्रकाशित किया जाएगा। इसके अतिरिक्त कार्यालयों के नाम, सूचना पट्ट, मोहरें, लेखन सामग्री आदि पर हिंदी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा।

राजभाषा नियम, 1976 की अन्य प्रमुख बातें इस प्रकार हैं–

- हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिंदी में ही दिया जाएगा।
- सभी दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी का दायित्व होगा कि वह सुनिश्चित करे कि हिंदी तथा अंग्रेजी में जारी होने वाले दस्तावेज वस्तुतः दोनों भाषाओं में जारी किए जा रहे हैं।
- प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह सुनिश्चित कर ले कि राजभाषा अधिनियम और राजभाषा नियमों का अनुपालन समुचित रूप से हो रहा है तथा वह इस संबंध में प्रभावशाली जाँच के लिए आवश्यक उपायों की व्यवस्था करे।
- जिन अधिकारियों/कर्मचारियों ने मैट्रिक या उसके समकक्ष स्तर का हिंदी ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उनको हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त माना जाएगा। यदि कोई कर्मचारी फाइल पर टिप्पणी या मसौदा हिंदी में लिखता है तो उससे उसका अंग्रेजी अनुवाद नहीं माँगा जाएगा।

◆◆◆

III. द्विभाषा नीति

6. द्विभाषिकता और बहुभाषिकता क्या है? विस्तार से लिखिए।

उत्तर–बहुभाषिकता और द्विभाषिकता की संकल्पना पर विचार करते हुए आपके मन में यह प्रश्न अवश्य उठेगा कि बहुभाषिकता से क्या तात्पर्य है, इसका संबंध किससे है और इसके क्या-क्या स्तर हैं। वास्तव में बहुभाषिकता भाषा का कोई रूप नहीं है। **बहुभाषिकता या द्विभाषिकता एक प्रयोक्ता के एक से अधिक भाषाओं के प्रयोग की क्षमता ही है। इसका संबंध किसी समाज-विशेष अथवा व्यक्ति-विशेष के भाषा प्रयोग से है।** बहुभाषिकता और द्विभाषिकता में कोई तात्विक या तकनीकी अंतर नहीं है। **दो भाषाओं की प्रयोग क्षमता को द्विभाषिकता कहा गया है और दो से अधिक भाषाओं की प्रयोग क्षमता को बहुभाषिकता की संज्ञा दी गई है।** भारत बहुभाषी देश है। भारत के जनगणना सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 1652 मातृभाषाएँ बोली जाती हैं और उनमें 33 भाषाएँ प्रमुख मानी गई हैं।

इनमें से 22 भाषाएँ—हिन्दी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़, मराठी, गुजराती, सिंधी, कोंकणी, असमिया, बंगला, ओड़िया, पंजाबी, उर्दू, कश्मीरी, नेपाली, मणिपुरी, बोडो, संथाली, डोगरी और मैथिली भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में रखी गई हैं। इस दृष्टि से भारत में बहुभाषिकता पूर्णतया व्याप्त है।

बहुभाषिकता अथवा द्विभाषिकता की स्थिति समाज और व्यक्ति की आवश्यकताओं के कारण पैदा हुई है। प्रत्येक बहुभाषी समाज और व्यक्ति कई भाषाओं का प्रयोग करता है और **उसकी दो या दो से अधिक भाषाओं के ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने की क्षमता से द्विभाषिकता या बहुभाषिकता की स्थिति पैदा होती है।** विश्व के विभिन्न भागों में रहने वाले बहुभाषी समाज काफी संख्या में मिलते हैं। अमेरिका में टेक्सास, न्यू मैक्सिको, कैलिफोर्निया, अमेरिकन साउथ वेस्ट आदि क्षेत्रों में अंग्रेजी और स्पेनिश भाषाओं की द्विभाषिकता की स्थिति मिलती है। **भारत में दिल्ली, मुंबई, कोलकाता आदि महानगरों में अंग्रेजी,** हिन्दी और **अपनी प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग अधिकतर मिलता है।** इस प्रकार विश्व के अधिकतर भाषा-भाषी समाजों में किसी-न-किसी स्तर पर द्विभाषिकता अथवा बहुभाषिकता की स्थिति गिलती है।

वास्तव में द्विभाषिकता का तात्पर्य एक व्यक्ति की दो भिन्न भाषाओं को प्रयोग करने की योग्यता से माना गया है। किंतु इस 'योग्यता' में निहित अस्पष्टता दिखाई देती है जिसे कुछ विद्वानों ने स्पष्ट करने का प्रयास किया है। **किसी विद्वान ने दो भाषाओं की योग्यता को स्वभाषा या मातृभाषा के समान स्वीकार किया है तो दूसरे विद्वान ने कहा कि यह जरूरी नहीं है** कि इस **योग्यता से अभिप्राय स्वभाषा की समान जानकारी से हो। यह योग्यता एक भाषा में अधिकतम भी हो सकती है और दूसरी भाषा में न्यूनतम भी।** एक विद्वान ने द्विभाषिकता का अर्थ वैकल्पिक रूप से सीधे ही दो भाषाओं के प्रयोग की स्थिति को स्वीकार किया है। इस प्रकार द्विभाषिकता दो भाषाओं की दैनंदिन व्यवहार में आने की स्थिति में जन्मी स्थिति है। **दैनिक जीवन में संप्रेषण** हेतु **एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग किसी भी व्यक्ति को द्विभाषी अथवा बहुभाषी बना देता है।**

द्विभाषिकता को तीन **विभिन्न संदर्भों** में देखा गया है—**व्यक्तिगत, सामाजिक** और **राष्ट्रीय।** संदर्भों के बीच जो अंतर है वह दूसरी भाषा के प्रयोजनमूलक प्रयोग के साथ जुड़ा हुआ है।

(क) व्यक्तिगत द्विभाषिकता—यदि कोई भाषा प्रयोजन में मातृभाषा की प्रतिपूरक स्थिति में प्रयुक्त नहीं होती तो यह द्विभाषिकता कहलाएगी। यह अस्थिर द्विभाषिकता है और इसका सीमित प्रयोग होता है। यदि कोई हिन्दी भाषी व्यक्ति जापान, फ्रांस, जर्मनी या रूस जाना चाहता है अथवा अपनी शैक्षिक आवश्यकता के लिए इन देशों की भाषा सीखता है तो वह व्यक्तिगत द्विभाषिकता है। वह इसका प्रयोग अपने समाज में नहीं करता।

(ख) सामाजिक द्विभाषिकता—यदि कोई मातृभाषा के प्रतिपूरक के रूप में प्रयोजनमूलक भूमिका निभाता है तो वह सामाजिक द्विभाषिकता है। वह स्थिर द्विभाषिकता है। इसमें व्यक्ति अपने बहुभाषी समाज में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि दबावों और परस्पर संबंधों के कारण समाज में एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग करता है तो वह सामाजिक द्विभाषिकता है।

(ग) राष्ट्रीय द्विभाषिकता—राजनीतिक एकता और अधिक प्रगति को ध्यान में रखते हुए यदि कोई भाषा राष्ट्रीय स्तर पर प्रयुक्त होती है तो वहाँ राष्ट्रीय द्विभाषिकता की स्थिति आएगी। इस स्तर पर चाहे कोई देश प्रशासनिक प्रयोजनों के लिए द्विभाषिक रहे, किंतु नागरिक अपने दैनिक जीवन में एक भाषी भी रह सकता है।

यह द्विभाषिकता **भाषा, बोली, शैली** आदि कई स्तरों पर देखी जा सकती है, जिनमें दो मुख्य हैं—(क) **अंतः द्विभाषिकता** और **(ख) अंतर द्विभाषिकता।** अंतःद्विभाषिकता में एक भाषाभाषी वर्ग को भाषा के विभिन्न रूपों या शैलियों को चुनना पड़ता है; जैसे—हिन्दी भाषी प्रदेश में कोई व्यक्ति किसी बोली, मानक हिन्दी, संस्कृतनिष्ठ हिन्दी, सामान्य बोलचाल की हिन्दी अर्थात् हिन्दुस्तानी आदि में से किसी एक को चुनता है। **अंतर द्विभाषिकता** में द्विभाषी या बहुभाषी वक्ता को विभिन्न प्रयोगों में दो या अधिक भाषाओं का प्रयोग करना पड़ता है; जैसे—हिन्दी, अंग्रेजी अथवा अपनी मातृभाषा में से एक या दोनों का प्रयोग करता है। मनोवैज्ञानिकों ने इस द्विभाषिकता की तीन प्रणालियाँ बताई हैं—(क) **मिश्र प्रणाली** (ख) **समानाधिकृत प्रणाली** (ग) **आश्रित प्रणाली।**

(क) मिश्र प्रणाली—यह स्थिति आमतौर पर उस परिवेश से उत्पन्न होती है जहाँ वक्ता घर और घर से बाहर विभिन्न व्यवहार-क्षेत्रों में दोनों भाषाओं का मुक्त रूप से प्रयोग करता है। भारत में अंग्रेजी पढ़े-लिखे या शहरी परिवेश में पढ़े-लिखे व्यक्ति इसी कोटि में आते हैं।

(ख) **समानाधिकृत प्रणाली**—यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति एक व्यवहार-क्षेत्र में (जैसे—घर) एक भाषा बोलता है और दूसरे व्यवहार क्षेत्र में (जैसे—स्कूल, कार्यालय) दूसरी भाषा बोलता है अर्थात् दोनों भाषाएँ एक-दूसरे के व्यवहार क्षेत्र में नहीं बोली जाती।

(ग) **आश्रित प्रणाली**—यह स्थिति आमतौर पर तब पैदा होती है जब किसी परिचित भाषा के माध्यम से (अर्थात् अप्रत्यक्ष पद्धति द्वारा) दूसरी भाषा सीखी जाए। हिन्दी या अंग्रेजी के माध्यम से कोई अन्य भाषा (रूसी, जर्मन, तमिल आदि) सीखने वाले भाषाभाषी इसी वर्ग में आते हैं, जहाँ एक भाषा की दो या अधिक शैलियों का प्रयोग होता है और ये शैलियाँ न केवल सामाजिक दृष्टि से नियंत्रित होती हैं वरन् उनका सुस्पष्ट भाषायी संदर्भ भी होता है।

इस स्थिति को 'भाषाद्वैत' (डायग्लासिया) कहा गया है। वास्तव में डायग्लासिया वह स्थिति है जहाँ भाषा के दो रूप पूरे भाषाभाषी समुदाय में एक साथ विद्यमान हों और प्रत्येक की एक निश्चित भूमिका हो। इन रूपों का समुदाय में एक सुस्थिर प्रयोग होता है और उनमें एक अध्यारोपित रूप प्रयुक्त होता है; जैसे- बंगाली में 'साधु' और 'चलित' रूप, तेलुगु में 'ग्रंथिका' और 'व्यावहारिका' तथा तमिल में 'पीरू' और 'पीचू'। हिन्दी-उर्दू भाषाभाषी समुदाय की स्थिति अन्य प्रकार की है। यहाँ हिन्दी (साहितियक), उर्दू (साहित्यिक) और हिन्दुस्तानी, तीनों रूप मिलते हैं और **इस स्थिति को 'भाषात्रैत' (ट्राइग्लासिया) कहना उचित होगा। एक अन्य रूप 'हिंग्लिश' भी उभर कर आया है।**

प्रयोजन के आधार पर द्विभाषिकता के चार प्रकार माने गए हैं—(क) **संपूरक**, (ख) **सहायक,** (ग) **परिपूरक** और (घ) **समतुल्य**। इसका आरेख नीचे दिया जा रहा है—

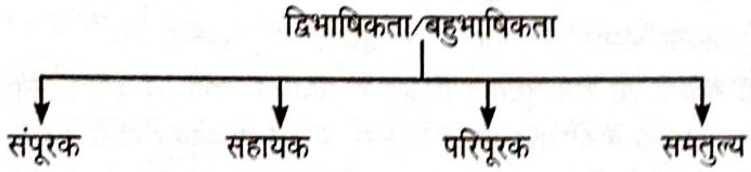

(क) **संपूरक द्विभाषिकता** में द्वितीय भाषा का ज्ञान निजी ज्ञान की वृद्धि और प्रयोग के लिए होता है। यह पुस्तकालयी भाषा होती है और इसका सक्रिय प्रयोग नहीं हो सकता। इसमें व्यक्ति सीखी हुई भाषा का प्रयोग शोध कार्य या अन्य विशिष्ट कार्य के संदर्भ में ही करता है।

(ख) **सहायक द्विभाषिकता** में व्यक्ति अपने ही समुदाय की दूसरी भाषा का ज्ञान अपने ज्ञान की सहायक भाषा के रूप में प्राप्त करता है; **जैसे—हिन्दी और संस्कृत**। इसमें हिन्दी का प्रयोग करते हुए कभी-कभी संस्कृत की भी सहायता लेनी पड़ती है।

(ग) **परिपूरक द्विभाषिकता** में सामाजिक प्रयोजनों की पूर्ति के लिए समुदाय में प्राप्त दूसरी भाषा का जानना आवश्यक है। इस स्थिति में हिन्दी और अंग्रेजी परिपूरक द्विभाषिकता के अंतर्गत आती है। वस्तुतः कुछ स्थितियों में हिन्दी का प्रयोग किया जाता है और कुछ स्थितियों में अंग्रेजी का।

(घ) **समतुल्य द्विभाषिकता** के अंतर्गत दूसरी भाषा में भी समतुल्य दक्षता प्राप्त करने की इच्छा होती है। इसमें दोनों भाषाओं पर समान अधिकार की अपेक्षा होती है। यह द्विभाषिकता स्थिर और सक्रिय होती है, जैसे—**हिन्दी समाज में अंग्रेजी का प्रयोग समतुल्य द्विभाषिकता के अंतर्गत आता है।**

भारतीय संदर्भ में द्विभाषिकता सशक्त पहलू है। भारत में यह स्थिति सदियों से चली आ रही है। पालि और संस्कृत, तमिल और संस्कृत, अर्धमागधी और पालि आदि द्विभाषिकता के रूप में मिल जाते हैं। प्राचीन काल में संतों और दार्शनिकों ने जनता के सामने जनभाषा के रूप में बात की जबकि अध्ययन संस्कृत आदि में किया। आठवीं शताब्दी में आदि शंकराचार्य केरल में कोचीन से चालीस किलोमीटर दूर पेरियार (पूर्णा) नदी के तट पर बसे कालड़ी गाँव में पैदा हुए थे। वे मूलतः मलयालम भाषी थे। उन्होंने भारत के पूर्व (जगन्नाथ पुरी) में, पश्चिम (द्वारका) में, उत्तर (बदरीनाथ) में और दक्षिण (श्रृंगेरी) में चार मठों की स्थापना की थी। 13वीं-14वीं शताब्दी में तमिल भाषी रामानुजाचार्य ने वाराणसी में राम भक्ति की ज्योति प्रज्वलित की थी। तेलुगु भाषी वल्लभाचार्य, कन्नड़ भाषी मध्वाचार्य और मलयालम भाषी निंबार्काचार्य ने वृंदावन में कृष्ण भक्ति और राधा संप्रदाय की स्थापना की थी। बहुभाषी होने के कारण ही ये महापुरुष भक्ति आन्दोलन का यह महान कार्य कर पाए थे।

भारत में द्विभाषिकता की स्थिति राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में देखी जा सकती है। **इसके अतिरिक्त प्रत्येक प्रमुख भाषा या बोली संपर्क भाषा के रूप में कार्य कर रही है, लेकिन व्यापक संचार के लिए हिन्दी और अंग्रेजी का प्रयोग अधिक है।**

बई में रहने वाला गुजराती व्यापारी प्रायः दिन में पाँच भाषाएँ बोलता है। परिवार में गुजराती बोलता है, नौकर से या सब्जी वाले से मराठी, दूध वाले से या प्लेटफार्म पर या सिनेमा देखने के लिए हिन्दी का प्रयोग करता है। अपने व्यापारी वर्ग में कोंकणी या कच्छी का प्रयोग करता है और औपचारिक अवसरों पर अंग्रेजी का भी प्रयोग करता है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि वह इन भाषाओं के व्याकरणिक नियम जानता है। **बल्कि व्यावहारिक आवश्यकताओं ने उसे बहुभाषी बना दिया है। वास्तव में यह एक भाषायी कौशल है जिसका प्रयोग वक्ता एक सृजनशील कलाकार की भाँति करता है और स्थिति तथा विषय के अनुसार भाषायी परिवर्तन करता जाता है।**

महानगरों में भारत की प्रमुख भाषाओं के व्यक्ति जब आते हैं तो दूसरे भाषा-भाषी समुदायों में रहते हुए भी अपनी भाषा को संजोए रहते हैं और अपने रीति-रिवाजों, संस्कृति और जीवन-पद्धति को बनाए रखकर अपनी भाषा को भी जीवित रखे होते हैं। तमिल और बंगला भाषा-भाषी समुदाय भारत के किसी भी राज्य में रहते हुए अपनी भाषा को जीवित बनाए रखते हैं, लेकिन गौण भाषाओं के संदर्भ में यह बात लागू नहीं की जा सकती।

द्विभाषिकता की स्थिति प्रयुक्तिपरक क्षेत्रों में भी देखी जा सकती हैं। जैसे—हिन्दी भाषी क्षेत्र में विभिन्न स्तरों के न्यायालयों में प्रादेशिक बोली से लेकर हिन्दी-अंग्रेजी तक की स्थिति देखी जा सकती है।

ग्राम पंचायत	**सिविल न्यायालय**	**जिला न्यायालय**	**उच्च न्यायालय**	**उच्चतम न्यायालय**
बोली	हिन्दी	हिन्दी	अंग्रेजी	अंग्रेजी
(हिन्दी)	(अंग्रेजी अथवा बोली)	(हिन्दी या अंग्रेजी)	(हिन्दी)	

उपर्युक्त विवरण में देखा गया है कि ग्राम पंचायत में क्षेत्र से संबंधित बोली का प्रयोग होता है और उच्चतम न्यायालय में मात्र अंग्रेजी का प्रयोग होता है। कोष्ठक में दी गई भाषाएँ विकल्प के रूप में प्रयुक्त होती हैं।

यही स्थिति शिक्षा के क्षेत्र में भी देखी जा सकती हैं, जहाँ प्राइमरी स्कूल का शिक्षण मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा से प्रारंभ होता है और उच्च शिक्षा में अंग्रेजी प्रमुख भाषा के रूप में और हिन्दी गौण भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है।

सरकारी कामकाज में भी द्विभाषिकता की स्थिति विद्यमान है। **ध्वनि** के स्तर पर अंग्रेजी के शब्दों का हिन्दीकरण किया गया है, जैसे—तकनीकी, अंतरिम आदि। **रूपिम** के स्तर पर अंग्रेजी के शब्दों में हिन्दी का रुपिम दिया गया है, जैसे—डायरीकार, बैंककारी आदि। **शब्द** के स्तर पर हमें कई शब्द मिल जाते हैं, जैसे—फाइल, ग्रेड, सिविल स्टाफ आदि। यही नहीं, **टिप्पणी लेखन** आदि में अंग्रेजी और हिन्दों दोनों भाषाओं के वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में टिप्पणी लिखते समय कई बार हिन्दी के शब्दों की बजाय अंग्रेजी के शब्द दिए जाते हैं। लगभग यही स्थिति अन्य राज्यों की राजभाषाओं की भी है।

इस प्रकार द्विभाषिकता अथवा बहुभाषिकता एक बहुआयामी पक्ष है। इससे समाज और व्यक्ति दोनों प्रभावित होते हैं। सामाजिक स्तर पर इससे शिक्षा नीति सबंधी समस्याओं का परिचय मिलता है। भाषा नियोजन के समय इस पक्ष पर ध्यान दिया जाता है। यह तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति का आधार बनती है। वास्तव में औद्योगिक और नागर समाजों में जो बहुभाषी समाज होते हैं और उन्हें सरकारी संस्थाओं द्वारा जो शैक्षिक सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं, वे सरकार की नीति के अनुसार निर्धारित भाषा में दी जाती हैं। **अतः इस परिचयात्मक विस्तृत जानकारी के बाद यह कहा जा सकता है कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, व्यावसायिक, आर्थिक आदि पहलू बहुभाषिकता/द्विभाषिकता की स्थिति उत्पन्न करते हैं।**

◆◆◆

7. द्विभाषा नीति क्या है? संक्षेप में लिखिए।

उत्तर—द्विभाषा नीति में छात्रों को दो या उससे ज्यादा भाषाओं में पढ़ाया जाता है। इस नीति में दोनों भाषाओं का इस्तेमाल गणित, विज्ञान और इतिहास जैसे विषयों को पढ़ाने के लिए किया जाता है।

द्विभाषा के तहत, तमिलनाडु ने साल 1968 के बाद से तमिल और अंग्रेज़ी भाषा को अपनाया। तमिलनाडु ने वैश्वीकरण के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए अंग्रेजी को संपर्क भाषा के रूप में अहमियत दी। तमिलनाडु समेत दक्षिण भारतीय राज्यों में सूचना प्रौद्योगिकी से जुड़े माहौल के विकास में अंग्रेजी भाषा और तकनीकी ज्ञान का बड़ा योगदान रहा है।

भाषा-नीति, एक अंतरविषयी शैक्षणिक विधा है। कुछ विद्वान इसे सामाजिक-भाषाविज्ञान का हिस्सा मानते हैं, जबकि कुछ विद्वान मानते हैं कि भाषानीति अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की एक शाखा है। अध्ययन के एक क्षेत्र के रूप में पहले भाषा-नीति को 'भाषा-नियोजन' (language planning) के नाम से जाना जाता था।

◆◆◆

IV. त्रिभाषा सूत्र

8. त्रिभाषा सूत्र से आप क्या समझते हैं? विस्तार से बताइए।

उत्तर–त्रिभाषा सूत्र–शिक्षा का पहला अर्थ भाषा ज्ञान है। यह सरल, सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया से होता है। भाषा ज्ञान की प्राप्ति के क्रम में व्यक्ति सर्वप्रथम अपनी मातृभाषा का ज्ञान प्राप्त करता है। औपचारिक शिक्षा में 'वर्णमाला-ज्ञान' पाठ्यचर्या/पाठ्यक्रम का श्रीगणेश है।

भाषा संप्रेक्षण का प्रमुख माध्यम है। भाषा एक समुदाय, क्षेत्र और देश के लोगों के मध्य एकता, आत्मीयता और निकटता लाने का कार्य करती है। इस रूप में भाषा का राष्ट्रीय महत्व है। राष्ट्र निर्माण में जिन प्रमुख तत्वों पर विचार किया जाता है उनमें भाषा एक प्रमुख तत्व है।

भारत बहुभाषिक देश है। इतना ही नहीं, भाषा वैज्ञानिकों का विचार है कि यहाँ पाँच भाषा परिवारों की उपस्थिति है जो विश्व के किसी अन्य देश में नहीं है। ये पाँच भाषा परिवार हैं–इण्डो-आर्यन, द्रविड़, आस्ट्रो-एशियाटिक, तिब्बतो-बर्मन और अण्डमानी। भारत में इन पाँच भाषा परिवारों की भाषाएँ आपस में सतत संवाद में रही हैं।

भारत के लिए भाषा संबंधी इस स्थिति का विशेष महत्त्व है। इसका सीधा संवंध एक अरब दस करोड़ की जनसंख्या वाले देश की राष्ट्रीय एकता और उसके निवासियों के बीच भावात्मक तथा पारस्परिक समझ के साथ जुड़ा है।

ऐसी स्थिति में भारत के नागरिकों का बहुभाषी होना ज्ञान की दृष्टि से ही नहीं अपितु राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से भी महत्व का है। सामान्यतः ऐसे तीन मुख्य प्रेरक तत्व होते हैं जो व्यक्ति को बहुभाषी बनने में सहायक होते हैं–एक, व्यापार; दो, किसी अन्य भाषायी क्षेत्र में निवास (कारण कुछ भी हो), अथवा अन्य भाषायी पड़ोसी का होना; तीसरा, शिक्षा का पाठ्यक्रम।

स्वतंत्रता के बाद यह अनुभव किया गया कि भारत (जो बहुभाषी देश है) में राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के लिए पाठ्यक्रम की ऐसी रचना की जाये कि प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति एक से अधिक भाषाओं का जानकार हो। यही त्रिभाषी सूत्र के प्रारम्भ का कारण बना।

एक दूसरा कारण बना–संवैधानिक प्रावधानों के परिणामस्वरूप भाषा जैसे संवेदनशील मुद्दे पर राजनीतिक और क्षेत्रीय प्रतिक्रिया। संविधान निर्माताओं ने हिन्दी की व्यापकता को स्वीकार करते हुए उसे संघ की राजभाषा स्वीकार किया। धारा 343 में कहा गया कि देवनागरी लिपि में हिन्दी केन्द्र की राजभाषा होगी। धारा 351 में हिन्दी भाषा की वृद्धि, विकास और संवृद्धि को केन्द्र का कर्तव्य माना गया। इसके साथ ही यह भी प्रावधान किया गया कि संविधान लागू होने के समय से 15 वर्ष तक केन्द्र के सब राजकीय कार्यों के लिए अंग्रेजी का प्रयोग किया जायेगा।

संविधान की धारा 244 के अनुसार सरकार द्वारा भाषा आयोग की स्थापना अधिकार के तहत गठित राजभाषा-आयोग, 1955 ने अगस्त, 1956 में परामर्श दिया कि उपयुक्त शब्दावली के अभाव के कारण राजभाषा के रूप में हिन्दी को अंग्रेजी का स्थान दिया जाना अभी सम्भव नहीं है, अतः जनवरी, 1965 तक अंग्रेजी को राजभाषा के रूप में प्रयोग किया जाये। सरकार ने राजभाषा आयोग के परामर्श को स्वीकार करते हुए हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों को राजभाषाओं के रूप में प्रयोग किए जाने का निश्चय किया तथा स्वीकार किया कि 1965 तक अंग्रेजी भारत संघ की सह-राजभाषा रहेगी तथा अंग्रेजी का राजभाषा के रूप में प्रयोग किया जायेगा।

60 के दशक में दक्षिण, विशेषतः तमिलनाडु (उस समय मद्रास प्रान्त) में उत्तर विरोधी तथा भाषा संवंधी उग्र आन्दोलन ने उभरती हुई नई परिस्थितियों के संदर्भ में भाषा संबंधी प्रश्न पर विचार करने के लिए बाध्य किया।

तमिलनाडु की प्रभावी राजनीतिक पार्टी डी.एम.के. ने हिन्दी को राजभाषा बनाए जाने का विरोध किया। डी.एम.के. के साथ उत्तर-पूर्व के कुछ समुदाय भी जुड़ गये। परिणामतः 1967 के राजभाषा संशोधन विधेयक में यह प्रावधान रखा गया कि अंग्रेजी उस समय तक के लिए केन्द्र की सह-राजभाषा बनी रहेगी, जब तक कि भारत केन्द्र, सब राज्यों की विधान मण्डल और संसद के दोनों सदन हिन्दी को राजभाषा का रूप प्रदान करने का निर्णय न लें।

स्वतंत्रता के बाद अकादमिक शिक्षा क्षेत्र में देश के बहुभाषी स्वरूप को स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से एक से अधिक भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन को स्वीकार किया गया। इस दृष्टि से समय-समय पर गठित विभिन्न आयोगों और समितियों ने अपनी-अपनी अनुशंसाएँ प्रस्तुत की हैं।

ताराचन्द समिति, 1948–इस समिति का सुझाव था कि उच्च प्राथमिक स्तर के पश्चात् मातृभाषा के अतिरिक्त संघीय भाषा को अनिवार्य बना दिया जाए, अर्थात माध्यमिक स्तर पर दो भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन किया जाए–मातृभाषा तथा अंग्रेजी या हिंदी भाषा।

राधाकृष्णन आयोग, 1948–इस आयोग का सुझाव था कि उच्च माध्यमिक स्तर एवं विश्वविद्यालय स्तर पर छात्रों को तीन भाषाओं का ज्ञान कराया जाए, यथा–(1) क्षेत्रीय भाषा या मातृभाषा, (2) हिंदी भाषा या मातृभाषा, (3) अंग्रेजी।

मुदालियर आयोग, 1952–इस आयोग का सुझाव था कि माध्यमिक स्तर तक छात्रों को इन भाषाओं में से दो भाषाएँ पढ़ाई जाएँ–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा या मातृभाषा और एक शास्त्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम, (2) इनमें से चुनी गई एक अन्य भाषा–(क) हिन्दी (उनके लिए जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है), (ख) प्रारम्भिक अंग्रेजी (उनके लिए जिन्होंने मिडिल स्तर पर इसका अध्ययन नहीं किया है), (ग) उच्च अंग्रेजी (उनके लिए जिन्होंने पहले अंग्रेजी का अध्ययन किया है), (घ) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य भारतीय भाषा, (ङ) अंग्रेजी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक विदेशी भाषा, (च) एक शास्त्रीय भाषा।

भावात्मक एकता समिति (Emotional Integration Committee)–इस समिति ने भी त्रिभाषा सूत्र का समर्थन किया।

कोठारी कमीशन, 1964–इस आयोग ने 'त्रिभाषा-सूत्र' इस प्रकार प्रतिपादित किया–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) केन्द्र की राजभाषा या सह-राजभाषा, (3) एक आधुनिक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा जो नं. (1), (2) के अंतर्गत न चुनी गई हो और जो शिक्षा का माध्यम न हो।

देश की आवश्यकताओं के सन्दर्भ में 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' ने 1956 ई. में **त्रिभाषा-सूत्र का प्रतिपादन** किया। बोर्ड ने सरकार के अनुमोदनार्थ ये दो सूत्र प्रस्तुत किए- (1) (क) मातृभाषा, या (ख) क्षेत्रीय भाषा, या (ग) मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम या (घ) क्षेत्रीय भाषा और एक शास्त्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम, (2) हिन्दी या अंग्रेजी, (3) एक आधुनिक भारतीय भाषा या एक आधुनिक यूरोपीय भाषा जो (1) और (2) में न ली गई हो।

(1) पहले सूत्र के समान, (2) अंग्रेजी या एक आधुनिक यूरोपीय भाषा, (3) हिन्दी (अहिन्दी क्षेत्रों के लिए या कोई अन्य आधुनिक भारतीय भाषा हिन्दी क्षेत्रों के लिए)।

त्रिभाषा-सूत्र का सरलीकरण, 1961–उपर्युक्त दोनों सूत्रों पर विचार करने के लिए केन्द्र सरकार ने 1961 में 'मुख्यमंत्रियों का सम्मेलन' आयोजित किया, जिसमें विचार- विमर्श के पश्चात यह निश्चय किया गया कि माध्यमिक स्तर पर किसी आधुनिक भारतीय भाषा का अध्ययन सम्भव नहीं है, अतः त्रिभाषा-सूत्र का यह सरलीकृत रूप तैयार किया गया- (1) क्षेत्रीय भाषा (यदि क्षेत्रीय भाषा मातृभाषा से भिन्न है तो क्षेत्रीय भाषा और मातृभाषा दोनों), (2) हिन्दी या हिन्दी-क्षेत्रों में इसके स्थान पर कोई अन्य भारतीय भाषा, (3) अंग्रेजी या कोई अन्य आधुनिक यूरोपीय भाषा। इस सरलीकृत रूप को व्यावहारिक स्तर पर लगभग पूरे भारत में अव्यावहारिक कहा गया, अतः सूत्र में दो संशोधन किए गए।

त्रिभाषा-सूत्र में संशोधन, 1962 तथा 1964–'भावात्मक एकता समिति' तथा 'कोठारी आयोग' ने रचनात्मक कदम उठाते हुए संशोधन के दो रूप प्रस्तुत किए। 'भावात्मक एकता-समिति' द्वारा सुझाया संशोधित रूप इस प्रकार था–

हिन्दी क्षेत्रों के लिए–

(क) निम्न प्राथमिक स्तर (कक्षा-1-5)–(1) केवल एक अनिवार्य भाषा–मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, जो शिक्षा का माध्यम हो, (2) किसी भारतीय भाषा या अंग्रेजी की शिक्षा स्वेच्छा से दी जा सकती है।

(ख) उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा- 6-8)– (1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) नं. 1 से भिन्न आधुनिक भारतीय भाषा, या एक शास्त्रीय भाषा, (3) अंग्रेजी।

(ग) निम्न माध्यमिक स्तर (कक्षा-9-10)–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) अंग्रेजी, (3) नं. (1) से भिन्न आधुनिक भारतीय भाषा या एक शास्त्रीय भाषा या एक आधुनिक विदेशी भाषा।

अहिन्दी-क्षेत्रों के लिए–

(क) निम्न प्राथमिक स्तर (कक्षा- 1-5)– (1) केवल एक अनिवार्य भाषा, मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, जो शिक्षा का माध्यम हो, (2) किसी भारतीय भाषा या अंग्रेजी की शिक्षा स्वेच्छा से दी जा सकती है।

(ख) उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा- 6-8)–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा या मातृभाषा और शास्त्रीय भाषा या मिश्रित पाठ्यक्रम या क्षेत्रीय भाषा और शास्त्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम, (2) हिन्दी, (3) अंग्रेजी।

(ग) निम्न माध्यमिक स्तर (कक्षा-9-10)–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) अंग्रेजी या हिन्दी, (3) नं. (1) से भिन्न आधुनिक भारतीय भाषा या एक शास्त्रीय भाषा, या एक आधुनिक विदेशी भाषा।

(घ) उच्च माध्यमिक स्तर (कक्षा-11-12)–इनमें से दो भाषाएँ–(1) हिन्दी, (2) एक आधुनिक भारतीय भाषा जो शिक्षा का माध्यम न हो, (3) अंग्रेजी।

सूत्र के क्रियान्वयन की कठिनाइयों का विस्तृत अध्ययन तथा सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए उसके आधारभूत सिद्धान्तों तथा उसकी व्यावहारिकता को आधार बनाते हुए 'कोठारी आयोग' ने त्रिभाषा सूत्र का संशोधित सूत्र इस रूप में प्रस्तुत किया–

(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) केन्द्र की राजभाषा या सह-राजभाषा, (3) एक आधुनिक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा, जो नं. (1) और (2) के अंतर्गत छात्र द्वारा न चुनी गई हो और जो शिक्षा का माध्यम न हो।

'कोठारी आयोग' ने भाषाओं के अध्ययन के संबंध में ये सुझाव दिए थे–

(क) निम्न प्राथमिक स्तर (कक्षा-1-4)–एक भाषा - मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा।

(ख) उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा-5-7) – दो भाषाएँ–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा। (2) अंग्रेजी या हिन्दी। (किसी तीसरी भाषा–अंग्रेजी/हिन्दी/क्षेत्रीय भाषा का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर उक्त भाषाओं के अतिरिक्त किया जा सकता है।)

(ग) निम्न माध्यमिक स्तर (कक्षा-8-10)–तीन भाषाएँ–अहिन्दी भाषा क्षेत्रों में सामान्य रूप से ये भाषाएँ होनी चाहिए–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) उच्च या निम्न स्तर की हिन्दी, (3) उच्च या निम्न स्तर की अंग्रेजी। हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में सामान्यतः ये भाषाएँ होनी चाहिए–(1) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (2) अंग्रेजी या हिन्दी, यदि अंग्रेजी मातृभाषा के रूप में ले ली गई है, (3) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा (शास्त्रीय भाषा का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर उक्त भाषाओं के अतिरिक्त किया जा सकता है।)

त्रिभाषा-सूत्र का अन्तिम रूप, 1968–भारत सरकार ने 'शिक्षा की राष्ट्रीय नीति' के अंतर्गत इस सूत्र के सभी रूपों का अध्ययन करने के पश्चात 1968 में यह अन्तिम रूप प्रदान किया, जिसके अनुसार माध्यमिक स्तर पर इन तीन भाषाओं का अध्ययन अनिवार्य है–

1. **हिन्दी-भाषी राज्यों में**–हिन्दी, अंग्रेजी और आधुनिक भाषा (जिसमें दक्षिण की कोई भाषा होनी चाहिए)।
2. **अहिन्दी-भाषी राज्यों में**–हिन्दी, अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषा।

यह ध्यान देने योग्य है कि त्रिभाषा सूत्र का संबंध माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा से है, उच्च शिक्षा से नहीं। त्रिभाषा सूत्र राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से दूरगामी परिणाम देने वाला है। यह सूत्र सांस्कृतिक और क्षेत्रीय अलगाववाद को दूर करने में सहायक है। इसी प्रकार, बहुत सीमा तक त्रिभाषा सूत्र देश की कई अन्य भाषाओं के साहित्य, परम्परा, जीवन शैली, सांस्कृतिक मूल्य आदि को समझने में सहायक है और यह समझ परायेपन को दूर कर निकटता निर्मित करेगी। त्रिभाषा सूत्र इस धारणा को भी दूर करेगा कि हिन्दी अन्य भाषाओं पर छा रही है तथा अन्य भाषाओं पर वह अपने प्रभुत्व को स्थापित कर रही है। स्पष्टतः त्रिभाषा सूत्र राष्ट्रीय एकता और भावात्मक निकटता लाने में सहायक है।

यह आश्चर्य की बात है कि स्वतंत्रता के बाद गठित समितियों तथा शिक्षा से जुड़े विभिन्न आयोगों ने द्विभाषा तथा बाद में त्रिभाषा सूत्र का व्यापक रूप से समर्थन ही नहीं किया अपितु उसे व्यावहारिक रूप प्रदान करने की अनुशंसाएँ तथा योजनाएँ

भी प्रस्तुत की, पर राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2005) जिसकी स्थापना प्रधानमंत्री ने की, ने अपनी अनुशंसाओं में त्रिभाषा सूत्र की पूर्णतः उपेक्षा की। इतना ही नहीं, ज्ञान आयोग ने अपनी अनुशंसाओं में अंग्रेजी को नये सिरे से प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। आयोग की अनुशंसा है कि अंग्रेजी को पहली कक्षा से ही पढ़ाया जाये।

अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 ने भी त्रिभाषा सूत्र के संबंध में स्पष्ट राय नहीं दी है। राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के पूर्व राज्य प्रायः द्विभाषी थे। उनमें रहने वाले नागरिक स्वाभाविक रूप से दो भाषाओं के जानकार रहते थे। पर जब से भाषा आधारित राज्य रचना हुई है, तब से भाषायी कट्टरता और एक भाषा को जानने की प्रवृत्ति बढ़ी है।

◆◆◆

(ग) राजभाषा आयोग तथा संसदीय समिति

9. राजभाषा आयोग तथा संसदीय समिति की सिफारिशों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–राजभाषा आयोग, 1955–राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद 344 (1) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए 7 जून, 1955 को श्री बाल गंगाधर खेर की अध्यक्षता में हिन्दी के विकास एवं प्रयोग के संबंध में सिफारिशें करने के लिए एक आयोग नियुक्त किया। खेर आयोग के नाम से ज्ञात इस आयोग ने 31 जुलाई, 1956 को अपना प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया। आयोग की प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार थीं–

(1) भारत की जनतांत्रिक पद्धति को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय स्तर पर सामूहिक माध्यम के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार करना संभव नहीं है। भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही अनिवार्य शिक्षा देने की संभावनाओं पर विचार करना चाहिए। प्रशासन को सार्वजनिक जीवन एवं दैनिक कार्यकलापों में विदेशी भाषा का प्रयोग करना उचित नहीं है।

(2) बहुमत द्वारा बोली तथा समझी जाने वाली हिंदी पूरे देश के लिए एक सुस्पष्ट भाषा माध्यम है।

(3) 14 वर्ष की उम्र तक के प्रत्येक विद्यार्थी को हिंदी का उचित ज्ञान प्राप्त कराया जाना चाहिए।

(4) सारे देश में माध्यमिक शिक्षा के स्तर तक हिंदी का शिक्षण अनिवार्य कर दिया जाए। हिंदीभाषी क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए एक दूसरी दक्षिण भारतीय भाषा का ज्ञान अनिवार्य किया जाना आयोग को मान्य नहीं है।

(5) सभी विश्वविद्यालयों को चाहिए कि हिंदी माध्यम से जो विद्यार्थी परीक्षा में बैठना चाहें, उनके लिए वे उचित प्रबंध करें।

(6) वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षण संस्थाओं में यदि सब विद्यार्थी एक भाषायी वर्ग के हों तो उनकी भाषा के माध्यम से ही उन्हें शिक्षा दी जाए और यदि विभिन्न भाषायी क्षेत्रों के हों तो हिंदी भाषा को ही सामान्य माध्यम के रूप में अपनाया जाए।

(7) प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए हिंदी का निश्चित अवधि में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए नियम लागू किए जाएँ और ऐसा न करने वालों को दंडित किया जाए।

(8) जनता से सीधा संबंध रखने वाले विभागों और संगठनों में आंतरिक कार्यों में हिंदी और जनता से व्यवहार हेतु क्षेत्रीय भाषा व्यवहार में लाई जाए।

(9) राज्य और संघ सरकार के अधिकारियों के लिए किसी स्तर का हिंदी ज्ञान अनिवार्य किया जाए और इसके लिए उन्हें अधिकाधिक पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया जाए।

(10) स्वीकृत सरकारी कानून हिंदी में ही होने चाहिए, परंतु जनता की सुविधा के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में उनके अनुवाद प्रकाशित किए जाने चाहिए।

(11) देश में न्याय देश की भाषा में किया जाए, जिसके लिए यह जरूरी है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की समस्त कार्रवाई तथा विलेखों, निर्णयों और आदेशों के आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद भी संलग्न किए जाएं।

(12) अखिल भारतीय और केंद्रीय सेवाओं हेतु कर्मचारियों के लिए हिंदी की योग्यता रखना आवश्यक किया जाए। इन परीक्षाओं में हिंदी का अनिवार्य प्रश्न-पत्र रखा जाए, परंतु अहिंदीभाषी विद्यार्थियों की सुविधा की दृष्टि से उसका स्तर अति साधारण रहे।

तत्पश्चात्, राजभाषा आयोग की सिफारिशों की जांच करके उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 344 के खंड (4) के अनुसार सितंबर, 1957 में 30 सदस्यों की (20 लोकसभा से और 10 राज्यसभा से) संसदीय राजभाषा समिति गठित की गई जिसकी पहली बैठक 16 नवंबर, 1957 को हुई। तत्कालीन गृह मंत्री श्री गोविन्द बल्लभ पंत की अध्यक्षता में समिति ने 26 बैठकों में व्यापक विचार-विमर्श के पश्चात् 8 फरवरी, 1959 को राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। आयोग और समिति का विचार था कि 26 जनवरी, 1965 के पश्चात अंग्रेजी का प्रयोग सह-राजभाषा के रूप में जारी रहना चाहिए। समिति ने सुझाव दिया कि अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केंद्रीय सेवाओं में भर्ती के लिए परीक्षा माध्यम के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहना चाहिए और हिंदी को कुछ समय बाद वैकल्पिक माध्यम के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। प्रतिवेदन पर 2 सितंबर से 4 सितंबर, 1959 तक लोकसभा में और 8 और 9 सितंबर, 1959 को राज्यसभा में बहस हुई। प्रधानमंत्री ने 4 सितंबर, 1959 को लोकसभा में एक वक्तव्य दिया। राजभाषा के प्रश्न पर सरकार के रवैये को मोटे तौर पर स्पष्ट करते हुए उन्होंने यह बात फिर से दोहराई कि अंग्रेजी को एक सहयोगी अथवा अतिरिक्त भाषा बनाया जाना चाहिए और किसी भी राज्य द्वारा भारत सरकार के साथ अथवा अन्य राज्यों के साथ पत्र-व्यवहार के लिए उसे प्रयुक्त किया जा सकेगा। उन्होंने आगे यह बात भी स्पष्ट की कि जब तक अहिंदी भाषी क्षेत्र, अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को बंद करने पर राजी न हो जाएँ, इस संबंध में समय-सीमा की कोई बंदिश नहीं होगी।

◆◆◆

10. राजभाषा संकल्प, 1968 पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर–राजभाषा संकल्प, 1968 दिनांक 18.01.1968 को संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया है। इसके अनुसार–

1. हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए भारत सरकार द्वारा प्रति वर्ष एक गहन और व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा।
2. हिंदी के साथ-साथ आठवीं अनुसूची की सभी भाषाओं के विकास के लिए भारत सरकार द्वारा राज्यों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा।
3. भारत सरकार द्वारा राज्यों के परामर्श से त्रिभाषा-सूत्र सभी राज्यों में लागू किया जाएगा। इसके अन्तर्गत हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी-अंग्रेजी के साथ कोई एक आधुनिक भारतीय भाषा, वरीयतः दक्षिण भारत की भाषा पढ़ाई जाएगी। इसी प्रकार हिंदीतर राज्यों में उनकी अपनी प्रादेशिक भाषा और अंग्रेजी के साथ हिंदी भी पढ़नी होगी।
4. (क) संघ लोक सेवा आयोग की भर्ती परीक्षाओं के लिए हिंदी अथवा अंग्रेजी किसी एक का ज्ञान अनिवार्य रूप से अपेक्षित होगा।

   (ख) भविष्य में संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श कर आठवीं अनुसूची की सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी।

◆◆◆

11. राजभाषा नीति के अनुपालन के लिए गठित विभिन्न समितियों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर–भारत की संसदीय प्रणाली में किसी योजना के उद्देश्य की गहन पड़ताल के लिए समितियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की समीक्षा एवं कार्यक्रम निर्धारण के लिए निम्नलिखित समितियाँ गठित की गई हैं–

1. केन्द्रीय हिंदी समिति–यह समिति हिंदी के विकास और प्रचार के विषय में तथा सभी सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रगामी प्रयोग सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न मंत्रालयों/विभागों/उपक्रमों/बैंकों में समन्वय का कार्य करती है। इस समिति के अध्यक्ष

प्रधानमंत्री होते हैं तथा सदस्य-सचिव राजभाषा विभाग के सचिव होते हैं। इस समिति में प्रधानमंत्री के अतिरिक्त कुछ केन्द्रीय मंत्री, कुछ राज्यों के मुख्यमंत्री, सांसद तथा हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के विद्वान सदस्य के रूप में सम्मिलित किए जाते हैं। राजभाषा नीति के संबंध में दिशा-निर्देश देने वाली यह सर्वोच्च समिति है।

2. केन्द्रीय कार्यान्वयन समिति--विभिन्न मंत्रालयों/विभागों तथा कार्यालयों में गठित विभिन्न राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के कार्यों में तालमेल रखने की दृष्टि से केन्द्रीय कार्यान्वयन समिति बनाए जाने की व्यवस्था की गयी है। यह समिति सरकारी प्रयोजनों के लिए हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग, सरकारी कर्मचारियों के प्रशिक्षण तथा राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किए गए अनुदेशों के कार्यान्वयन की समीक्षा करती है। सचिव, राजभाषा विभाग इसके अध्यक्ष होते हैं तथा विभिन्न मंत्रालयों/विभागों की राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्ष इसके सदस्य होते हैं। यह सरकारी अधिकारियों की समिति है।

3. हिंदी सलाहकार समिति--विभिन्न मंत्रालयों/विभागों की अपनी हिंदी सलाहकार समिति होती है। संबंधित मंत्रालय के मंत्री इसके अध्यक्ष और मंत्रालय के सचिव इसके सदस्य सचिव होते हैं। इसमें सामान्यतः 30 सदस्य होते हैं जिनमें से 15 सरकारी तथा 15 गैर-सरकारी होते हैं। इन समितियों में लोकसभा, राज्य सभा और संसदीय राजभाषा समिति द्वारा नामित संसद सदस्य, केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद का प्रतिनिधि, हिंदी से जुड़ी स्वैच्छिक संस्था का प्रतिनिधि, गृह मंत्रालय द्वारा नामित सदस्य, संबंधित मंत्रालय/विभाग द्वारा नामित हिंदी व राजभाषा के विद्वान गैर-सरकारी सदस्य होते हैं। समिति की बैठकों में सम्बद्ध मंत्रालय विभाग के वरिष्ठ अधिकारी भी भाग लेते हैं। संसद सदस्यों तथा हिंदी के विशिष्ट विद्वानों के अलावा संबद्ध मंत्रालय के वरिष्ट अधिकारी भी इसमें शामिल होते हैं। वर्ष में कम से कम इसकी दो बैठकें होती हैं। यह समिति अपने मंत्रालय/विभाग/उपक्रम में हिंदी की प्रगति की समीक्षा करती है तथा सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने तथा राजभाषा नीति के अनुपालन के लिए ठोस उपाय सुझाती है।

4. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति--देश के उन नगरों में जहाँ केन्द्रीय सरकार के 10 या इससे अधिक कार्यालय हों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया जाता है। समिति का गठन राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय से प्राप्त प्रस्ताव के आधार पर भारत सरकार के सचिव (राजभाषा) की अनुमति से किया जाता है। इस समिति की अध्यक्षता उस नगर में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि के वरिष्ठतम अधिकारियों में से किसी एक के द्वारा की जाती है। अध्यक्ष को राजभाषा विभाग द्वारा नामित किया जाता है। नामित किए जाने से पूर्व प्रस्तावित अध्यक्ष से समिति की अध्यक्षता के संबंध में लिखित सहमति प्राप्त की जाती है।

नगर में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालय/उपक्रम/बैंक आदि अनिवार्य रूप से इस समिति के सदस्य होते हैं। उनके वरिष्ठतम अधिकारियों (प्रशासनिक प्रधानों) को नियमित रूप से समिति की बैठकों में भाग लेना चाहिए। समिति के सचिवालय के संचालन के लिए समिति के अध्यक्ष द्वारा अपने कार्यालय से अथवा किसी सदस्य कार्यालय से हिंदी अधिकारी/हिंदी विशेषज्ञ को उसकी सहमति से समिति का सदस्य-सचिव मनोनीत किया जाता है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की वर्ष में दो बैठकें आयोजित की जाती हैं। इन बैठकों में राजभाषा विभाग/क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय के अधिकारी, केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद की संबद्ध शाखा के प्रतिनिधि, हिंदी शिक्षण योजना, केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान एवं केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के एक-एक अधिकारी को भी आमंत्रित किया जाता है।

इस समिति के गठन का मुख्य उद्देश्य केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की समीक्षा करना, इसे बढ़ावा देना और इसके मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर करना है। इस समिति के मुख्यतः निम्नलिखित कार्य हैं--

(i) राजभाषा अधिनियम/नियम, भारत सरकार द्वारा हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए जारी किए गए आदेशों एवं वार्षिक कार्यक्रम के कार्यान्वयन की स्थिति की समीक्षा करना।

(ii) हिंदी के संदर्भ साहित्य, टाइपराइटरों, कम्प्यूटरों, आशुलिपिकों, टाइपिस्टों आदि की उपलब्धता की समीक्षा करना।

(iii) हिंदी भाषा, हिंदी टंकण और हिंदी आशुलिपि एवं कम्प्यूटर के प्रशिक्षण से संबंधित समस्याओं पर विचार करना।

(iv) हिंदी संबंधी प्रतियोगिताएँ आयोजित करना, हिंदी दिवस/सप्ताह/पखवाड़ा का आयोजन, हिंदी से संबंधित सेमिनार, संगोष्ठी आदि आयोजित करना, हिंदी में सर्वोत्कृष्ट कार्य करने वाले कार्यालय को पुरस्कार/प्रशस्ति पत्र प्रदान करना।

5. विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति–विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन सभी छोटे-बड़े कार्यालयों में किया जाता है चाहे उनमें अनुसचिवीय कर्मचारियों की संख्या कुछ भी हो। कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान इस बैठक के अध्यक्ष होते हैं। सहायक निदेशक (रा.भा.) या हिंदी का कार्य देखने वाले कार्मिक इसके सदस्य-सचिव होते हैं। कार्यालय के सभी अधिकारी/पर्यवेक्षी स्टाफ इसके सदस्य होते हैं। प्रत्येक तिमाही में समान अंतराल पर इसकी बैठकें आयोजित की जानी आवश्यक हैं। राजभाषा विभाग या मंत्रालय का निरीक्षण दल या संसदीय राजभाषा समिति इस बैठक के नियमित आयोजन पर विशेष ध्यान देती है। किसी कार्यालय में हिंदी की प्रगति और प्रसार का मुख्य आधार यह समिति ही है। यह समिति जितनी ही प्रभावी होगी उतनी ही तीव्र गति से कार्यालय में हिंदी का प्रयोग बढ़ेगा।

इस समिति की बैठक में केन्द्रीय सचिवालय हिंदी परिषद की संबद्ध शाखा के प्रतिनिधि, हिंदी शिक्षण योजना के वरिष्ठ अधिकारी, राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय के प्रतिनिधि को भी आमंत्रित करना चाहिए।

विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में हिंदी के प्रगामी प्रयोग से संबंधित तिमाही प्रगति रिपोर्ट की समीक्षा, वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति, पुरस्कार योजनाएँ, हिंदी शिक्षण, हिंदी टाइपिंग/आशुलिपि/कम्प्यूटर प्रशिक्षण, हिंदी दिवस/सप्ताह/पखवाड़ा/माह का आयोजन, संसदीय राजभाषा समिति की संस्तुतियों पर जारी आदेशों, निरीक्षण, दिए गए आश्वासनों पर चर्चा की जाती है।

◆◆◆

12. संसदीय राजभाषा समिति (1976) का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर–राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 4 (1) में प्रावधान है कि इस अधिनियम के लागू होने की तिथि (26 जनवरी, 1965) के 10 वर्ष बाद राष्ट्रपति की पूर्व स्वीकृति से संसद के दोनों सदनों द्वारा एक संकल्प पारित कर संसदीय राजभाषा समिति का गठन किया जाएगा। इस समिति में 30 सदस्य होगे जिनमें से 20 लोक सभा से तथा 10 राज्य सभा से आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे। इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करे और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करे। राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवाएगा। राष्ट्रपति राज्य सरकारों द्वारा दिए गए मत पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन पर या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा।

उपर्युक्त प्रावधान के आलोक में जनवरी, 1976 में संसदीय राजभाषा समिति का गठन किया गया। इसके 30 सदस्य हैं जिनमें 10-10 सदस्यों की तीन उप-समितियाँ हैं। उनके निरीक्षण के लिए अलग-अलग मंत्रालय, विभाग विनिर्दिष्ट किए गए हैं। गृहमंत्री पदेन इसके अध्यक्ष होते हैं और एक वरिष्ठ सांसद इसके उपाध्यक्ष चुने जाते हैं।

समिति ने अब तक देश-विदेश में केन्द्रीय सरकार के 10,308 से अधिक कार्यालयों का निरीक्षण कर लिया है। इसके अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों से 882 साक्ष्य भी लिये हैं जिनमें राज्यपाल, मुख्यमंत्री, न्यायाधीश, विधि विशेषज्ञ, मंत्रालय के सचिव, स्वयंसेवी संगठनों के प्रमुख, प्रचार माध्यम/यांत्रिक सुविधाओं के निर्माता शामिल हैं। समिति ने अपने निरीक्षणों से संबंधित प्रतिवेदन के अब तक 09 खंड राष्ट्रपति महोदय को प्रस्तुत कर दिए हैं जिनमें पहला खंड जनवरी, 1987 में, दूसरा जुलाई, 1987 में, तीसरा फरवरी, 1989 में, चौथा नवम्बर, 1989 में, पांचवां मार्च, 1992 में, छठा नवम्बर, 1997 में, सातवां मई, 2002 में, आठवां अगस्त, 2005 में और नौवां जून, 2011 में प्रस्तुत किया गया है।

इस समिति का सचिवालय अन्य संसदीय समितियों की तरह लोक सभा के अधीन नहीं होता बल्कि यह बिल्कुल अलग है। यह समिति भारत की एकमात्र ऐसी उच्चाधिकार प्राप्त समिति है जो अपना प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत करती है। वस्तुतः यह एक मिनी संसद है। समिति की गरिमा, इसकी सजगता और राजभाषा हिंदी के प्रसार के लिए इसकी सक्रियता निश्चित रूप से हिंदी के प्रयोग के लिए सकारात्मक प्रयास है। जिस भी कार्यालय में समिति ने एक बार भी निरीक्षण किया है उसमें हिंदी के प्रयोग को आशातीत गति मिली है। वर्तमान में गृहमंत्री अमित शाह संसदीय राजभाषा समिति के अध्यक्ष हैं।

◆◆◆

13. संसदीय राजभाषा समिति के निरीक्षण के समय किन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए?

उत्तर–संसदीय राजभाषा समिति एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति है। यह भारत की एकमात्र ऐसी समिति है जो राष्ट्रपति प्रति उत्तरदायी है। इसके सदस्य राजभाषा हिंदी के वैधानिक पक्षों के विशेषज्ञ होते हैं। यह समिति वस्तुतः एक मिनी संसद इसलिए समिति की गरिमा, उसकी मर्यादा और सम्मान का सदैव ध्यान रखना चाहिए। केन्द्र सरकार के कार्यालयों में राजभा के रूप में हिंदी को स्थापित करने का जो उल्लेखनीय कार्य इस समिति ने किया है उसे अब तक जारी नियम, अधिनियम भी नहीं कर सका है। जिस कार्यालय का यह समिति एक बार भी निरीक्षण कर लेती है उसमें हिंदी के बारे में लोगों की बदल जाती है। इसलिए समिति के निरीक्षण को बहुत गंभीर और सकारात्मक रूप में लेना चाहिए। यह समिति न तो किसी प्रताड़ित करना चाहती है और न ही दंडित। बल्कि यह अपने सुझावों और निर्देशों से हिंदी के प्रयोग में व्याप्त जड़ता को तोड़ने मदद करती है। इसके आगमन से कार्यालय में पदस्थ हिंदी कार्मिकों का मार्ग सुगम हो जाता है। निरीक्षण के दौरान निम्नलिखि बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए–

1. **निरीक्षण प्रश्नावली**–यह समिति के निरीक्षण का मुख्य आधार है। इसमें राजभाषा हिंदी के लगभग सभी पक्षों जानकारी मांगी गई है। निरीक्षण सामग्री में दी जाने वाली सूचनाएं सही, सटीक और तथ्यपूर्ण होनी चाहिए। इस एक कॉलम में दी गई सूचना को दूसरे कॉलम में दी गई सूचना से क्रॉस चेक किया जा सकता है। इसलिए झू गलत या बनावटी आंकड़े नहीं देने चाहिए।
2. **निरीक्षण कक्ष**–निरीक्षण का स्थान समिति की गरिमा के अनुकूल सुगम, शांत और सुविधाजनक होना चाहिए अनुशासन का विशेष ध्यान रखा जाए। निरीक्षण के दौरान केवल उसी सदस्य को बोलना चाहिए जिससे समि के माननीय सदस्य प्रश्न करें। समिति को दिए गए उत्तर स्पष्ट, सार्थक और तार्किक होने चाहिए। जिस प्रश्न बारे में सही सूचना न उपलब्ध हो, उसे बाद में देने का आश्वासन दिया जा सकता है। निरीक्षण से पूर्व निरीक्ष प्रश्नावली के पृष्ठ 33 से 46 तक दिए गए निर्देशों का अच्छी तरह अध्ययन कर लेना चाहिए। निरीक्षण के सम कार्यालय अध्यक्ष को यह स्मरण रखना चाहिए कि अपने कार्यालय में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की जिम्मेदा उन्हीं की है।

◆◆◆

14. संसदीय राजभाषा समिति ने अपने प्रेक्षणों (Observations) में किन बातों पर विशेष बल दिया है?

उत्तर–संसदीय राजभाषा समिति ने क.रा.बी. निगम के विभिन्न निरीक्षणों के दौरान निम्नलिखित बातों पर विशेष बल दि है, कार्यालय में इनका अनुपालन अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए–

1. हिंदी में प्रवीणता प्राप्त अधिकारियों/कर्मचारियों द्वारा अपना शतप्रतिशत कार्य हिंदी में किया जाना चाहिए।
2. नियम 5 के अन्तर्गत हिंदी में प्राप्त ऐसे पत्रों की, जिनका हिंदी में उत्तर देना अपेक्षित न हो, हिंदी में पावती भेज जाए।
3. कार्यालय की वेबसाइट को पूर्णतः द्विभाषी किया जाए।
4. सभी अधिकारियों/अनुभागों को अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश/शब्दावली वितरित की जाए।
5. कार्यालय में उपलब्ध सभी कम्प्यूटरों में हिंदी में काम करने की सुविधा दी जाए। यूनिकोड समर्थित सॉफ्टवेय संस्थापित किए जाएं।
6. 'क', 'ख' क्षेत्रों से प्राप्त सभी अंग्रेजी पत्रों के उत्तर हिंदी में दिए जाएं।
7. टाइपिंग/आशुलिपि का प्रशिक्षण पूरा किया जाए।
8. हिंदी पुस्तकों की खरीद पर पुस्तकालय बजट का 50 प्रतिशत खर्च किया जाए।
9. विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें प्रत्येक तिमाही में समान अंतराल पर आयोजित की जाएं।
10. विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष और सदस्यों द्वारा अपना अधिक से अधिक कार्य हिंदी में किया जाए।

11. विज्ञापन एवं प्रचार पर किए गए कुल व्यय का 50 प्रतिशत व्यय हिंदी विज्ञापनों पर किया जाए।
12. राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के कागजात अनिवार्य रूप से द्विभाषी रूप में जारी किए जाएं।
13. पूरा काम हिंदी में करने के लिए अधिक से अधिक अनुभाग विनिर्दिष्ट किए जाएं।
14. हिंदी में प्रवीणता प्राप्त अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना शतप्रतिशत कार्य हिंदी में करने के लिए नियम 8(4) के अंतर्गत व्यक्तिशः आदेश जारी किए जाएं।

◆◆◆

15. राजभाषा हिन्दी की संवैधानिक स्थिति का मूल्यांकन करें।

उत्तर–राजभाषा की संवैधानिक स्थिति–राजभाषा की संवैधानिक स्थिति पर चर्चा करने से पहले हमें इतिहास के कुछ पृष्ठ पलटने होंगे। हम सभी जानते हैं कि हिंदी हमारे स्वतंत्रता संग्राम से बहुत गहराई से जुड़ी हुई है। महात्मा गांधी के जन-आंदोलन के साथ-साथ हिंदी संपर्क भाषा के रूप में संपूर्ण भारत के दूर-दराज के इलाकों तक पहुंच गई। उस समय विभिन्न राजनैतिक संगठनों, धर्मों, संप्रदायों के सामने केवल एक उद्देश्य था–स्वतंत्रता की प्राप्ति। इस महान उद्देश्य के सामने भाषायी संकीर्णता तथा क्षेत्रीयता महत्वहीन हो गई थी। परंतु स्वतंत्रता प्राप्त होते ही जब संविधान निर्माताओं के समक्ष स्वतंत्र देश की एक राजभाषा का निर्णय करने का समय आया तो इस विषय पर कई मतभेद उभर कर सामने आने लगे। स्वतंत्र भारत की संविधान सभा की पहली बैठक 9 दिसंबर, 1946 को हुई और लगातार दो-ढाई वर्ष तक संविधान निर्माण का कार्य चलता रहा। संविधान सभा में राजभाषा पर तीन दिन तक लंबी बहस के पश्चात 14 सितंबर, 1949 को स्वतंत्र भारत के संविधान में हिंदी को सर्वसम्मति से राजभाषा का स्थान दे दिया गया। संविधान के भाग 17 के अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा संबंधी विशेष प्रावधान दिए गए हैं, जो इस प्रकार हैं–

अनुच्छेद-343–राजभाषा और अंकों का प्रयोग–343(1)–भारत संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी होगी। संघ के सरकारी कार्यों में भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूपों का प्रयोग होगा। 343 (2)–संविधान लागू होने (26 जनवरी, 1950) से 15 वर्ष (26 जनवरी, 1965) तक अंग्रेजी भाषा सरकारी कार्यों में पूर्ववत् चलती रहेगी। इस अवधि में राष्ट्रपति सरकारी कार्यों में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी तथा भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूप के स्थान पर देवनागरी रूप में प्रयोग को आदेश द्वारा प्राधिकृत कर सकते हैं। 343 (3)–संसद 26 जनवरी, 1965 अर्थात 15 साल के बाद भी अंग्रेजी भाषा या देवनागरी अंकों के प्रयोग को विधि द्वारा विनिर्दिष्ट प्रयोजनों में जारी रख सकेगी।

अनुच्छेद-344–राजभाषा आयोग का गठन–संविधान के प्रारंभ से 5 और 10 वर्षों की समाप्ति पर राष्ट्रपति हिंदी के विकास और प्रयोग की स्थिति का जायजा लेकर उसके प्रगामी प्रयोग को निश्चित करने के लिए आयोग का गठन करेंगे। 343(4)–आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के लिए 30 सदस्यों की संसदीय समिति (जिसमें लोकसभा के 20 तथा राज्यसभा के 10 सदस्य होंगे) गठित की जाएगी। समिति अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को देगी। तदनुसार राष्ट्रपति आदेश जारी करेंगे।

अनुच्छेद-351–हिंदी के विकास के लिए निर्देश–हिंदी भाषा का प्रसार, विकास करने, उसे भारत की सामासिक संस्कृति के तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने की जिम्मेदारी केंद्रीय सरकार की होगी। इसलिए राजभाषा हिंदी अपना शब्द भंडार मुख्यतः संस्कृत और गौणतः आठवीं अनुसूची में सम्मिलित अन्य भारतीय भाषाओं से ग्रहण कर अपने आपको समृद्ध करेगी।

संसद में प्रयोग होने वाली भाषा–अनुच्छेद 120 के भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संसद में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। परंतु यथास्थिति, राज्यसभा का सभापति या लोकसभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को जो हिंदी या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा। जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की कालावधि की समाप्ति के पश्चात यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो कि अंग्रेजी में ये शब्द उसमें से लुप्त कर दिए गए हों।

विधानमंडल में प्रयोग होने वाली भाषा–अनुच्छेद 210 के भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान-मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। परंतु यथास्थिति, विधानसभा का अध्यक्ष या विधानसभा का सभापति अथवा ऐसे में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को,

अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकता है (यह अनुच्छेद जम्मू-कश्मीर पर लागू नहीं है)। जब तक रा का विधान मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान में प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति के पश्चात यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो कि अंग्रेजी में ये शब्द उसमें से लुप्त कर दिए गए हैं। परंतु हिमाचल प्रदेश, मणिपुर मेघालय और त्रिपुरा के राज्य विधान-मंडलों में यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो कि उसमें आने वाले "पंद्रह वर्ष" शब्दों के स्थान पर "पच्चीस वर्ष" शब्द रख दिए गए हों।

संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाएं–

(1) असमिया	(2) ओड़िया	(3) उर्दू	(4) कन्नड़	(5) कश्मीरी	(6) गुजराती
(7) तमिल	(8) तेलुगु	(9) पंजाबी	(10) बांग्ला	(11) मराठी	(12) मलयालम
(13) संस्कृत	(14) सिंधी	(15) हिंदी	(16) मणिपुरी	(17) नेपाली	(18) कोंकणी
(19) संथाली	(20) बोडो	(21) डोंगरी	(22) मैथिली		

अनुच्छेद 345–राज्यों की राजभाषाएं–राज्यों के विधानमंडल अपने राज्य में सरकारी प्रयोजनों के लिए स्थानीय भाषा भाषाओं या हिंदी को अंगीकार करेंगे। जब तक विधि द्वारा ऐसा उपबंध नहीं किया जाता, तब तक राज्य के सरकारी प्रयोजन के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग पूर्ववत जारी रहेगा।

अनुच्छेद-346–संघ (केंद्र) और राज्य अथवा राज्यों के बीच संचार की भाषा–संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए उस समय प्रयुक्त/प्राधिकृत भाषा ही राज्य और संघ तथा राज्यों के बीच संपर्क भाषा रहेगी। यदि दो या अधिक राज्य अपनी आपसी सहमति से पत्राचार में हिंदी का प्रयोग करना चाहें, तो कर सकते हैं।

अनुच्छेद-347–राज्यों में द्वितीय राजभाषा–यदि किसी राज्य के जनसमुदाय द्वारा बोली जाने वाली भाषा को शासकीय मान्यता प्रदान करने की मांग की जती है तो राष्ट्रपति उस भाषा को राज्य के सभी या कुछ एकशासकीय प्रयोजनों के लि मान्यता देने के आदेश देंगे।

अनुच्छेद-348–उच्चतम न्यायालय/उच्च न्यायालय और अधिनियमों आदि की भाषा–जब तक कोई व्यवस्था न की जा तब तक उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय की कार्यवाही अंग्रेजी में होगी। केंद्र और राज्यों के सभी अधिनियमों/विधेयकों अध्यादेशों/आदेश/नियम/विनिमय/उपविधियों के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे। साथ ही राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति क अनुमति से राज्य के उच्च न्यायालय की कार्यवाही में हिंदी अथवा राज्य की राजभाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा (निर्णय आज्ञप्ति/आदेश के लिए नहीं)

अनुच्छेद-349–भाषा संबंधी कुछ विधियों को अधिनियमित करना (संघ की राजभाषा में संशोधन)–संविधान में प्रारंभ से 1 वर्ष की अवधि के दौरान उच्चतम/उच्च न्यायालयों की कार्यवाही अंग्रेजी के अलावा अन्य किसी भाषा में करने अथवा शासकी प्रयोजनों में प्रयुक्त भाषा के लिए कोई संशोधन लोकसभा/राज्यसभा में राष्ट्रपति की पूर्वानुमति से ही लाया जाएगा।

अनुच्छेद-350–व्यथा निवारण के लिए संघ की राजभाषा–कोई भी व्यक्ति अपनी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य क किसी भी पदाधिकारी को संघ या राज्य में उस समय प्रयुक्त राजभाषा में अभ्यावेदन दे सकता है। 350 'क'–भाषायी अल्पसंख्यक के लिए प्राथमिक स्तर में मातृभाषा में शिक्षा देने की व्यवस्था की जाए। 350 'ख'–एक विशेष पदाधिकारी की नियुक्ति।

◆◆◆

3

राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी

(क) स्वाधीनता आंदोलन और राष्ट्रभाषा हिंदी की संकल्पना

1. **स्वाधीनता आंदोलन और राष्ट्रभाषा हिंदी की संकल्पना पर प्रकाश डालिए।**

उत्तर–स्वाधीनता आंदोलन और राष्ट्रभाषा हिंदी की संकल्पना–वैसे तो राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन की विधिवत शुरुआत सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ हो गई थी किन्तु 20वीं सदी के आरम्भ से इसकी तीव्रता में गुणात्मक परिवर्तन आया। एक आधुनिक राष्ट्र राज्य के रूप में भारत जन्म ले रहा था और उसके साथ ही राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय पहचान व अस्मिता की सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय पुनर्जागरण की चेतना भी उभरने लगी थी। राष्ट्रीय जागरण अब सांस्कृतिक जागरण में रूपान्तरित हो रहा था। राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव राजनीतिक जीवन, सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक जीवन और राष्ट्रीय जीवन पर भी पड़ा। भारतीय संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति की टकराहट से उत्पन्न रचनात्मक ऊर्जा ने अपनी पहचान को पाने की आकुलता एवं चुनौती राष्ट्रनायकों के समक्ष रख दी थी। औपनिवेशिक विमर्श से उत्पन्न राष्ट्रीयता की भावना का उदय भारत समेत लगभग सभी गुलाम देशों में हुआ। एक राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रीय भाषा होती है जो उसकी पहचान भी होती है, यह सवाल स्वाधीनता सेनानियों और सुधारकों के मानस को आंदोलित करता था। 19वीं शताब्दी के सुधारकों के समक्ष जब यह प्रश्न उठा कि जो नवीन भारत जन्म ले रहा है उसकी राष्ट्रभाषा क्या हो, तब अनायास ही वे इस निर्णय पर पहुंचे कि नवीन भारत की राष्ट्रभाषा केवल हिन्दी ही हो सकती है।

राष्ट्रवाद की भावना को संपूर्ण भारतवर्ष के जन-जन में फैलाने के लिए अन्तः प्रान्तीय सम्पर्क की आवश्यकता महसूस की गई। तब भी यह महसूस किया गया कि सभी प्रादेशिक पूर्वाग्रहों से ऊपर उठाकर वह (सम्पर्क भाषा) भारतीय भाषा हिन्दी ही हो सकती है। क्योंकि एक बहुभाषी देश में स्वाधीनता की चेतना को प्रत्येक गांव और प्रत्येक आदमी तक पहुंचाने के लिए, राष्ट्रीय एकता के निर्माण के लिए हिन्दी ही एकमात्र अस्त्र हो सकती है। राजा राममोहन राय ने भी महसूस किया कि जनता में जाने और उसे आंदोलित करने के लिए अंग्रेजी का कोई उपयोग नहीं। उसे यह अपनी भाषा के द्वारा ही करना होगा। राष्ट्रीय आजादी के लिए राष्ट्रीय एकता और अखंडता अनिवार्य होती है और राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बांधने वाले सूत्र के बिना यह परिकल्पना साकार नहीं हो सकती। अतः चुनौती कई स्तरों पर थी। उस सूत्र की पहचान करते हुए उस दौर के लगभग सभी राष्ट्रनायकों ने विचार किया। 1875 में ब्रह्मसमाज के प्रधान नेता केशवचन्द्र सेन ने कहा कि अभी कितनी ही भाषाएं भारत में प्रचलित हैं, उनमें से हिन्दी भाषा ही सर्वत्र प्रचलित है। इसी हिन्दी को भारत-वर्ष की एकमात्र भाषा स्वीकार कर लिया जाए तो सहज ही में यह एकता सम्पन्न हो सकती है।

राष्ट्र निर्माण और भाषा-निर्माण की दोहरी प्रक्रिया समानान्तर रूप से एक-दूसरे से सहयोग करते हुए सम्पन्न हो रही थी। हिन्दी राष्ट्रीय भावनाओं का प्रतीक बन चुकी थी। राष्ट्रीय आकांक्षा, मुक्ति के स्वप्नों को आंखों में लिए नयी सामाजिकता के निर्माण के लिए, भारत की विविधता के इन्द्रधनुषी रंग को एक भाषा के माध्यम से पकड़कर उनमें अन्तर्निहित सौन्दर्य को उद्घाटित

करने के लिए, भाषागत वैविध्य की बाधा को पाटकर उसमें राष्ट्रीय एकता व स्वाधीनता के विचारों को अभिव्यक्त करने का समर्थ और सक्षम माध्यम के रूप में हिन्दी की पहचान हो चुकी थी। इसी को लक्षित करते हुए बंकिम चन्द्र ने कहा कि "हिन्दी एक दिन भारत की राष्ट्रभाषा होकर रहेगी, क्योंकि हिन्दी भाषा की सहायता से भारत के विभिन्न प्रदेशों में जो ऐक्य बंधन स्थापित करने में समर्थ होंगे, वही सच्चे भारत बंधु कहलाने योग्य हैं।

भारत के स्वत्व और पहचान के संदर्भ को चिन्हित करके ही राष्ट्रप्रेम को जन-जन में फैलाने के लिए हिन्दी भाषा को माध्यम के रूप में चुना गया तथा इसे भारत की समस्त उन्नति का मूलमंत्र घोषित किया गया–

"निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल।"

पहचान का संबंध अतीत से होता है। अतः अपने अतीत के गौरव को पुनर्सृजित कर, अपनी परंपरा का गौरव गान कर भारतीय नवजागरण की भाषा बनने का गौरव हिन्दी को ही जाता है। इस स्वत्व से ही स्वदेश प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग, स्वदेशी भाषा और अंततः स्वतंत्रता की प्राप्ति का लक्ष्य इसी नवजागरण और औपनिवेशिक विमर्श की कोख से पैदा होता है। सांस्कृतिक पुनर्जागरण ने अपनेपन की भावना को गाढ़ापन प्रदान किया। सार्वजनिक जीवन के सभी क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग का प्रश्न इसी औपनिवेशिक विमर्श की प्रसव पीड़ा से उत्पन्न हुआ था। यही कारण था कि हिन्दी का मसला सिर्फ एक भाषा का मसला न रहकर एक राष्ट्रीय भाषा और एक राष्ट्रीय पहचान का मसला भी था। यही कारण था कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने सन् 1882 में शिक्षा आयोग के समक्ष इस पीड़ा को व्यक्त करते हुए कहा था–

"सभी सभ्य देशों की अदालतों में उनके नागरिकों की बोली और लिपी का प्रयोग होता है। यही देश है, जहां न तो अदालती भाषा..... हिन्दी का प्रयोग होने से जमींदार, साहूकार, व्यापारी और सभी को सुविधा होगी, क्योंकि सभी जगह हिन्दी का ही प्रयोग है।"

हिन्दी भाषा भारत के अधिकांश प्रदेशों और लोगों में बोली और समझी जाने के कारण एक सार्वदेशिक भाषा के पद पर आसानी से स्थापित होकर राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में कार्य करने लगी। विलक्षण बात यह है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रस्ताव उन महापुरुषों ने किया जिनमें अधिकांश की मातृभाषा हिन्दी न होकर बांग्ला, गुजराती, मराठी या कोई और भाषा थी। हिन्दी एवं अहिन्दी भाषी क्षेत्र के इन सभी नेताओं ने इसे सम्मिलित भारत की संस्कृति और राष्ट्रीय भावना का प्रतीक माना। राष्ट्रीय एकता और राष्ट्र प्रेम को साधने के लिए सुभाषचन्द्र बोस ने भी हिन्दी की भूमिका को इन शब्दों में रेखांकित किया है–**"देश की एकता के लिए एक भाषा होना जितना आवश्यक है, उससे अधिक आवश्यक है–देश भर के लोगों में देश के प्रति विशुद्ध प्रेम तथा अपनेपन का होना। यदि आज हिन्दी मान ली गई है, तो वह अपनी सरलता, व्यापकता और क्षमता के कारण। वह किसी प्रांत विशेष की भाषा नहीं है बल्कि सारे देश की भाषा है।"**

भाषा की मुक्ति के बिना राष्ट्र की मुक्ति संभव नहीं है। इसलिए भाषा के स्तर पर भी मुक्ति की मांग स्वाभाविक है। अंग्रेज और अंग्रेजी के वर्चस्व को तोड़ना प्रकारान्तर से राष्ट्रीय अस्मिता को प्राप्त करने का ही दूसरा नाम था। अतः कुछ राष्ट्रीय नेता स्वदेशी को अपनाने और विदेशी के बहिष्कार का संकल्प लेकर और उसे स्वाधीनता की समग्र परिकल्पना से जोड़कर ही स्वदेशी वस्तु, स्वदेशी भाषा, स्वराज्य, स्वतंत्रता (स्वयं का तंत्र) को विकसित करने की मांग करने लगे। क्योंकि भाषा की स्वायत्तता के बिना मानसिक स्वराज्य संभव नहीं है। शिक्षा, प्रशासन, न्याय आदि सभी क्षेत्रों में हिन्दी को लागू करने की मांग जोर पकड़ने लगी। अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी शिक्षा विदेशी दासता का प्रतीक मानी जाने लगी और हिन्दी हिन्दुस्तान की पहचान तथा हिन्दुस्तान की आत्मा के रूप में लोगों के मन में बस गई तथा कहा गया–

"हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्तान हमारा"

पूरे भारत वर्ष के स्वाधीनता सेनानियों ने हिन्दी और हिन्दुस्तान को अभिन्न समझकर ही राष्ट्रप्रेम के साथ-साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति भी अपनी आस्था व्यक्त की। राजनीतिक पार्टी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसी भावना को केन्द्र में रखकर अपने विशेष अधिवेशन में हिन्दी के पक्ष में प्रस्ताव पारित कर अपनी कार्रवाई हिन्दी में करने का फैसला किया। सन् 1906 में कांग्रेस अधिवेशन में दादा भाई नौरोजी ने प्रथम बार हिन्दी शब्द 'स्वराज्य' का प्रयोग किया। बाद में तिलक ने इसे विकसित करते हुए जोरदार शब्दों में कहा–"स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" तिलक का यह वाक्य पूरे भारतवर्ष में एक नारे के रूप में लोगों के दिलों में गूंजने लगा। स्वराज्य प्राप्ति की यह चिंगारी अब आम लोगों से जुड़ने लगी। जो कांग्रेस पढ़े-लिखे लोगों की पार्टी थी, उससे आम लोगों के जुड़ने और जोड़ने में, राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन को व्यापक आधार देने

ने हिन्दी एक महत्वपूर्ण कड़ी साबित हुई। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन को करोड़ों निरक्षर लोगों तक पहुँचाने तथा निरक्षर स्त्रियों और भूखे लोगों को स्वराज्य से जोड़ने की भाषा महात्मा गांधी ने हिन्दी को ही समझा। गांधीजी की स्पष्ट मान्यता थी कि भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है–

"यदि स्वराज्य अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतवासियों का है और केवल इनके लिए है, तो सम्पर्क भाषा अवश्य अंग्रेजी होगी। लेकिन यदि वह करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों और सताए हुए अछूतों के लिए है, तो सम्पर्क भाषा केवल हिन्दी ही हो सकती है।"

हिन्दी के माध्यम से आम आदमी को राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन से जोड़ने का ही परिणाम था कि राष्ट्रीय आजादी को चाहने वालों, राष्ट्र के लिए मर मिटने वाले लोगों की संख्या अब करोड़ों में हो गई। देश के लिए अपना सर्वस्व समर्पण करने, त्याग व बलिदान करने की भावना से समूचा देश आंदोलित हो गया। हिन्दी और स्वाधीनता आंदोलन दोनों के मिल जाने से इन दोनों का आधार राष्ट्रीय हो गया। अब स्वाधीनता के विचारों को पूरे भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत, प्रत्येक धर्म, प्रत्येक व्यक्ति तक हिन्दी के माध्यम से पहुँचाना आसान था।

राष्ट्रीय एकता और स्वाधीनता आंदोलन में हिन्दी की भूमिका को पहचान कर ही राष्ट्रनायकों ने उसे राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित किया। उन राष्ट्रनायकों में स्वामी दयानंद सरस्वती, सुभाषचन्द्र बोस, रवीन्द्रनाथ टैगोर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी, पुरुषोत्तम दास टंडन, राजेन्द्र प्रसाद आदि प्रमुख थे।

हिन्दी के महत्व को समझ कर ही स्वाधीनता सेनानियों ने उसके माध्यम से राष्ट्रीय विचारों को लोगों तक पहुंचाने के लिए हिन्दी पत्रकारिता को अपनाया। पं. मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी, तिलक आदि सभी हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से जन-जागृति, समाज-सुधार, राष्ट्रीय चेतना, देशभक्ति आदि का कार्य करते रहे। 'मास' से कटकर महान से महान विचार भी अपने गंतव्य तक नहीं पहुंच सकता। इसलिए हिन्दी को 'मास' की भाषा समझकर मास को आंदोलित व संगठित करने का एक सशक्त माध्यम बनी–हिन्दी पत्रकारिता। हिन्दी आंदोलन और स्वाधीनता आंदोलन दोनों एक-दूसरे का हाथ पकड़कर आगे बढ़ते गए। हिन्दी का साहित्यकार और स्वाधीनता सेनानी दोनों उसी राष्ट्रीय भावना को अपने-अपने तरीके से लेकर चलते रहे। इस अर्थ में उस युग का साहित्यकार किसी स्वाधीनता सेनानी से कम नहीं है तो दूसरी तरफ उस दौर के स्वाधीनता सेनानी भी साहित्यकार की भूमिका में नजर आते हैं। इन दोनों वर्गों में रास्ते का भेद है, मनोभेद नहीं। दोनों का लक्ष्य एक ही है और वह है–राष्ट्रीय आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता, एकता व अखंडता। साहित्य और राजनीति उस दौर में एक मिशन था, प्रोफेशन नहीं। इसीलिए साहित्य भी उस दौर में राजनीति के आगे-आगे चलने वाली रोशनी थी जो आजादी का रास्ता दिखाते हुए बढ़ रही थी। और यह सफर तब तक चलता रहा जब तक भारत को **1947** में आजादी नहीं मिल गई।

◆◆◆

2. 'स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास' विषय का विस्तार से वर्णन करें।

उत्तर–स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास–राष्ट्रभाषा (National Language) क्या है? राष्ट्रभाषा का शाब्दिक अर्थ है–समस्त राष्ट्र में प्रयुक्त भाषा अर्थात् आम जन की भाषा (जनभाषा)। जो भाषा समस्त राष्ट्र में जन-जन के विचार-विनिमय का माध्यम हो, वह राष्ट्रभाषा कहलाती है।

राष्ट्रभाषा राष्ट्रीय एकता एवं अतंरराष्ट्रीय संवाद-सम्पर्क की आवश्यकता की उपज होती है। वैसे तो सभी भाषाएँ राष्ट्रभाषाएँ होती हैं किन्तु राष्ट्र की जनता जब स्थानीय एवं तात्कालिक हितों व पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर अपने राष्ट्र की कई भाषाओं में से किसी एक भाषा को चुनकर उसे राष्ट्रीय अस्मिता का एक आवश्यक उपादान समझने लगती है तो वही राष्ट्रभाषा है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान राष्ट्रभाषा की आवश्यता महसूस हुई थी। भारत के संदर्भ में इस आवश्यकता की पूर्ति हिन्दी ने की। यही कारण है कि 'हिन्दी' स्वतंत्रता संग्राम के दौरान (विशेषतः 1900 ई०-1947 ई०) राष्ट्रभाषा बनी।

- राष्ट्रभाषा शब्द कोई संवैधानिक शब्ब नहीं है बल्कि यह प्रयोगात्मक, व्यावहारिक व जनमान्यताप्राप्त शब्द है।
- राष्ट्रभाषा सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं-परंपराओं के द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर देश को जोड़ने का काम करती है अर्थात् राष्ट्रभाषा की प्राथमिक शर्त देश में विभिन्न समुदायों के बीच भावनात्मक एकता स्थापित करना है।
- राष्ट्रभाषा का प्रयोग क्षेत्र विस्तृत और देशव्यापी होता है। राष्ट्रभाषा सारे देश की संपर्क-भाषा होती है। इसका व्यापक जनाधार होता है।

- राष्ट्रभाषा हमेशा स्वभाषा ही हो सकती है क्योंकि उसी के साथ जनता का भावनात्मक लगाव होता है।
- राष्ट्रभाषा का स्वरूप लचीला होता है और इसे जनता के अनुरूप किसी भी रूप में ढाला जा सकता है।

अंग्रेजों का योगदान–राष्ट्रभाषा सारे देश की सम्पर्क-भाषा (link-language) होती है। हिन्दी दीर्घकाल से सारे देश में जन-जन के पारस्परिक सम्पर्क की भाषा रही है। यह केवल उत्तर भारत की भाषा नहीं है बल्कि दक्षिण भारत के आचार्यों–वल्लभाचार्य, रामानुज आदि ने भी इसी भाषा के माध्यम से अपने मतों का प्रचार किया था। अहिन्दी भाषी राज्यों के भक्त संत कवियों (जैसे असम के शंकर देव, महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वर व नामदेव, गुजरात के नरसी मेहता, बंगाल के चैतन्य आदि) ने इसी भाषा को अपने धर्म और साहित्य का माध्यम बनाया था। यही कारण था कि जब जनता और सरकार के बीच संवाद-स्थापना के क्रम में फारसी या अंग्रेजी के माध्यम से दिक्कतें पेश आई तो कंपनी सरकार ने फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी विभाग खोलकर अधिकारियों को हिन्दी सिखाने की व्यवस्था की। यहाँ से हिन्दी पढ़े हुए अधिकारियों ने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में उसका प्रत्यक्ष लाभ देखकर मुक्त कंठ से हिन्दी को सराहा।

सी० टी० मेटकाफ–सी० टी० मेटकाफ ने 1806 ई० में अपने शिक्षा गुरु जॉन गिलक्राइस्ट को लिखा, "भारत के जिस भाग में भी मुझे काम करना पड़ा है, कलकता से लेकर लाहौर तक, कुमाऊँ के पहाड़ों से लेकर नर्मदा तक..... मैने उस भाषा का आम व्यवहार देखा है, जिसकी शिक्षा आपने मुझे दी है।..... मैं कन्याकुमारी से कश्मीर तक या जावा से सिन्धु तक इस विश्वास से यात्रा करने की हिम्मत कर सकता हूँ कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएँगे जो हिन्दुस्तानी बोल लेते होंगे।"

टॉमस रोबक–टॉमस रोबक ने 1807 ई० में लिखा, "जैसे इंग्लैण्ड जानेवाले को लैटिन सेक्सन या फ्रेंच के बदले अंग्रेजी सीखनी चाहिए, वैसे ही भारत आने वाले को अरबी-फारसी या संस्कृत के बदले हिन्दुस्तानी सीखनी चाहिए।"

विलियम केरी ने 1816 ई० में लिखा, "हिन्दी किसी एक प्रदेश की भाषा नहीं बल्कि देश में सर्वत्र बोली जानेवाली भाषा है।"

एच० टी० कोलब्रुक–एच० टी० कोलब्रुक ने लिखा, "जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रांत के लोग करते हैं, जो पढ़े-लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोलचाल की भाषा है, जिसको प्रत्येक गाँव में थोड़े-बहुत लोग अवश्य समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिन्दी है।"

जार्ज ग्रियर्सन–जार्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी को 'आम बोलचाल की महाभाषा' **(Great Lingua Franca)** कहा है। इन विद्वानों के मंतव्यों से स्पष्ट है कि हिन्दी की व्यावहारिक उपयोगिता, देशव्यापी प्रसार एवं प्रयोगगत लचीलेपन के कारण अंग्रेजों ने हिन्दी को अपनाया। उस समय हिन्दी उर्दू को एक ही भाषा मानी जाती थी जो दो लिपियों में लिखी जाती थी। अंग्रेजों ने हिन्दी को प्रयोग में लाकर हिन्दी की महती संभावनाओं की ओर राष्ट्रीय नेताओं एवं साहित्यकारों का ध्यान खींचा।

धर्म/समाज सुधारकों का योगदान–

धर्म/समाज सुधार की प्रायः सभी संस्थाओं ने हिन्दी के महत्व को भाँपा और हिन्दी की हिमायत की। इनमें से कुछ प्रमुख का वर्णन इस प्रकार है–

ब्रह्म समाज–ब्रह्म समाज (1828 ई०) के संस्थापक राजा राममोहन राय ने कहा, "इस समग्र देश की एकता के लिए हिन्दी अनिवार्य है।" ब्रह्मसमाजी केशव चन्द्र सेन ने 1875 ई० में एक लेख लिखा–**'भारतीय एकता कैसे हो'**, जिसमें उन्होंने लिखा–

"सारे भारत में एक ही भाषा को व्यवहार में लाने का उपाय है। अभी जितनी भाषाएँ भारत में प्रचलित हैं, उनमें हिन्दी भाषा लगभग सभी जगह प्रचलित है। यह हिन्दी अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बनायी जाये, तो यह काम सहज ही और शीघ्र सम्पन्न हो सकता है।" एक अन्य ब्रह्मसमाजी नवीन चन्द्र राय ने पंजाब में हिन्दी के विकास के लिए स्तुत्य योगदान दिया।

आर्य समाज–आर्य समाज (1875 ई०) के संस्थापक दयानंद सरस्वती गुजराती भाषी थे एवं गुजराती व संस्कृत के अच्छे जानकार थे। हिन्दी का उन्हें सिर्फ कामचलाऊ ज्ञान था, पर अपनी बात अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने के लिए तथा देश की एकता को मजबूत करने के लिए उन्होंने अपना सारा धार्मिक साहित्य हिन्दी में लिखा।

उनका कहना था कि "हिन्दी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।" वे इस 'आर्यभाषा' को 'सर्वात्मना देशोन्नति' का मुख्य आधार मानते थे।

उन्होंने हिन्दी के प्रयोग को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। वे कहते थे, "मेरी आँखें उस दिन को देखना चाहती हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा समझने और बोलने लग जायें।"

अरविंद दर्शन के प्रणेता अरविंद घोष की सलाह थी कि "लोग अपनी-अपनी मातृभाषा की रक्षा करते हुए सामान्य भाषा के रूप में हिन्दी को ग्रहण करें।"

थियोसोफिकल सोसायटी–थियोसोफिकल सोसायटी (1875 ई०) की संचालिका ऐनी बेसेंट ने कहा था, "भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न भागों में जो अनेक देशी भाषाएँ बोली जाती हैं, उनमें एक भाषा ऐसी है जिसमें शेष सब भाषाओं की अपेक्षा एक भारी विशेषता है, वह यह कि उसका प्रचार सबसे अधिक है। वह भाषा हिन्दी है। हिन्दी जाननेवाला आदमी संपूर्ण भारतवर्ष में यात्रा कर सकता है और उसे हर जगह हिन्दी बोलनेवाले मिल सकते हैं। .... भारत के सभी स्कूलों में हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए।"

उपर्युक्त धार्मिक सामाजिक संस्थाओं के अतिरिक्त प्रार्थना समाज (स्थापना–1867 ई.; संस्थापक–आत्मारंग पाण्डुरंग), सनातन धर्म सभा (स्थापना–1895 ई.; संस्थापक–पं. दीनदयाल शर्मा), रामकृष्ण मिशन (स्थापना–1897 ई.; संस्थापक स्वामी विवेकानंद) आदि ने हिन्दी प्रचार में योगदान दिया।

इससे लगता है कि धर्म/समाज सुधारकों की यह सोच बन चुकी थी कि राष्ट्रीय स्तर पर संवाद स्थापित करने के लिए हिन्दी आवश्यक है। वे जानते थे कि हिन्दी बहुसंख्यक जन की भाषा है। एक प्रांत के लोग दूसरे प्रांत के लोगों से सिर्फ इसी भाषा में विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। भावी राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को बढ़ाने का कार्य इन्हीं धर्म समाज सुधारकों ने किया।

कांग्रेस के नेताओं का योगदान–

1885 ई० में कांग्रेस की स्थापना हुई। जैसे-जैसे कांग्रेस का राष्ट्रीय आंदोलन जोर पकड़ता गया, वैसे-वैसे राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय झंडा एवं राष्ट्रभाषा के प्रति आग्रह बढ़ता गया।

बालगंगाधर तिलक–1917 ई० में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कहा, "यद्यपि मैं उन लोगों में से हूँ जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।" तिलक ने भारतवासियों से आग्रह किया कि हिन्दी सीखें।

महात्मा गाँधी–महात्मा गाँधी राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा को नितांत आवश्यक मानते थे। वे हिन्दी के प्रश्न को स्वराज का प्रश्न मानते थे–"हिन्दी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।" उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में सामने रखकर भाषा-समस्या पर गंभीरता से विचार किया। 1917 ई० भड़ौच में आयोजित गुजरात शिक्षा परिषद के अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए गाँधीजी ने कहा–"राष्ट्रभाषा के लिए 5 लक्षण या शर्तें होनी चाहिए, जो निम्न हैं–

1. अमलदारों (राजकीय अधिकारियों) के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए।
2. यह जरूरी है कि भारतवर्ष के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों।
3. उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का अपनी धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवहार हो सकना चाहिए।
4. राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए।
5. उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्पस्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।

वर्ष 1918 ई० में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए गाँधीजी ने राष्ट्रभाषा हिन्दी का समर्थन किया–"मेरा यह मत है कि हिन्दी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है और होनी चाहिए।"

इसी अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि प्रतिवर्ष 6 दक्षिण भारतीय युवक हिन्दी सीखने को प्रयाग भेजे जाएं और 6 उत्तर भारतीय युवकों को दक्षिणी भाषाएं सीखने तथा हिन्दी का प्रचार करने के लिए दक्षिण भारत में भेजा जाए। इन्दौर सम्मेलन के बाद उन्होंने हिन्दी के कार्य को राष्ट्रीय व्रत बना दिया।

दक्षिण में प्रथम हिन्दी प्रचारक के रूप में गाँधीजी ने अपने सबसे छोटे पुत्र देवदास गाँधी को दक्षिण में मद्रास भेजा। गाँधीजी की प्रेरणा से मद्रास (1927 ई०) एवं वर्धा (1936 ई०) में राष्ट्रभाषा प्रचार सभाएं स्थापित की गई।

वर्ष 1925 ई० में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में गाँधीजी की प्रेरणा से यह प्रस्ताव पारित हुआ कि कांग्रेस का, कांग्रेस की महासमिति का और कार्यकारिणी समिति का काम-काज आमतौर पर हिन्दी में चलाया जाएगा। इस प्रस्ताव से हिन्दी-आंदोलन को बड़ा बल मिला।

वर्ष 1927 ई० में गाँधीजी ने लिखा–"वास्तव में ये अंग्रेजी में बोलनेवाले नेता हैं जो आम जनता में हमारा काम जल्दी आगे बढ़ने नहीं देते। वे हिन्दी सीखने से इंकार करते हैं। जबकि हिन्दी द्रविड़ प्रदेश में भी तीन महीने के अंदर सीखी जा सकती है।"

राजगोपालाचारी–वर्ष 1927 ई० में सी० राजगोपालाचारी ने दक्षिणवालों को हिन्दी सीखने की सलाह दी और कहा, "हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, यही जनतंत्रात्मक भारत में राजभाषा भी होगी।"

नेहरू–वर्ष 1928 ई० में प्रस्तुत नेहरू रिपोर्ट में भाषा संबंधी सिफारिश में कहा गया था, "देवनागरी अथवा फारसी में लिखी जानेवाली हिन्दुस्तानी भारत की राजभाषा होगी, परंतु कुछ समय के लिए अंग्रेजी का उपयोग जारी रहेगा।" सिवाय 'देवनागरी या फारसी' की जगह 'देवनागरी' तथा 'हिन्दुस्तानी' की जगह 'हिन्दी' रख देने के अंततः स्वतंत्र भारत के संविधान में इसी मत को अपना लिया गया।

सुभाषचन्द्र बोस–वर्ष 1929 ई० में सुभाषचन्द्र बोस ने कहा, "प्रांतीय ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिन्दी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती। अपनी प्रांतीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं। पर सारे प्रांतों की सार्वजनिक भाषा का पद हिन्दी या हिन्दुस्तानी को ही मिला है।"

वर्ष 1931 ई० में गाँधीजी ने पुनः लिखा, "यदि स्वराज्य अंग्रेजी-पढ़े भारतवासियों का है और केवल उनके लिए है तो संपर्क भाषा अवश्य अंग्रेजी होगी। यदि वह करोड़ों भूखे लोगों, करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों, सताये हुए अछूतों के लिए है तो संपर्क भाषा केवल हिन्दी हो सकती है।" गांधीजी जनता की बात जनता की भाषा में करने के पक्षधर थे।

वर्ष 1936 ई० में गाँधीजी ने कहा–"अगर हिन्दुस्तान को सचमुच आगे बढ़ना है तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है वह किसी और भाषा को नहीं मिल सकता।"

वर्ष 1937 ई० में देश के कुछ राज्यों में कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित हुआ। इन राज्यों में हिन्दी की पढ़ाई को प्रोत्साहित करने का संकल्प लिया गया। जैसे-जैसे स्वतंत्रता संग्राम तीव्रतर होता गया वैसे-वैसे हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का आंदोलन जोर पकड़ता गया।

20वीं सदी के चौथे दशक तक हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में आम सहमति प्राप्त कर चुकी थी। वर्ष 1942 से 1945 का समय ऐसा था जब देश में स्वतंत्रता की लहर सबसे अधिक तीव्र थी। तब राष्ट्रभाषा से ओत-प्रोत जितनी रचनाएं हिन्दी में लिखी गई उतनी शायद किसी और भाषा में इतने व्यापक रूप से कभी नहीं लिखी गई।

राष्ट्रभाषा के प्रचार के साथ राष्ट्रीयता के प्रबल हो जाने पर अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा।

राष्ट्रभाषा आंदोलन (हिन्दी आंदोलन) से संबंधित धार्मिक सामाजिक संस्थाएँ

नाम	मुख्यालय	स्थापना	संस्थापक
ब्रह्म समाज	कलकत्ता	1828 ई.	राजा राममोहन राय
प्रार्थना समाज	बंबई	1867 ई.	आत्मारंग पाण्डुरंग
आर्य समाज	बंबई	1875 ई.	दयानंद सरस्वती
थियोसोफिकल सोसायटी	अडयार, मद्रास	1882 ई.	कर्नल एच. एस. आलकाट एवं मैडम बलावत्स्की
सनातन धर्म सभा (भारत धर्म महामंडल; 1902 में नाम परिवर्तन)	वाराणसी	1895 ई.	पं. दीनदयाल शर्मा
रामकृष्ण मिशन	बेलूर	1897 ई.	विवेकानंद

राष्ट्रभाषा आंदोलन (हिन्दी आंदोलन) से संबंधित साहित्यिक संस्थाएं

नाम	मुख्यालय	स्थापना	
नागरी प्रचारिणी सभा	काशी/वाराणसी	1893 ई.	संस्थापक त्रयी : श्याम सुंदर दास, राम नारायण मिश्र व शिव कुमार सिंह
हिंदी साहित्य सम्मेलन	प्रयाग	1910 ई.	प्रथम सभापति मदन मोहन मालवीय
गुजरात विद्यापीठ	अहमदाबाद	1920 ई.	
बिहार विद्यापीठ	पटना	1921 ई.	
हिन्दुस्तानी एकेडमी	इलाहाबाद	1927 ई.	
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (पूर्व नाम 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन')	मद्रास	1927 ई.	
हिन्दी विद्यापीठ	देवघर	1929 ई.	
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति	वर्धा	1936 ई.	
महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा	पुणे	1937 ई.	
बंबई हिन्दी विद्यापीठ	बंबई	1938 ई.	
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति	गुवाहटी	1938 ई.	
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्	पटना	1951 ई.	
अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ	नई दिल्ली	1964 ई.	
नागरी लिपि परिषद्	नई दिल्ली	1975 ई.	

राष्ट्रभाषा आंदोलन (हिन्दी आंदोलन) से संबंधित व्यक्तित्व

बंगाल–राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, नवीन चन्द्र राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, तरुणी चरण मित्र, राजेन्द्र लाल मित्र, राज नारायण बसु, भूदेव मुखर्जी, बंकिम चन्द्र चटर्जी ('हिन्दी भाषा की सहायता से भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों के मध्य में जो ऐक्यबंधन संस्थापन करने में समर्थ होंगे वही सच्चे 'भारतबंधु पुकारे जाने योग्य हैं।'), सुभाष चन्द्र बोस ('अगर आज हिन्दी भाषा मान ली गई है तो वह इसलिए नहीं कि वह किसी प्रांत विशेष की भाषा है, बल्कि इसलिए कि वह अपनी सरलता, व्यापकता तथा क्षमता के कारण सारे देश की भाषा हो सकती है।'), रवीन्द्र नाथ टैगोर ('यदि हम प्रत्येक भारतीय के नैसर्गिक अधिकारों के सिद्धांत को स्वीकार करते हैं, तो हमें राष्ट्रभाषा के रूप में उस भाषा को स्वीकार करना चाहिए जो देश के सबसे बड़े भूभाग में बोली जाती है और जिसे स्वीकार करने की सिफारिश महात्मा गांधी ने हमलोगों से की है। इसी विचार से हमें एक भाषा की आवश्यकता है और वह हिन्दी है।'), रामानंद चटर्जी, सरोजनी नायडू, शारदा चरण मित्र (अखिल भारतीय लिपि के रूप में देवनागरी लिपि के प्रथम प्रचारक), आचार्य क्षिति मोहन सेन ('हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने हेतु जो अनुष्ठान हुए हैं, उनको मैं संस्कृति का राजसूय यज्ञ समझता हूँ।') आदि।

महाराष्ट्र–बाल गंगाधर तिलक ('यह आंदोलन उत्तर भारत में केवल एक सर्वमान्य लिपि के प्रचार के लिए नहीं है। यह तो उस आंदोलन का एक अंग है, जिसे मैं राष्ट्रीय आंदोलन कहूँगा और जिसका उद्देश्य समस्त भारतवर्ष के लिए एक राष्ट्रीय भाषा की स्थापना करना है, क्योंकि सबके लिए समान भाषा राष्ट्रीयता का महत्वपूर्ण अंग है। अतएव यदि आप किसी राष्ट्र के लोगों को एक-दूसरे के निकट लाना चाहें तो सबके लिए समान भाषा से बढ़कर सशक्त अन्य कोई बल नहीं है।'), एन. सी. केलकर, डा भण्डारकर, वी० डी० सावरकर, गोपाल कृष्ण गोखले, गाडगिल, काका कालेलकर आदि।

पंजाब–लाला लाजपत राय, श्रद्धाराम फिल्लौरी आदि।

गुजरात–दयानंद सरस्वती, महात्मा गाँधी, वल्लभभाई पटेल, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ('हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना नहीं है; वह तो है ही।') आदि।

दक्षिण भारत–सी० राजगोपालाचारी, टी० विजयराघवाचार्य ('हिन्दुस्तान की सभी जीवित और प्रचलित भाषाओं में मुझे हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बनने के लिए सबसे अधिक योग्य दीख पड़ती है।'), सी० पी० रामास्वामी अय्यर ('देश के विभिन्न भागों के निवासियों के व्यवहार के लिए सर्वसुगम और व्यापक तथा एकता स्थापित करने के साधन के रूप में हिन्दी का ज्ञान आवश्यक है।'), अनन्त शयनम आयंगर ('हिन्दी ही उत्तर और दक्षिण को जोड़नेवाली समर्थ भाषा है।'), एस० निजलिंगप्पा ('दक्षिण की भाषाओं ने संस्कृत से बहुत कुछ लेन-देन किया है, इसलिए उसी परंपरा में आई हुई हिन्दी बड़ी सरलता से राष्ट्रभाषा होने लायक है।'), रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर ('जो राष्ट्र प्रेमी है, उसे राष्ट्रभाषा प्रेमी होना चाहिए।'), के० टी० भाष्यम, आर० वेंकटराम शास्त्री, एन० सुन्दरैया आदि।

अन्य–मदन मोहन मालवीय, पुरुषोत्तम दास टंडन (उपनाम–'हिन्दी का प्रहरी'; कथन–'मैं हिन्दी का और हिन्दी मेरी है।'), राजेन्द्र प्रसाद, सेठ गोविंद दास आदि।

महात्मा गाँधी के भाषा-संबंधी विचार–

- करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी। ('हिन्द स्वराज्य', 1909)।
- अंग्रेजी भाषा हमारे राष्ट्र के पांव में बेड़ी बनकर पड़ी हुई है.... भारतीय विद्यार्थी को अंग्रेजी के मार्फत ज्ञान अर्जित करने पर कम-से-कम 6 वर्ष अधिक बरबाद करने पड़ते हैं.... यदि हमें एक विदेशी भाषा पर अधिकार पाने के लिए जीवन के अमूल्य वर्ष लगा देने पड़े, तो फिर और क्या हो सकता है। (1914)
- जिस भाषा में तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की हो, वह अत्यंत पवित्र है और उसके सामने कोई भाषा ठहर नहीं सकती। (1916)
- हिन्दी ही हिन्दुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है यह बात निर्विवाद सिद्ध है।.... जिस स्थान को अंग्रेजी भाषा आजकल लेने का प्रयत्न कर रही है और जिसे लेना उसके लिए असंभव है, वही स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए क्योंकि हिन्दी का उस पर पूर्ण अधिकार है। यह स्थान अंग्रेजी को नहीं मिल सकता क्योंकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिए बड़ी कठिन है। (1917)
- हिन्दी भाषा वह भाषा है जिसको उत्तर में हिन्दू व मुसलमान बोलते हैं और जो नागरी और फारसी लिपि में लिखी जाती है। यह हिन्दी एकदम संस्कृतमयी नहीं है और न ही वह एकदम फारसी शब्दों से लदी है। (1918)
- हिन्दी और उर्दू नदियां हैं और हिन्दुस्तानी सागर है। हिन्दी और उर्दू दोनों को आपस में झगड़ा नहीं करना चाहिए। दोनों का मुकाबला तो अंग्रेजी से है।
- अंग्रेजी के व्यामोह से पिंड छुड़ाना स्वराज्य का एक अनिवार्य अंग है।
- मैं यदि तानाशाह होता (मेरा बस चलता) तो आज ही विदेशी भाषा में शिक्षा देना बंद कर देता, सारे अध्यापकों को स्वदेशी भाषाएं अपनाने पर मजबूर कर देता। जो आनाकानी करते, उन्हें बर्खास्त कर देता। मैं पाठ्य पुस्तकों की तैयारी का इंतजार न करूंगा, वे तो माध्यम के परिवर्तन के पीछे-पीछे अपने आप चली आएंगी। यह एक ऐसी बुराई है, जिसका तुरंत इलाज होना चाहिए।
- मेरी मातृभाषा में कितनी ही खामियाँ क्यों न हों, मैं इससे इसी तरह चिपटा रहूँगा जिस तरह बच्चा अपनी माँ की छाती से, जो मुझे जीवनदायी दूध दे सकती है। अगर अंग्रेजी उस जगह को हड़पना चाहती है जिसकी वह हकदार नहीं है, तो मैं उससे सख्त नफरत करूंगा। वह कुछ लोगों के सीखने की वस्तु हो सकती है, लाखो-करोड़ों की नहीं।
- लिपियों में सबसे अव्वल दर्जे की लिपि नागरी को ही मानता हूँ। मैं मानता हूँ कि नागरी और उर्दू लिपि के बीच अंत में जीत नागरी लिपि की ही होगी।

◆◆◆

(ख) संविधान की आठवीं अनुसूची और हिंदी

3. 'संविधान की आठवीं अनुसूची' का विस्तार से परिचय दीजिए।

उत्तर–संविधान की आठवीं अनुसूची–भारतीय संविधान दुनिया का सबसे लंबा लिखित संविधान माना जाता है। वर्ष 1950 में लागू, यह संविधान 12 अनुसूचियों, 25 भागों और 448 अनुच्छेदों में विभाजित है। अब तक संविधान में 104 संशोधन हो चुके हैं। भारत की विविधता और विभिन्नता कई त्योहारों, संस्कृतियों और परंपराओं में अच्छी तरह से जानी और स्वीकार की जाती है। हालाँकि, सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इस देश में बोली जाने वाली विभिन्न भाषाएँ हैं क्योंकि भारत 121 भाषाओं और 270 मातृभाषाओं का घर है। इन कई भाषाओं में से, 22 भाषाओं को संविधान की 8वीं अनुसूची के तहत आधिकारिक भाषाओं के रूप में दर्शाया गया है।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची का इतिहास–इंडो-आर्यन और द्रविड़ियन भाषा परिवार में भारतीय भाषा बनाने वाले अधिकांश घटक शामिल हैं। हिन्दी पूर्व इंडो-यूरोपीय भाषा परिवार से संबंधित है और इसे 70% भारतीय बोलते हैं, मुख्य रूप से उत्तर भारत में, जबकि द्रविड़ियन भाषाएँ केवल 22% आबादी द्वारा बोली जाती हैं और दक्षिण में प्रचलित हैं। अन्य भारतीय भाषाएँ ऑस्ट्रो-एशियाई या सिनो-तिब्बती (उसके भीतर, तिब्बती-बर्मी) भाषाई समूहों से संबंधित हैं, और कुछ अलग-थलग भाषाएँ हैं, उदाहरण के लिए, निहाली या कल्टो–महाराष्ट्र राज्य की भाषा।

अंग्रेजी और हिंदी मिलकर देश के प्रशासनिक कामकाज का एक अनिवार्य हिस्सा हैं। हालाँकि, यह किसी पर भी प्रमुख भाषाओं को बोलने का कोई बोझ नहीं डालती है। अनुसूची एक खुला दायरा प्रदान करती है और आज 22 भाषाओं के साथ लोगों को अपनी पसंद की भाषा चुनने की स्वतंत्रता देती है। राज्यों को अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में से किसी को चुनने और अपने सरकारी मुद्दों और शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण बनाने की स्वतंत्रता है। हालाँकि, इस अनुसूची का इतिहास कई महत्वपूर्ण समयरेखा मुद्दों से चिह्नित है।

स्वतंत्रता संग्राम की ओर लौटते हुए हम देखते हैं कि अंग्रेजों ने संवाद के लिए अंग्रेजी को अपनी भाषा बनाया और भारतीयों ने संवाद के लिए मुख्य रूप से हिंदी को चुना। वर्ष 1950 में संविधान को अंतिम रूप दिए जाने के साथ ही आठवीं अनुसूची को जोड़ा गया, जिसमें 14 भाषाओं को 'आधिकारिक भाषाओं' के रूप में चिह्नित किया गया। इसने हिंदी को आधिकारिक भारतीय भाषा घोषित किया।

सबसे पहले 1963 में राजभाषा अधिनियम पारित हुआ, जिसमें हिंदी और अंग्रेजी दोनों को संसद की भाषा बनाने पर जोर दिया गया। बाद में 1964 में अंग्रेजी के इस्तेमाल को खत्म करने का प्रस्ताव रखा गया। लेकिन इसके बाद पूरे देश में, विशेषकर आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, पांडिचेरी, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में विरोध प्रदर्शन हुए। इस वजह से प्रस्ताव को खारिज कर दिया गया। इसके अलावा 1965 में हिंदी विरोधी आंदोलन शुरू हुआ, जिसमें हिंदी को भारत की आधिकारिक भाषा के तौर पर मान्यता देने का विरोध किया गया। इस आंदोलन को भी दबाना पड़ा। 1967 में राजभाषा प्रस्ताव पारित हुआ, जिसमें अंग्रेजी को इस्तेमाल करने के लिए खुला और स्वतंत्र बनाया गया।

इसके बाद 2002 और 2004 के संशोधन अधिनियमों अर्थात् क्रमशः 71वें संशोधन और 92 वें संशोधन के माध्यम से अनुसूची में और अधिक भाषाएं जोड़ी गई।

राजभाषा अधिनियम, 1963–1963 में संघीय संसद द्वारा आधिकारिक भाषा अधिनियम पारित किया गया। इसने हिंदी और अंग्रेजी को संसद में इस्तेमाल की जाने वाली भाषाओं के रूप में कानूनी रूप से स्थापित किया, जबकि राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को अपनी आधिकारिक भाषा चुनने की स्वतंत्रता दी।

इस अधिनियम की धारा (3) अंग्रेजी के उपयोग के लिए निर्धारित 15 वर्ष की समाप्ति अवधि को रद्द करती है। यह अधिनियम अंग्रेजी और हिंदी दोनों के उपयोग की अनुमति देता है। केंद्र सरकार या केंद्र सरकार के स्वामित्व वाले या उसके द्वारा नियंत्रित किसी मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या संगठन द्वारा जारी किए गए संकल्प, सामान्य निर्देश, नियम, घोषणाएं, प्रशासनिक या अन्य रिपोर्ट या प्रेस विज्ञप्तियां, संघीय सरकार या किसी मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या राज्य निगम द्वारा जारी किए गए अनुबंध, समझौते, लाइसेंस, परमिट, नोटिस और निविदा फॉर्म, सभी समान नियमों के अधीन हैं।

अधिनियम की धारा 5 के अनुसार, अंग्रेजी के प्रयोग पर प्रावधान तब तक प्रभावी रहेंगे जब तक कि अधिनियम में उल्लिखित उद्देश्यों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग को बंद करने के लिए उन सभी राज्यों के विधानमंडलों द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिए जाते जिन्होंने हिंदी को अपनी आधिकारिक भाषा के रूप में नहीं अपनाया है। संघीय संसद के दोनों सदनों को भी इस आशय का संकल्प पारित करना होगा।

किसी राज्य का राज्यपाल (जम्मू और कश्मीर को छोड़कर) उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या बनाए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिए तथा राजभाषा अधिनियम की धारा 7 के अधीन उस भाषा में पारित या बनाए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के लिए अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी या राज्य की राजभाषा के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है (अंग्रेजी को छोड़कर)।

इस अधिनियम को 1976 में राजभाषा नियम स्थापित करने के लिए संशोधित किया गया, जिसे 1987 में पुनः संशोधित किया गया।

राजभाषा संकल्प, 1968–18 जनवरी, 1968 को संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित राजभाषा संकल्प भारत संघ द्वारा आधिकारिक उद्देश्यों के लिए हिंदी भाषा के प्रयोग को बढ़ाने के लिए लाया गया था।

प्रस्ताव में संविधान के अनुच्छेद 343 के तहत हिंदी को संघ की आधिकारिक भाषा बताया गया है। अनुच्छेद 351 के तहत संघ अपना कर्तव्य समझकर हिंदी भाषा के प्रसार को बढ़ावा देगा और इसके विकास के लिए काम करेगा ताकि यह भारत की समग्र संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। अनुच्छेद 343 (2) में प्रावधान किया गया है कि संविधान के लागू होने की तारीख यानी 25 जनवरी, 1965 से 15 साल की अवधि तक संघ के आधिकारिक कार्यों में अंग्रेजी का इस्तेमाल जारी रहेगा। इस प्रस्ताव के पारित होने के साथ ही अनुच्छेद 343 (3) में प्रावधान किया गया कि 25 जनवरी, 1965 के बाद भी अंग्रेजी जारी रहेगी। इसने संसद को इस संबंध में कानून बनाने का अधिकार दिया।

प्रस्ताव में केन्द्र सरकार में विभिन्न पदों के लिए अभ्यर्थियों के चयन हेतु अंग्रेजी या हिन्दी का ज्ञान भी अनिवार्य कर दिया गया।

सदनों द्वारा पारित अंतिम प्रस्ताव इस प्रकार है–

1. संघ की सेवाओं या पदों पर भर्ती के लिए अभ्यर्थियों के चयन के प्रक्रम पर हिन्दी या अंग्रेजी का अनिवार्य ज्ञान अपेक्षित होगा, सिवाय उन विशेष सेवाओं या पदों जिनके लिए, यथास्थिति, केवल अंग्रेजी का या केवल हिन्दी का, या दोनों का उच्च स्तर का ज्ञान किसी ऐसी सेवा या पद के कर्तव्यों के संतोषप्रद पालन के लिए आवश्यक समझा जाता है, और
2. संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भाषाओं और अंग्रेजी को अखिल भारतीय और उच्चतर केंद्रीय सेवा परीक्षाओं के लिए वैकल्पिक मीडिया के रूप में अनुमति दी जाएगी, परीक्षाओं की भविष्य की योजना, प्रक्रियात्मक पहलुओं और समय पर संघ लोक सेवा आयोग के विचारों को जानने के बाद।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची का उद्देश्य–आठवीं अनुसूची का उद्देश्य केवल भारतीय उपमहाद्वीप की विविधता को एक साथ बांधना है। किसी एक भाषा को राष्ट्रीय भाषा के रूप में सूचीबद्ध करना भारत में बोली जाने वाली बाकी भाषाओं के लिए अनुचित रुख बन सकता है। इस प्रकार उन्हें आधिकारिक कहना प्रगति और विविधता को अपनाने के लिए एक सुरक्षित शीर्षक देता है। इस प्रकार यह सूचीबद्ध किया जा सकता है कि अनुसूची को इस उद्देश्य से चिह्नित किया गया है–

- राष्ट्र में भाषाओं और विविधता को सुरक्षित दायरा प्रदान करना।
- बहु-नस्ली, बहु-नैतिक राष्ट्र को समान प्रतिनिधित्व देना।
- स्वदेशी समूहों को मूल भाषा में सरकार तक पहुंच प्रदान करके उन्हें सशक्त बनाना।
- सामान्य भाषा के आधार पर अधिक कुशल तरीके से व्यापार, वाणिज्य और व्यवसाय करने की अधिक संभावना सक्षम होती है।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची से संबंधित संवैधानिक प्रावधान–भारत की आधिकारिक भाषाओं को भारतीय संविधान के भाग XVII में शामिल किया गया है। इसमें अनुच्छेद 343 से 351 तक हैं। आठवीं अनुसूची से संबंधित संवैधानिक प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 344, अनुच्छेद 344 (1) और अनुच्छेद 351 में स्पष्ट किए गए हैं। अनुच्छेद 344

में पांच वर्ष की अवधि समाप्त होने पर राष्ट्रपति द्वारा एक आयोग के गठन का प्रावधान है। अनुच्छेद 351 में हिंदी भाषा के प्रसार के लिए प्रावधान है ताकि उसका विकास हो सके। इसे भारत की समग्र संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में कार्य करना था।

इस संदर्भ में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 29 में कहा गया है कि नागरिकों के एक वर्ग को, जिसकी एक अलग भाषा, लिपि या संस्कृति है, उस विशिष्ट भाषा को संरक्षित करने का अधिकार है। इस संबंध में, नागरिकों और राज्य दोनों की ही अलग भाषा को संरक्षित करने की समान जिम्मेदारी है।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में भाषाओं की सूची–

अनुसूची में बाईस आधिकारिक भाषाएँ शामिल हैं। इन 22 में से 14 भाषाओं को शुरू में संविधान में शामिल किया गया था। सिंधी को वर्ष 1967 में भारतीय संविधान के 21वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया था। इसके बाद, संविधान के 71वें संशोधन अधिनियम द्वारा तीन और भाषाओं–कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली को शामिल किया गया। संविधान के 71वें संशोधन अधिनियम द्वारा बोडो, डोगरी, मैथिली और संथाली की आगे की प्रविष्टियाँ जोड़ी गईं, जिससे कुल संख्या 22 हो गई। अनुसूची में शामिल 22 भाषाएँ इस प्रकार हैं–

(1) असमिया, (2) बंगाली (3) गुजराती, (4) हिंदी, (5) कन्नड़, (6) कश्मीरी (7) कोंकणी, (8) मलयालम, (9) मणिपुरी, (10) मराठी, (11) नेपाली, (12) ओड़िया, (13) पंजाबी, (14) संस्कृत, (15) सिंधी, (16) तमिल, (17) तेलुगु, (18) उर्दू (19) बोडो, (20) संथाली (21) मैथिली और (22) डोगरी।

सूची यहीं समाप्त नहीं होती। समाज में व्याप्त विविधता की सीमा और मातृभाषाओं की संख्या को देखते हुए, इस अनुसूची में अधिक से अधिक भाषाओं को जोड़ने का प्रस्ताव है। लगभग 38 भाषाएँ हैं जिन्हें अनुसूची में शामिल करने की मांग की गई है।

ये हैं–(1) अंगिका, (2) बंजारा, (3) बाजिका, (4) भोजपुरी, (5) भोटी, (6) भोटिया, (7) बुंदेलखण्डी (8) छत्तीसगढ़ी, (9) धातकी, (10) अंग्रेजी, (11) गढ़वाली (पहाड़ी), (12) गोंडी, (13) गुज्जर / गुज्जरी (14) हो, (15) कच्ची, (16) कामतापुरी, (17) कार्बी, (18) खासी, (19) कोडवा (कूर्ग), (20) कोक बराक, (21) कुमाऊंनी (पहाड़ी), (22) कुरक, (23) कुरमाली, (24) लेप्चा, (25) लिम्बु, (26) मिज़ो (लुशाई), (27) मगही, मुंडारी, (28) मुंडारी, (29) नागपुरी, (30) निकोबारी, (31) पहाड़ी (हिमाचली), (32) पाली, (33) राजस्थानी, (34) संबलपुरी/ कोसली, (35) शौरसेनी (प्राकृत), (36) सिरैकी, (37) तेनयीदी और (38) तुलु।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची के अंतर्गत शास्त्रीय भाषाएँ–वर्तमान परिदृश्य में, भारत में छह भाषाएँ हैं जिन्हें 'शास्त्रीय' दर्जा प्राप्त है; ये हैं–तमिल (2004), संस्कृत (2005), कन्नड़ (2008), तेलुगु (2008), मलयालम (2013) और ओड़िया (2014)। ये सभी छह भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची के अंतर्गत सूचीबद्ध हैं।

संस्कृति मंत्रालय उन शब्दों की सूची बनाता है जो किसी भाषा को शास्त्रीय भाषा के रूप में परिभाषित करते हैं।

1. इसके प्रारंभिक ग्रन्थों या अभिलेखित इतिहास की प्राचीनता 1500-2000 वर्षों की है।
2. इसमें प्राचीन साहित्य या पाठ का संग्रह होना चाहिए जिसे वक्ताओं द्वारा मूल्यवान विरासत माना जाता हो।
3. इसके साहित्य की परंपरा मौलिक है और किसी अन्य भाषा समुदाय से उधार नहीं ली गयी है।
4. शास्त्रीय भाषा और साहित्य ऐसा होना चाहिए कि वह आधुनिक भाषा से अलग हो। शास्त्रीय भाषा और उसके बाद के रूप के बीच विसंगति का विरोध नहीं किया जा सकता।

एक बार जब किसी भाषा को शास्त्रीय भाषा के रूप में अधिसूचित कर दिया जाता है, तो मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय उसे बढ़ावा देने के लिए कुछ लाभ प्रदान करता है, जिसमें शास्त्रीय भारतीय भाषाओं के विद्वानों के लिए दो प्रमुख वार्षिक अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार शामिल हैं। भाषा को बढ़ावा देने के लिए शास्त्रीय भाषाओं में अध्ययन के लिए एक उत्कृष्टता केंद्र की स्थापना की जाती है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को शास्त्रीय भाषाओं के लिए घोषित एक निश्चित संख्या में व्यावसायिक पीठों के साथ केंद्रीय विश्वविद्यालय बनाने और शुरू करने का अनुरोध भी किया जाता है।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में किसी भाषा को कैसे शामिल किया जाता है?

धर्मनिरपेक्षता के इस देश में औपचारिक रूप से स्वीकृत और बोली जाने वाली भाषाओं की विविधता और संख्या के मुद्दे काफी असाधारण हैं। एक नई भाषा को शामिल करना एक गर्व का काम होगा, लेकिन साथ ही, हर भाषा को शामिल करने से संविधान का बोझ और बढ़ सकता है। लेकिन हम इस बात को कैसे परिभाषित करें कि किस भाषा को शामिल किया जाए और किसको नहीं? इस विवाद के कारण विधानमंडल ने 1996 और 2003 में एक समिति गठित की।

1996 की समिति को पाहवा समिति के नाम से जाना जाता है और यह श्री अशोक पाहवा की अध्यक्षता में गठित की गई थी। इस कदम के आगे के विकास में, सितंबर, 2003 में श्री सीताकांत महापात्र की अध्यक्षता में एक और समिति गठित की गई ताकि संविधान की आठवीं अनुसूची में किसी भाषा को शामिल करने के मापदंडों को सामने लाया जा सके। समिति ने 2004 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। उसके बाद मामले का गहन अध्ययन करने के लिए वर्ष 2012 में एक अंतर-मंत्रालयी समिति का गठन किया गया, जिसकी अध्यक्षता गृह मंत्रालय के तत्कालीन संयुक्त सचिव (मानव संसाधन) ने की। 2003 की समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट का विश्लेषण किया गया और विभिन्न राय और चिंताओं का समाधान नहीं हो सका।

इसलिए आज, इस संबंध में आयोजित विभिन्न बैठकों के बावजूद हमारे पास कोई मानदंड नहीं है। इसलिए हम यह समझने के लिए आगे बढ़ते हैं कि पिछली भाषाओं को इस अनुसूची में कैसे जोड़ा गया है। बुनियादी समझ हमें बताती है कि संविधान संशोधन के माध्यम से ही किसी भाषा को अनुसूची में शामिल किया जा सकता है। इस बदलाव को लाने वाला विधेयक सरकारी विधेयक या निजी विधेयक हो सकता है जिसे संसद के किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है।

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में भाषा को शामिल करने की वर्तमान स्थिति–इस मामले में मौजूदा स्थिति किसी ठोस वस्तुनिष्ठ मानदंड के अभाव के कारण डांवाडोल है। 2019 में संसद में एक निजी सदस्य विधेयक पेश किया गया था, जिसमें सभी 22 आधिकारिक भाषाओं को राष्ट्रीय भाषा का दर्जा देने का प्रस्ताव था। इसमें अनुच्छेद 343 और अनुच्छेद के उप-खंड 3 में आधिकारिक संशोधन का प्रस्ताव था। इस विधेयक का विपक्ष के कई सदस्यों ने विरोध किया था, क्योंकि विधेयक में एक बिंदु संसद में हिंदी के इस्तेमाल का विरोध करता था और इसे अस्वीकार्य माना गया था। गृह मंत्री अमित शाह ने भी कहा कि भले ही वह एक गैर-हिंदी भाषी शहर से आते हैं, लेकिन उनका मानना है कि हिंदी भारत को जोड़ने वाली भाषा है।

भोजपुरी को संविधान की आठवीं अनुसूची में आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल करने के लिए कई बार प्रस्ताव आए हैं।

सबसे पहले 1971 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के सांसद भोगेंद्र झा ने भोजपुरी को आधिकारिक भाषा बनाने के लिए लोकसभा में विधेयक पेश किया था। करीब चार दशक बाद मार्च, 2020 में सरकार ने इस संबंध में सकारात्मक बयान दिया। इस दिशा में भी कोई ठोस नतीजा सामने आना बाकी है।

निष्कर्ष–भारतीय उपमहाद्वीप में मौजूद बोलियों और भाषाओं की विविधता 2500 से ज्यादा है। यह समृद्ध विविधता गर्व करने लायक है और इसे संरक्षित भी किया जाना चाहिए। आठवीं अनुसूची की मौजूदगी इस तथ्य की स्वीकृति का प्रतीक है और इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि हमारे पास इतनी सारी आधिकारिक भाषाएँ हैं। प्रगति जारी है और उम्मीद है कि इस सूची में और भी भाषाएँ जुड़ जाएँगी।

हालाँकि, आज के प्रतिमान के लिए आह्वान यह है कि यह निर्धारित करने के लिए वस्तुनिष्ठ मानदंड की आवश्यकता है कि कौन-सी भाषाएँ आधिकारिक हैं और कौन-सी नहीं। उसी दिशा में, एक कदम आगे बढ़ाया जाना चाहिए। हमें और अधिक भाषाओं को जोड़ने की आवश्यकता क्यों है, यह प्रश्न भी महत्वपूर्ण है; लेकिन इसका उत्तर यह है कि भाषा में जीवंतता भारत में सांस्कृतिक विविधता को समझने का एक महत्वपूर्ण पहलू है जो विभिन्न आक्रमणों, शासनों और क्रांतियों का परिणाम है। इस प्रकार आज हमारे पास भारतीय गणराज्य की आधिकारिक भाषाएँ हैं जो भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं। हालांकि अंग्रेजी उनमें से एक नहीं है।

◆◆◆

4. संविधान की आठवीं अनुसूची और हिंदी भाषा पर चर्चा करें।

उत्तर–संविधान की आठवीं अनुसूची और हिंदी भाषा–भारत का संविधान दुनिया का सबसे लंबा संविधान है। इसके लागू होने के समय इसमें 22 भागों में 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियाँ थीं। अब इसमें 25 भागों में 448 अनुच्छेद और 12 अनुसूचियाँ हैं।

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में भारत गणराज्य की आधिकारिक भाषाओं की सूची दी गई है। इसमें 22 भाषाएँ शामिल हैं, जो हैं–गाली, उर्दू, तमिल, तेलुगु, मराठी, संस्कृत, हिंदी, नेपाली, गुजराती, कन्नड़, ओड़िया, असमिया, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, पंजाबी, संथाली, सिंधी, डोंगरी, बोडो, कश्मीरी और मैथिली इनमें से 14 भाषाओं को मूल रूप से संविधान में शामिल किया गया था। 1967 के 21वें संशोधन अधिनियम ने संथाली को जोड़ा, 1992 के 71वें संशोधन अधिनियम ने कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली को जोड़ा और 2003 के 92वें संशोधन अधिनियम ने बोडो, डोंगरी, मैथिली और संथाली को जोड़ा।

वर्तमान में भारत में छह भाषाओं को शास्त्रीय दर्जा प्राप्त है, जो तमिल, संस्कृत, कन्नड़, तेलुगु, मलयालम और ओड़िया हैं। ये सभी 8वीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं। वर्ष 2006 में भारत सरकार ने इन भाषाओं के वर्गीकरण के लिए मानदंड घोषित किए, यानी उन्हें पुरानी और प्राचीन होना चाहिए, साहित्य की विरासत होनी चाहिए, आदि। एक बार जब कोई भाषा शास्त्रीय भाषा के रूप में अधिसूचित हो जाती है, तो मानव संसाधन विकास मंत्रालय उसे बढ़ावा देने के लिए कुछ लाभ प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, शास्त्रीय भाषाओं में अध्ययन के लिए उत्कृष्टता केंद्र स्थापित किया जाता है।

इस अनुसूची से संबंधित कुछ मौलिक प्रावधान हैं। अनुच्छेद 344(1) संविधान के लागू होने के 5 वर्ष की अवधि समाप्त होने पर राष्ट्रपति द्वारा एक आयोग के गठन का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के प्रसार का प्रावधान करता है ताकि इसे विकसित किया जा सके ताकि यह भारत की मिश्रित संस्कृति के सभी मूल तत्वों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में काम करें। जब संविधान बनाया गया था, उस समय इस सूची में जोड़ने का मतलब था कि यह भाषा आधिकारिक भाषा आयोग में प्रतिनिधित्व की हकदार थी और यह भाषा संघ की आधिकारिक भाषाओं हिंदी और अंग्रेजी को समृद्ध करने के लिए आधारों में से एक होगी। हालाँकि, तब से इस सूची ने और अधिक महत्व प्राप्त कर लिया है। भारत सरकार अब इन भाषाओं के विकास के लिए कदम उठाने के लिए बाध्य है, ताकि "वे तेजी से समृद्ध हों और अत्याधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बन सकें।" हालाँकि, यह ध्यान देने योग्य बात है कि 8वीं अनुसूची में किसी भी भाषा को शामिल करने के लिए कोई निश्चित मानदंड नहीं है।

8वीं अनुसूची में शामिल प्रमुख भाषाओं में से एक हिंदी को 14 सितंबर, 1949 को भारत संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में अपनाया गया था, जिसे अब "हिंदी दिवस" के रूप में मनाया जाता है। बाद में, 1950 में भारत के संविधान ने देवनागरी लिपि में हिंदी को संघ की आधिकारिक भाषा घोषित किया। हिंदी के अलावा, प्रसिद्ध भाषा अंग्रेजी को भी भारत की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। भारत के विभिन्न राज्य कानून के माध्यम से अपनी स्वयं की आधिकारिक भाषाओं की पहचान करते हैं।

अंग्रेजी भारत की प्रमुख भाषाओं में से एक है और इसे भारत की लगभग 40 प्रतिशत आबादी बोलती है। वर्ष 1950 में यह घोषित किया गया था कि संविधान बनने के 15 वर्ष बाद यानी 26 जनवरी, 1965 तक अंग्रेजी का प्रयोग समाप्त कर दिया जाएगा। इस निर्णय का भारत के गैर-हिंदी भाषी क्षेत्रों, जैसे कि दक्षिण भारत में खुशी से स्वागत नहीं किया गया क्योंकि उनकी भाषाएँ हिंदी से दूर-दूर तक मिलती-जुलती नहीं हैं। इसे ध्यान में रखते हुए, संसद ने आधिकारिक भाषा अधिनियम, 1963 को लागू किया, जिसने 1965 के बाद आधिकारिक उद्देश्यों के लिए हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी के उपयोग को जारी रखने की अनुमति दी। अनुच्छेद 343 में संघ की राजभाषा का उल्लेख है तथा उपधारा-1 में कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी।

अगर हम हिंदी भाषा के इतिहास पर नज़र डालें तो पाएंगे कि यह इंडो-यूरोपीय भाषा समूह की इंडो-आर्यन शाखा से संबंधित है। बाद में इस पर फारसी का प्रभाव पड़ा और मुगलों ने इस भाषा में अपने तरीके से बदलाव किए। हालाँकि हिंदी संस्कृत से विकसित हुई है, लेकिन इसके कई शब्द अरबी या फारसी से निकले हैं।

दुनिया भर में रहने वाले बड़े भारतीय समुदाय और उत्तर तथा दक्षिण भारत के लिए 'संपर्क भाषा' होने के अलावा, इस भाषा को 'एकता की भाषा' के रूप में भी जाना जाता है, क्योंकि महात्मा गांधी ने भारत को एकजुट करने के लिए हिंदी का ही प्रयोग किया था।

सबसे बड़ी बात यह है कि हिंदी को भारत की राष्ट्रीय भाषा नहीं बनाया जा सका। यह न केवल कानून के खिलाफ है, बल्कि उन क्षेत्रों के हितों के भी खिलाफ है जहां यह भाषा नहीं बोली जाती है। भारत विविधताओं का देश है, जिसमें विभिन्न समुदायों, पृष्ठभूमियों, धर्मों आदि के लोग रहते हैं। एक व्यक्ति क्या खाता है, कैसे बोलता है, यह हर क्षेत्र में अलग-अलग होता है। इस विविधता में, भारतीय अक्सर खुद को एकजुट करने के लिए प्रतीकों और वस्तुओं की तलाश करते हैं। राष्ट्रगान, राष्ट्रीय पशु, राष्ट्रीय गीत, राष्ट्रीय फूल कुछ प्रासंगिक उदाहरण हैं। यह प्रसिद्ध रूप से कहा जाता है कि भारत में भाषा हर कुछ किलोमीटर पर पानी की तरह बदल जाती है। इस प्रकार, अन्य सार्वजनिक प्रतीकों के विपरीत, भारत के लिए राष्ट्रीय भाषा का चुनाव कठिन रहा है और इस पर हिंसा और गरमागरम बहसें भी हुई हैं।

किसी भाषा को थोपने के खतरे कई तरह के हैं। यह गैर-देशी वक्ताओं की साक्षरता क्षमता को प्रभावित कर सकता है जिससे उनका आत्मविश्वास प्रभावित हो सकता है। यह अन्य भाषाओं और बोलियों को भी खतरे में डाल सकता है और विविधता

को कम कर सकता है। राष्ट्रीय एकीकरण लोगों की मौखिक व्यक्तिगतता की कीमत पर नहीं आ सकता। भाषा संस्कृति का अभिन्न अंग है और इसलिए भारत में बोली जाने वाली अन्य सभी भाषाओं की तुलना में हिंदी को तरजीह देना इसकी निरंतरता को बहुत दूर ले जाता है।

हिंदी को राष्ट्रीय भाषा क्यों नहीं बनाया जा सकता, इसके कई कारण हैं, जैसे—भारत में लोगों को 8वीं अनुसूची में सूचीबद्ध 22 भाषाओं में से किसी में भी बोलने का अधिकार है और हमारा देश विविधता में अपनी एकता के लिए जाना जाता है, इसलिए हिंदी को राष्ट्रीय भाषा बनाने पर बहस देश की शांति और सद्भाव को बिगाड़ती है। इसके अलावा, गुजरात उच्च न्यायालय ने एक बयान जारी कर कहा है कि हिंदी देश की भाषा नहीं है क्योंकि भारत के संविधान में हिंदी को आधिकारिक भाषा बताया गया है, न कि राष्ट्रीय भाषा। इसलिए यह कहा जा सकता है कि हिंदी को भारत की राष्ट्रीय भाषा के रूप में इस्तेमाल करना आवश्यक नहीं है।

◆◆◆

(ग) राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अंतर

5. राजभाषा व राष्ट्रभाषा में अंतर बताइए।

अथवा

राजभाषा व राष्ट्रभाषा में अंतर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा में अंतर–हमारा देश 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ। तब एक ध्वज, एक संविधान, एक राष्ट्रगान के साथ एक भाषा की बात सामने आयी। भारत संघ की राष्ट्रभाषा पर संविधान में चर्चा हुई। अधिकांश सदस्यों का मत हिंदी के पक्ष में था लेकिन उसके विरोध में भी कुछ स्वर उठे। लोगों ने कहा कि जिस प्रकार भारत में रहने वाला प्रत्येक नागरिक भारतीय है, उसी प्रकार भारत के अंदर बोली जाने वाली प्रत्येक भाषा भारतीय है और दूसरे शब्दों में राष्ट्रभाषा। भारत में बोली जाने वाली भाषाएँ, उपभाषाएँ काफी हैं। अतः हर एक को राष्ट्रभाषा नहीं बनाया जा सकता था। इस विवाद से बचने के लिए भारत के संविधान में किसी भी भाषा को राष्ट्रभाषा का दर्जा न देकर हिंदी को धारा 343 के अंतर्गत राजभाषा (ऑफिशियल लैंग्वेज) का दर्जा दिया गया और लिपि के रूप में देवनागरी लिपि स्वीकार की गई। यह राजभाषा संबंधी अध्याय 14 सितंबर, 1949 को संविधान के अंतर्गत जोड़ा गया। अतः यह दिन पूरे देश में हिंदी दिवस और अब भारतीय भाषा दिवस के रूप में मनाया जाता है। संविधान की आठवीं अनुसूची में हिंदी के साथ-साथ 21 अन्य भाषाओं को प्रमुख यानी राष्ट्रीय भाषाओं के रूप में सूचीबद्ध किया गया। ये भाषाएँ हैं—संस्कृत, उर्दू, सिंधी, पंजाबी, बांग्ला, असमिया, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़, ओड़िया, मराठी, गुजराती, कश्मीरी, मणिपुरी, कोंकणी, नेपाली, मैथिली, संथाली, बोडो और डोगरी।

इस प्रकार आज पूरे देश में हिंदी की स्थिति यह है कि हिंदी भारत संघ की यानी कि केंद्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों, अधीनस्थ कार्यालयों, केंद्र सरकार के अधीन आने वाले निगमों, निकायों, उपक्रमों, बैंकों, बीमा कंपनियों आदि की राजभाषा है।

हिन्दी संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज बाइस राष्ट्रीय भाषाओं में से एक राष्ट्रीय भाषा है और उत्तराखंड, झारखंड, छत्तीसगढ़ उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश व केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली व अंडमान-निकोबार की राज्यभाषा यानी स्टेट लैंग्वेज है तथा उनके लिए यानी राज्यों तथा राज्य के लोगों के लिए प्रथम भाषा (राजभाषा) है। लगभग 18 बोलियों—ब्रज, कन्नौजी, हरियाणवी, खड़ी बोली (कौरवी), बुंदेलखंडी, छत्तीसगढ़ी, अवधी, बघेली, भोजपुरी, मैथिली, मगही, मालवी, मेवाती, मारवाड़ी, जयपुरी, निमाड़ी, कुमायूँनी, गढ़वाली आदि की मिली-जुली साहित्यिक हिंदी है और समूचे देश की संपर्क भाषा के रूप में फलती-फूलती जा रही है।

राष्ट्रभाषा उस भाषा को कहेंगे जो समूचे राष्ट्र में लागू हो सके, पूरे देश का कामकाज और शिक्षण जिस भाषा में हो सके। वर्तमान में वैधानिक तौर पर कोई भाषा राष्ट्रभाषा नहीं है। जब हम वैधानिक यानी कि सरकारी पक्ष अलग रखकर लोकपक्ष की बात करते हैं तो पाते हैं कि हिंदी राष्ट्रभाषा रही है और है। हिंदी ही वह भाषा है जिसने अंग्रेजी शासन के खिलाफ वातावरण

बनाने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। देश की सर्वांगीण उन्नति में राष्ट्रभाषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। जब हम राष्ट्रभाषा के सभी गुणों के संदर्भ में हिंदी को परखते हैं तो पाते हैं कि हिंदी में ये सभी गुण विद्यमान हैं। हिंदी का विकास वैदिक संस्कृत से हुआ है जो कि अधिकांशतः सभी भारतीय भाषाओं की जननी है। हिंदी बोलने-समझने वालों की संख्या देश में सबसे ज्यादा है।

हमारे देश में हिन्दी के अलावा अन्य भारतीय भाषा के बोलने वालों की संख्या बहुत कम है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में विश्व की संपन्न भाषाओं में से एक है। अतः अन्य भाषाओं के मुकाबले हिंदी ही भारत संघ की राष्ट्रभाषा का पद पाने की हकदार है। हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो सारे देश को एकता की कड़ी में बाँधे रख सकती है।

वेदप्रकाश दुबे के अनुसार, **"आदिकाल से लेकर आज आधुनिक युग के मुहाने तक हिंदी भाषा विद्वानों के लिए अध्यात्म-चिंतन व समाज-सुधार का केंद्र रही है।"**

ऐसे ही मनीषियों की चुनी हुई मुख्य बातें हम हिंदी के विषय में दे रहे हैं जिससे हिंदी के महत्त्व व विशालता का पता चलता है–

(1) **"मेरी दृष्टि में हिंदुस्तान की एकता के लिए हिन्दी भाषा जितना काम करेगी, उससे बहुत अधिक काम देवनागरी करेगी।"**
–आचार्य विनोबा भावे

(2) **"देश के सबसे बड़े भू-भाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्रभाषा पद की अधिकारिणी है।"**
–नेताजी सुभाषचंद्र बोस

(3) **"सारे संघ की राष्ट्रभाषा की आवेदिका हिन्दी का अपना विशाल क्षेत्र है। हरियाणा, राजस्थान, मेवाड़, मालवा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मुक्त प्रांत और बिहार हिंदी की अपनी भूमि है। यह वही भूमि है जिसने हिंदी में आदिम कवियों सरह, स्वयंभू आदि को नाम दिया। यही भूमि है जहाँ (मेरठ, अम्बाला, कमिश्नरियों) प्रचाल (आगरा, रूहेलखण्ड कमिश्नरियों) की भूमि में वशिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज ने ऋगुवेद के मंत्र रचे और प्रवाहण, उद्दालक और याज्ञवल्क्य ने अपनी उड़ानें की। इस विशाल प्रदेश के हर भाग में अशिक्षित, शिक्षित नागरिक, सभी हिंदी को समझते हैं। इसलिए यहाँ हिंदी को राजभाषा के तौर पर शिक्षा के माध्यम के तौर पर स्वीकार किया जाना बिल्कुल स्वाभाविक है। हिंदी भारतीय संघ की राष्ट्रभाषा होगी व उसके आधे से अधिक लोगों को अपनी भाषा होने के कारण वह अंतरराष्ट्रीय जगत में एक महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करेगी।"**
–राहुल सांकृत्यायन

उपर्युक्त मनीषियों की चुनी हुई बातों के आधार पर हम कह सकते हैं कि हिंदी भाषा को भारतवर्ष के विभिन्न भाषा-भाषी विद्वानों ने एक-सा प्यार और सम्मान दिया है। आज हमें भी अपने देश की राष्ट्रीय एकता मजबूत करने हेतु इसी प्रकार के प्यार और सम्मान को हिंदी के प्रति अपनाकर यह कथन सार्थक करना है कि–

'मन का भाव संगीत एक है,
भाषाओं की पोशाकें अलग हैं,
हिंदी हमारी माँ है,
हम सब भाई-बहन हैं।'

हिंदी भाषा आज हमारी राजभाषा है। लेकिन भारतीय संविधान ने हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं दिया है।

भारत एक बहुभाषी और जातीय विभिन्नता वाला देश है। यहाँ विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के लोग निवास करते हैं। भारत में जातिगत, धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता के होते हुए भी इसमें अंतर्निहित एकता है। हिंदी भाषा आज देश में राजभाषा, संपर्क भाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में मान्य है और कई प्रदेशों में तो लोगों की यह मातृभाषा भी है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम काल में हिंदी का सर्वाधिक और सहज विकास हुआ है।

किसी भी देश के लिए उसकी राष्ट्रभाषा का महत्त्व माँ के समान होता है और राष्ट्रभाषा से वंचित राष्ट्र और वहाँ के निवासी गूँगे के समान हो जाते हैं। एक स्वतंत्र और सम्प्रभुता संपन्न राष्ट्र के लिए तीन प्रमुख प्रतीक माने जाते हैं–राष्ट्र-ध्वज, राष्ट्र-गान, राष्ट्र-भाषा। इनमें राष्ट्रभाषा का महत्त्व सर्वाधिक होता है।

भारतीय संदर्भ में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और राज्यभाषा–इन शब्दों की विशिष्ट व्याख्या की गई है। इस संदर्भ में जनभाषा और संपर्क भाषा जैसे पदों का प्रयोग भी किया गया है। हिंदी का विकास साक्षी है कि हिन्दी ने संघर्ष झेलते हुए अपनी पहचान स्थिर की है।

राष्ट्रभाषा और राजभाषा के अंतर का विश्लेषण निम्नानुसार है–

(1) राष्ट्रभाषा किसी देश के जनसमूह द्वारा पारस्परिक संवाद और संपर्क के लिए प्रयुक्त होती है, जबकि राजभाषा का प्रयोग प्रशासनिक कार्यों के लिए होता है।

(2) राष्ट्रभाषा मूलतः जनता की भाषा है जबकि राजभाषा राजकीय कार्यों में सलंग्न लोगों की भाषा होती है। राजभाषा में ऐसी विशिष्ट शब्दावली का उपयोग किया जाता है जो केवल प्रशासनिक पत्राचार, टिप्पणियों, आदेशों, अधिसूचनाओं, परिपत्रों आदि के काम आती है।

(3) राष्ट्रभाषा का प्रयोग स्वच्छंद और सीमारहित होता है। क्योंकि सामान्य लोग भाषा का उपयोग अनौपचारिकता से करते हैं। राजभाषा औपचारिकताओं की मर्यादाओं से बँधी रहती है।

(4) सामान्यतः प्रत्येक राष्ट्रभाषा को राजभाषा बनने का अवसर प्राप्त होता है लेकिन प्रत्येक राजभाषा राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती।

(5) राष्ट्रभाषा हमेशा जनसामान्य में प्रचलित लोकभाषा होती है जबकि राजभाषा के पद पर कभी-कभी विदेशी भाषाएँ भी आसीन हो जाती हैं, जैसे कि हमारे देश में क्रमशः फारसी और अंग्रेजी को राजभाषा बनने का अवसर मिला।

(6) राष्ट्रभाषा में देश की विभिन्न उपभाषाओं और बोलियों के शब्द आवश्यकतानुसार जुड़ते चले जाते हैं जबकि राजभाषा अपने विशिष्ट प्रयोजन के लिए एक निश्चित शब्द समूह का उपयोग करती है। उसमें उपभाषाओं और स्थानीय बोलियों के शब्दों के समावेश की गुंजाइश नहीं होती है।

(7) राष्ट्रभाषा में समूचे देश की जनता की संस्कृति, आस्था, जीवन शैली साकार होती है जबकि राजभाषा में केवल प्रशासनिक और वैधानिक विषयों का समावेश होता है।

(8) राष्ट्रभाषा राष्ट्र के किसी भी कोने में और किसी भी व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त होती है जबकि राजभाषा का प्रयोग क्षेत्र के कार्यालयों की चारदिवारी तक सीमित है।

वास्तव में राष्ट्रभाषा *(National Language)*, राज्यभाषा *(State Language)* और राजभाषा *(Official Language)* शब्दों में सूक्ष्म किंतु स्पष्ट भेद है। राष्ट्रभाषा समस्त राष्ट्र के लोगों द्वारा संपर्क के लिए प्रयुक्त एवं मान्य होती है। राजभाषा की परिकल्पना का आधार मुख्य रूप से प्रशासनिक कार्यों में भाषा की प्रयुक्ति है। प्रशासन, विधानपालिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका, सभी स्तरों पर राजकीय कार्यों के लिए प्रयुक्त भाषा ही राजभाषा है। प्रायः प्रत्येक राष्ट्रभाषा को राजभाषा होने का अवसर प्राप्त होता है। लेकिन प्रत्येक राजभाषा राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती। भारत देश की स्थिति इससे भिन्न है। भारतीय संविधान ने भारत संघ की राजभाषा हिन्दी घोषित की है। भारतीय संविधान में हिंदी के लिए कहीं भी राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है। हिंदी को संघ भाषा या संघ की राजभाषा कहा गया है। भारतीय संविधान में **'राष्ट्रभाषा'** का कोई उल्लेख नहीं हुआ है। किंतु इसमें 'प्रादेशिक' भाषा के अंतर्गत संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भारतीय भाषाओं का उल्लेख मिलता है। किसी राज्य की राजभाषा भी हो सकती है। राज्यभाषा की संकल्पना 'राष्ट्रभाषा' से लघु होती है। राज्यभाषा किसी राज्य अथवा प्रदेश तक सीमित रहती है जबकि राष्ट्रभाषा पूरे राष्ट्र से जुड़ी रहती है।

हिंदी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा दोनों स्तरों पर स्वीकारा गया है और इन दोनों स्तरों पर हिंदी का अपना विशेष महत्त्व भी है। राज्यभाषा किसी विशिष्ट राज्य के राजकाज के लिए विधि द्वारा मान्यता प्राप्त भाषा होती है।

राज्यभाषा तथा राजभाषा की अपेक्षा राष्ट्रभाषा अधिक सर्वसमावेशी, विस्तृत एवं राष्ट्रीय अस्मिता से युक्त लोकमान्य भाषा होती है।

◆◆◆

4

हिन्दी का अनुप्रयोग

(क) राजभाषा संबंधी विशिष्ट शब्दावली

1. राजभाषा संबंधी विशिष्ट शब्दावली किसे कहते हैं? इसके स्वरूप पर प्रकाश डालिए।

अथवा

पारिभाषिक शब्दावली का अभिप्राय स्पष्ट करते हुए इसके महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–राजभाषा संबंधी विशिष्ट शब्दावली : अर्थ एवं स्वरूप–भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति प्राप्त है, परंतु व्यवहार में अंग्रेजी भाषा का बोलबाला है। नौकरशाह एवं भाषा की राजनीति करने वाले राजनयिक अंग्रेजी के पक्ष में तर्क देते रहे हैं। लेकिन सामान्य जन एक संपर्क भाषा के रूप में हिंदी को ही अपनाता रहा है। एक तर्क यह दिया जा रहा है कि कामकाजी भाषा के रूप में हिंदी की प्रकृति क्लिष्ट और दुर्बोध है। इसलिए यह आवश्यक है कि विविध प्रयुक्ति रूपों में उसका व्यापक रूप में प्रयोग हो और प्रयोग के आधार पर ही उद्भूत समस्याओं का निराकरण हो। इसलिए कला तथा शास्त्र के विवेचन-विश्लेषण के लिए राजभाषा संबंधी शब्दावली का प्रयोग अनिवार्य है। यह विशेष शब्दावली **'पारिभाषिक शब्दावली'** कही जाती है।

भाषा की लघुत्तम इकाई को शब्द कहते हैं। जब विषय-विवेचन के लिए सामान्य शब्दावली पर्याप्त नहीं होती है, तब एक विशेष शब्दावली का प्रयोग अनिवार्य होता है। इसी विशेष शब्दावली को **पारिभाषिक शब्दावली** कहा जाता है। अंग्रेजी में इसके लिए **Technical Terminology** शब्द का प्रयोग किया जाता है। हिंदी में कुछ विद्वान इसे **'तकनीकी शब्दावली'** कहते हैं। तथापि इसका प्रयोग भौतिकी, रासायनिक या यांत्रिक संबंधी शाखाओं के विद्वान करते हैं। परंतु आजकल इन शब्दों की आवश्यकता साधारण बोलचाल, दैनिक व्यवहार के लिए भी बढ़ रही है। आजकल वित्तीय संस्थान, कार्यालयी व्यवहार, वाणिज्य आदि के लिए विशेष शब्दावली और वाक्यावली का निर्माण भी जरूरी हो गया है।

पारिभाषिक शब्दावली शब्दों की वह व्यवस्था है, जिसकी किसी विशिष्ट मानवीय गतिविधि या प्रकृति के किसी विशिष्ट पक्ष से संबंधित ज्ञान-विज्ञान की शाखा में प्रवीण व्यक्ति के लिए विशेष महत्ता है। पारिभाषिक शब्द विशेषज्ञों और तकनीशियनों द्वारा अंगीकृत, अनुकूलित और आविष्कृत शब्द हैं। **डॉ. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव** के अनुसार प्रत्येक शब्द या शब्दावली विशिष्ट विचारों को व्यक्त करने की एक संक्षिप्त व्यवस्था है। वैज्ञानिक विचार एवं अन्वेषण भारतीय भाषाओं में रूपांतरित करने की आवश्यकता है। अतः पारिभाषिक शब्दावली एवं वाक्यावली के निर्माण पर बल दिया जा रहा है।

परिभाषाएँ–पारिभाषिक शब्दावली संबंधी कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं–

1. **रेण्डम हाऊस**–विशिष्ट विषय, जैसे–विज्ञान अथवा कला विषय, की तकनीकी अभिव्यक्ति के लिए निश्चित अथवा विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त एक शब्द, अधिकांशतः कला का शब्द।
2. **डॉ. रघुवीर**–जिन शब्दों की सीमा बाँध दी जाती है, वे पारिभाषिक शब्द होते हैं और जिनकी सीमा नहीं बाँधी जाती, वे साधारण शब्द होते हैं।

3. **डॉ. गोपाल शर्मा**–पारिभाषिक शब्द वह है जो किसी ज्ञान-विशेष के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होता हो तथा जिसका अर्थ एक परिभाषा से स्थिर किया गया हो।

4. **डॉ. भोलानाथ तिवारी**–पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते हैं जो रसायन, भौतिकी, दर्शन, राजनीति आदि विभिन्न शास्त्रों या विज्ञानों के शब्द होते हैं तथा जो अपने-अपने क्षेत्र में निश्चित अर्थ में सुनिश्चित रूप से परिभाषित होते हैं। अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से निश्चित रूप से पारिभाषिक होने के कारण ये शब्द पारिभाषिक शब्द कहे जाते हैं।

5. **डॉ. सूरजभान सिंह**–पारिभाषिक शब्द अभिधार्थ में ही ग्रहण किए जाते हैं, लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ में नहीं।

6. **डॉ. बापू देसाई**–ज्ञान-विज्ञान तथा कला-कारीगरी और प्रशासन के व्यवहार में प्रयुक्त किए जाने वाले विशिष्टार्थ द्योतक शब्दों को पारिभाषिक शब्द कहते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली का महत्त्व–पारिभाषिक शब्दावली के महत्त्व का अध्ययन करने के लिए निम्नलिखित बातें सहायक होती हैं–

1. कृत्रिम शब्दावली–भाषा की सामान्य शब्दावली के समान पारिभाषिक शब्दावली का उद्‌भव और विकास समाज में स्वयं नहीं होता, क्योंकि पारिभाषिक शब्दावली कृत्रिम होती है। ग्रहण, अनुकूलन, संचयन और निर्माण–इन चार प्रक्रियाओं द्वारा उसका निर्धारण होता है। सामान्य शब्दों का जनक समाज होता है। लेकिन इस शब्दावली का निर्धारण भाषा-विशेषज्ञ करते हैं, जो शब्दों के निर्माण की प्रक्रिया के साथ-साथ विशेष प्रकार के तकनीकी ज्ञान के विशेषज्ञ भी होते हैं। कृत्रिम शब्द होने के कारण इनमें वह लचीलापन नहीं होता, जो सामान्य शब्दों में होता है।

2. नियतार्थता–पारिभाषिक शब्द का अर्थ सुनिश्चित और स्पष्ट होता है। उसमें न तो अतिव्याप्ति दोष होता है और न ही अव्याप्ति दोष। वह शब्द अपनी अर्थ-परिधि से न अधिक अर्थ व्यक्त करता है, न कम। पारिभाषिक शब्दावली के क्षेत्र में यह असह्य होता है कि दो शब्दों की अर्थ सीमाएँ एक-दूसरे से टकराएं या एक-दूसरे के अर्थवृत्तों को काटें। वैज्ञानिक भाषा में जिस परिशुद्‌धता की अपेक्षा होती है, उसमें द्‌वयार्थकता या संदिग्धार्थकता के लिए कोई अवकाश नहीं होता।

3. एक संकल्पना, एक शब्द–पारिभाषिक शब्द किसी न किसी ज्ञान शाखा से संबंधित होते हैं। संबंधित शास्त्र या विज्ञान की एक संकल्पना के लिए एक शब्द का ही प्रयोग होता है। जिस तरह पारिभाषिक शब्द का एक निश्चित नियत अर्थ होता है, उसी तरह एक संकल्पना के लिए एक से अधिक शब्द नहीं होते। बहुअर्थता के साथ-साथ शाब्दिक पर्याय का भी पारिभाषिक शब्दावली में कोई स्थान नहीं होता। इसके निर्धारण की **"संचयन प्रक्रिया"** में किसी विशिष्ट वस्तु, भाव या क्रिया को व्यक्त करने वाले 'शब्द' को अपना कर उसका संचयन किया जाता है।

4. विशेष क्षेत्र में प्रयोग–पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग विशेष क्षेत्र में होता है। इनका प्रयोग दैनिक व्यवहार में नहीं होता बल्कि विशिष्ट शास्त्र, विज्ञान तथा व्यवहार में होता है। हर ज्ञान-शाखा की अपनी पारिभाषिक शब्दावली होती है। आधुनिक ज्ञान प्रायः 600 शाखाओं में विभक्त है। सभी शाखाओं में प्रयुक्त शब्दों की संख्या बीस लाख है। पारिभाषिक शब्दावली की परिधि बढ़ रही है।

5. संक्षिप्तता एवं सरलता–पारिभाषिक शब्द अल्पाक्षर होने चाहिए, ताकि प्रयोक्ता को असुविधा न हो। ऐसे शब्द प्रायः एक शब्द के या मूल शब्द के होते हैं, अधिक शब्द के नहीं। अधिक शब्दों से बना पारिभाषिक शब्द संधि-समासयुक्त होता है; जैसे–पुनः स्मरण– Recall, हद्रजन– Hydrogen आदि। यहाँ संक्षिप्तता और सरलता से तात्पर्य जनसामान्य की दृष्टि से मात्र उच्चारण सौकर्य नहीं है। इसका निर्धारण-निर्माण जनसामान्य के उच्चारण सौकर्य को ध्यान में रखकर होना आवश्यक भी नहीं है। पारिभाषिक शब्दावली न तो सबके लिए है, न बहुसंख्यकों के लिए, बल्कि यह गिने-चुने व्यक्तियों के लिए है जो ज्ञान की किसी विशेष शाखा में विशेषता या प्रवीणता प्राप्त करने के इच्छुक हैं।

6. शब्दों में एकरूपता–एक ही श्रेणी या विषय के शब्दों में एकरूपता होती है; जैसे–ओषजन (ऑक्सीजन), नत्रजन (नाइट्रोजन), हद्रजन (हाइड्रोजन) आदि या स्वनिम, अपिम, आर्थिम, लेखिम् आदि। ऐसा होने से उनमें सहज रूप से सरलता और बोधगम्यता भी आ जाती है।

7. भाषा की प्रकृति के अनुरूप स्वरूप–यदि स्रोत भाषा में परिभाषित शब्द एक शब्दीय है, तो उसके लिए लक्ष्य भाषा में निर्मित शब्द भी यथासंभव एक शब्दीय ही हो, द्‌विशब्दीय नहीं। दूसरे शब्दों में, समस्त पद का अनुवाद यथासंभव समस्त शब्द में

नहीं होना चाहिए। जैसे Executive के लिए 'कार्यपालिका' शब्द ठीक है, Curo के लिए 'कलाकृति' शब्द उचित है। पारिभाषित शब्द अगर किसी अन्य भाषा से ग्रहण किया गया है, तो उसे अनुकूलन प्रक्रिया द्वारा अपनी भाषा की प्रकृति के अनुकूल किया जाता है, जैसे अंग्रेजी का 'एकेदमी' शब्द 'अकादमी' बन जाता है।

◆◆◆

2. पारिभाषिक शब्द की सामान्य विशेषताएँ बताइए।

उत्तर–पारिभाषिक शब्द की सामान्य विशेषताएँ–पारिभाषिक शब्द की सामान्य विशेषताएँ निम्नवत् हैं–

1. पारिभाषिक शब्द का उच्चारण प्रयोक्ता के लिए सरल होना चाहिए, ताकि उसे इसका प्रयोग करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट या परेशानी का अनुभव न हो। अगर पारिभाषिक शब्द किसी अन्य भाषा से लिया जाए तो उसे **"अनुकूलन पद्धति"** (ध्वनि की दृष्टि से ग्रहण भाषा के अनुकूल) से अपनी भाषा की प्रकृति के अनुकूल ढाल लेना चाहिए। जैसे–एकेडमी-अकादमी
2. पारिभाषिक शब्द का अर्थ सुनिश्चित, नियत, सुबोध तथा स्पष्ट होना चाहिए। उसे अर्थ-संकोच अथवा अर्थ-विस्तार दोष से मुक्त होना चाहिए।
3. एक संकल्पना के शब्द को निरंतर केवल एक ही अर्थ का परिचायक होना चाहिए। एक संकल्पना के लिए एक ही शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. पारिभाषिक शब्द अल्पाक्षर होना चाहिए।
5. पारिभाषिक शब्द यथासंभव एक ही मूल शब्द से निर्मित होना चाहिए, ताकि उसमें अर्थ की गहनता, स्पष्टता तथा उच्चारण-सुगमता हो।
6. व्युत्पादन एवं रूपायन के गुण मूल पारिभाषिक शब्द के लिए अनिवार्य हैं, ताकि जरूरत पड़ने पर उपसर्ग, प्रत्यय या शब्द जोड़कर अन्य संबंध शब्द निर्मित किए जा सकें।
7. सरलता और बोधगम्यता के लिए समान श्रेणी के शब्दों में एकरूपता का होना अनिवार्य है। साथ-ही-साथ असमान संकल्पनाओं अथवा चीजों के लिए मिलते-जुलते शब्द-प्रयोग को टालना चाहिए।
8. हर शब्द को स्वतंत्र तथा अलग होना चाहिए, ताकि उसे पढ़कर या सुनकर पाठक या श्रोता को किसी अन्य पारिभाषिक शब्द का भ्रम न हो।
9. यदि विभिन्न भाषाओं के लिए एक ही पारिभाषिक शब्द का प्रयोग किया जाना हो तो उस शब्द को उच्चारण की दृष्टि से सरल तथा अर्थ की दृष्टि से एकदम स्पष्ट होना चाहिए।
10. पारिभाषिक शब्दावली में संक्षिप्तता के साथ-साथ सांकेतिकता को भी एक जरूरी गुण मानना चाहिए, ताकि भाषा के नूतन संकेत वैज्ञानिक प्रगति को रेखांकित कर सकें। किसी भी रूप या भाव के वर्णनात्मक अथवा शब्दात्मक संकेत अर्थ-ग्रहण के माध्यम बन जाते हैं, जैसे–साप्ताहिक हिन्दुस्तान।

◆◆◆

3. पारिभाषिक शब्दावली के भेद बताइए।

उत्तर–पारिभाषिक शब्दावली के भेद–राजेन्द्रलाल मिश्र ने पारिभाषिक शब्दावली के पाँच भेद बतलाए हैं–

1. वे शब्द जो सामान्य शब्द के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं तथा पारिभाषिक शब्द के रूप में भी। किंतु मुख्यतः मानविकी के क्षेत्र में ये अर्धपारिभाषिक कहे जा सकते हैं, जैसे–मांसपेशी, पंखुरी आदि।
2. सामान्य शब्द जो कभी-कभी पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे–सिर, पेड़, लोहा, ज्वर आदि।
3. वनस्पतिविज्ञान तथा प्राणीविज्ञान में प्रयुक्त द्विपदीय (Binominal) नाम जो मूलतः व्युत्पत्ति की दृष्टि से सार्थक थे, किंतु अब उनके दोनों शब्द केवल वंश और जाति को प्रकट करते हैं।
4. वे तकनीकी शब्द जो अब भी अपना व्युत्पत्तिपरक अर्थ देते हैं, जैसे–सल्फ्यूरिक अम्ल। इस वर्ग के शब्द शरीर रचना विज्ञान या रसायनशास्त्र के होते हैं।

5. इसमें योगरूढ़ शब्द आते हैं। निर्माण के समय ये शब्द वस्तुओं के विशिष्ट गुणों के द्योतक थे, किंतु अब इनका पुराना व्युत्पत्तिजनक अर्थ लुप्त हो गया है और ये मात्र नाम रह गए हैं, जैसे–कुनैन, ऑक्सीजन इत्यादि।

(क) डॉ. गोपाल शर्मा पारिभाषिक शब्दों के तीन प्रकार मानते हैं–

1. पूर्ण पारिभाषिक, 2. मध्यस्थ, तथा 3. सामान्य।

(ख) डॉ. भोलानाथ तिवारी ने मुख्यतः पाँच आधारों पर पारिभाषिक शब्दावली को विभक्त किया है–

1. **स्रोत के आधार पर–**(i) तत्सम, (ii) तद्भव, (iii) आगत (विदेशी), (iv) देशज, (v) संकर (मिश्रित, जैसे–जिलाधीश)। स्रोत के आधार पर ही तिवारी जी ने एक अन्य प्रकार से भी वर्गीकरण किया है–(i) परम्परागत अर्थात् अपनी भाषा परम्परा में पहले से प्रयुक्त, (ii) गृहीत अर्थात् दूसरी भाषा से लिए गए, (iii) नवनिर्मित अर्थात् नए बनाए गए।

2. **रचना के आधार पर–**(i) मूल, (ii) यौगिक (उपसर्गयुक्त) समस्त पद, (iii) प्रत्यय-युक्त समस्तपद, (iv) उपसर्ग-प्रत्यययुक्त समस्तपद। आगे अर्थ के आधार पर यौगिक के दो भेद हो सकते हैं–सामान्य तथा रूढ़। सामान्य शब्द अपना सामान्य अर्थ भी देते हैं किंतु रूढ़ शब्द विशेष अर्थ में रूढ़ हो जाते हैं।

3. **प्रयोग के आधार पर–**(i) पूर्ण पारिभाषिक जो केवल पारिभाषिक हों, सामान्य भाषा में प्रयुक्त न हों, जैसे 'भाषाविज्ञान' का पारिभाषिक शब्द 'स्वन' (फोन)। (ii) जो सामान्य भाषा में भी प्रयुक्त हो तथा पारिभाषिक रूप में भी। जैसे 'रूप' जो सामान्य शब्द भी है तथा भाषाविज्ञान में पारिभाषिक रूप में भी प्रयुक्त होता है।

4. **अर्थ की सूक्ष्मता-स्थूलता के आधार पर–**(i) संकल्पनाबोधक : जो सूक्ष्म संकल्पनाओं, प्रत्ययों या अवधारणाओं को व्यक्त करें। जैसे–अद्वैतवाद, समीकरण, ऊर्जा। (ii) वस्तुबोधक : जो वस्तुओं को बोधिक करें, जैसे–कैल्शियम।

5. **शब्दों की पदीय इकाइयों के आधार पर–**(i) एकपदीय : जिसमें एक पद हो, जैसे–धमनी। (ii) द्विपदीय : जिसमें दो पद हों, जैसे–वनस्पतिविज्ञान या प्राणीविज्ञान।

◆◆◆

---

4. पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के सिद्धांतों पर प्रकाश डालिए।

अथवा

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण संबंधी विभिन्न सिद्धांतों का परिचय दीजिए।

उत्तर–पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के सिद्धांत–हिन्दी भाषा में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के संबंध में अनेक विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत रहे हैं। इसका मूल कारण यह है कि एक ओर तो हिन्दी भाषा मूलतः संस्कृत भाषा से विकसित हुई है तो दूसरी ओर आधुनिक युग में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पाश्चात्य देशों को ही विशिष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त हैं। अतः ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाले विशिष्ट शब्दों को, जो कि मूलतः पाश्चात्य देशों द्वारा प्रचलित हुए हैं, किस रूप में स्वीकार किया जाए–यह प्रश्न हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण सिद्धांत के सामने यक्ष-प्रश्न बन गया है। कतिपय विद्वानों का मत है कि संस्कृत भाषा को आधार बनाकर उसके उपसर्ग, प्रत्यय, संधि आदि के आधार पर नए पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया जाए, तो कुछ विद्वान पाश्चात्य शब्दों का हिन्दी लिप्यंतरण करने के पक्षधर हैं। अतः हिन्दी भाषा में पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के सिद्धांत के संबंध में मुख्यतः निम्नलिखित चार तथ्यों को समझना आवश्यक है–

(क) पारिभाषिक शब्दावली-निर्माण के संबंध में प्रचलित विभिन्न वाद

(ख) पारिभाषिक शब्द-रचना विधि

(ग) वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली-निर्माण विधि

(घ) अन्य क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली-निर्माण विधि

(क) पारिभाषिक शब्दावली-निर्माण के संबंध में प्रचलित विभिन्न वाद–जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि हिन्दी में पारिभाषिक शब्दावली की निर्माण विधि के संबंध में विद्वानों में मतभेद है। इस मत-वैविध्य के आधार पर पारिभाषिक शब्दावली निर्माण सिद्धांत में मुख्यतः निम्नलिखित चार वाद प्रचलित हैं–

(1) संस्कृतवादी अथवा शुद्धतावादी विचारधारा।

(2) अंतरराष्ट्रीयवादी विचारधारा।

(3) लोकवादी विचारधारा।

(4) समन्वयवादी विचारधारा।

(1) संस्कृतवादी अथवा शुद्धतावादी विचारधारा–इस वाद के प्रवर्तक डॉ. रघुवीर थे। इस विचारधारा के समर्थकों डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन आदि का मत था कि अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों के हिन्दीकरण के लिए मुख्य रूप से संस्कृत के शब्दों, उपसर्गों, प्रत्ययों, धातुओं आदि को अपनाया जाना चाहिए। इनका तर्क था–चूँकि भारत की अधिकांश भाषाएँ संस्कृत शब्दों से युक्त हैं। अतः हिन्दी में इस विधि द्वारा बनाई गई पारिभाषिक शब्दावली, न केवल हिन्दीभाषी लोगों, बल्कि अन्य भाषाओं के लोगों द्वारा भी सहज ही समझी जा सकती है। इसके अतिरिक्त संस्कृत में ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न विषयों के शब्द पहले से ही विद्यमान हैं और संस्कृत की 600 धातुओं, 80 प्रत्ययों और 26 उपसर्गों से असंख्य शब्द बनाए जा सकते हैं। इन विद्वानों का यह भी कथन था कि पारिभाषिक शब्द किसी क्षेत्र विशेष से ही संबंधित होते हैं और इनका प्रयोग भी विशिष्ट विद्वान ही करते हैं, अतः पारिभाषिक शब्दों का सरल होना अनिवार्य नहीं मानना चाहिए। वे संकल्पनात्मक शब्दों में समानता रखने के पक्षधर थे ताकि एक ही शब्द से अनेक शब्द बनाए जा सकें; उदाहरण के लिए–'दूर'(Tele) शब्द से 'दूरभाष', 'दूरसंचार', 'दूरदर्शन' आदि पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया जा सकता है।

डॉ. रघुवीर का तो यहाँ तक मानना था कि भारतीय भाषाओं में उधार का एक भी विदेशी शब्द न आने पाए। उन्होंने संस्कृतनिष्ठ शब्दों को आधार बनाकर कतिपय नए प्रयोगों से अपने शब्दकोश 'ए कम्परिहेंसिव इंग्लिश-हिन्दी डिक्शनरी' (A Comprehensive English-Hindi Dictionary) में जो पारिभाषिक शब्द दिए हैं, उनके कुछ उदाहरण देखिए–

कंकरीट (Concrete)	–	संघा	रिक्शा (Rickshaw)	–	नरयान
टिकट (Ticket)	–	संयान-पत्र	सीमेंट (Cement)	–	वज्रचूर्ण
रेल (Rail)	–	संयान	बल्ब (Bulb)	–	विद्युत कंद
इंजन (Engine)	–	यंत्र	बोतल (Bottle)	–	कूपी
मिल (Mill)	–	निर्माणी	कॉलर (Collar)	–	ग्रैवेय

डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन आदि ने इसका समर्थन किया। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का मत था–"संस्कृत ही वह स्रोत होना चाहिए, जिससे नए शब्द बड़ी संख्या में बनाए जाने हैं। इस मामले में पांडित्य प्रदर्शन को टालना चाहिए और हमारा प्रयत्न ऐसे शब्द बनाना होना चाहिए जो बोलचाल की भाषा की प्रकृति और रचना में ठीक बैठ जाएँ और अपनी सरलता के लिए प्यारे हों।" इसीलिए इसे **राष्ट्रीयतावादी विचारधारा** भी कहा गया।

परंतु इस विचारधारा का अनेक विद्वानों ने विरोध किया। इसके विरोध में अनेक तर्क दिए गए; यथा–(क) संस्कृत के धातु, उपसर्ग, प्रत्यय आदि के प्रयोग से ही ज्ञान-विज्ञान के सभी भावों को प्रकट करना असंभव होगा। (ख) विदेशी भाषाओं में प्रयुक्त अनेक पारिभाषिक शब्द; यथा–किलोमीटर, रेडियो, मीटर, लीटर आदि इतने अधिक प्रचलित हो चुके हैं कि इनके स्थान पर नए पारिभाषिक शब्दों का निर्माण करना उचित नहीं है। (ग) विदेशी, देशज शब्दों को छोड़कर व केवल तत्सम शब्दों को आधार बनाकर पारिभाषिक शब्दों का निर्माण करने से वे दुरुह व संस्कृतनिष्ठ हो जाएँगे।

(2) अंतरराष्ट्रीयवादी विचारधारा–इसे 'अभिग्रहणवादी', 'शब्दग्रहणवादी', 'स्वीकरणवादी' तथा 'आदानवादी' विचारधारा भी कहा जाता है। इस विचारधारा के अनुसार भारतीय पारिभाषिक शब्दावली के लिए अंग्रेजी तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय भाषाओं के शब्दों को यथावत् ग्रहण कर लेना चाहिए। इस विचारधारा के समर्थकों में अधिकतर वैज्ञानिक या समाज सेवक हैं। इस संबंध में उनके अपने-अपने तर्क भी हैं। इस विचारधारा के समर्थकों में सी. राजगोपालाचारी व गंगाप्रसाद मुखर्जी का नाम सर्वोपरि है। इन विद्वानों का मत था कि विश्व में अंग्रेजी भाषा के पारिभाषिक शब्द सर्वाधिक रूप से स्वीकृत हो चुके हैं। चूँकि भारत के अधिकांश लोग अंग्रेजी भाषा को समझते हैं, अतः हिन्दी में भी इन्हें पूर्ववत् अपना लेना चाहिए। इसके साथ-साथ उनका यह भी तर्क था कि ऐसा करने से हिन्दी भाषी लोग विश्व की विभिन्न भाषाओं से जुड़े रह सकेंगे और विदेशी भी हमारी भाषा को सरलता से समझ सकेंगे। अपने मत को प्रबल बनाने के लिए उनका मुख्य प्रश्न था–विदेश में तो नए-नए शब्द बनते रहेंगे क्योंकि वहाँ ज्ञान-विज्ञान पर निरंतर शोधकार्य होता रहता है। तब क्या भारतीय उनके लिए नए-नए शब्द ही गढ़ते रहेंगे?

इसी प्रकार डॉ. सावित्री अग्रवाल का तर्क है कि वैज्ञानिक यदि अनुसंधान, शिक्षा और प्रसार के क्षेत्र से हटकर राजभाषा हिन्दी या अन्य भाषाओं में ग्रंथ लिखना चाहें तो उनके पास इतना समय नहीं होता है कि वे पहले वैज्ञानिक शब्दावली रटें और फिर उसका सही-सही प्रयोग करें। इसी प्रकार कुछ विद्वानों का यह भी तर्क है कि अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग से केवल वैज्ञानिक ही नहीं, अनुवादक और लेखक भी पारिभाषिक शब्दावली की समस्या से मुक्त हो जाएगा।

निस्संदेह, इस विचारधारा के समर्थकों का दृष्टिकोण स्पष्ट व व्यापक था परंतु उनकी इस विचारधारा को भी विशेष समर्थन नहीं मिल सका क्योंकि कोई भी भाषाभाषी अपनी भाषा का विदेशीकरण स्वीकार नहीं कर सकता है। इसके अतिरिक्त इस विचारधारा के सभी सुझावों को स्वीकार करने में सबसे बड़ी बाधा दोनों भाषाओं की प्रकृति की भिन्नता है। अंग्रेजी भाषा की प्रकृति हिन्दी विरोधी है। अतः हिन्दी में अंग्रेजी भाषा के सभी पारिभाषिक शब्दों को आत्मसात् करना असंभव है।

(3) लोकवादी विचारधारा–इसे प्रयोगवादी अथवा हिन्दुस्तानवादी विचारधारा भी कहा जाता है। हिन्दुस्तानी कल्चर सोसाइटी के पंडित सुंदरलाल, उस्मानिया विश्वविद्यालय के डॉ. जफर हसन आदि समेत कुछ प्रमुख व्यक्ति एक ऐसी विचारधारा के समर्थक थे जिसके अनुसार पारिभाषिक शब्दावली निर्माण में हिन्दुस्तानी शब्दों, प्रत्ययों, उपसर्गों आदि को आधार बनाना उचित प्रतीत होता था। इसके अतिरिक्त वे हिन्दी के समस्त स्रोतों से आए पारिभाषिक शब्दों को भी स्वीकार करने पर बल देते थे। इस तरह वे पारिभाषिक शब्दावली में प्रचलित देशज, तत्सम, तद्भव व विदेशज शब्दों को भी समाहित करने के पक्षधर थे। सन् 1954 में सरकारी अनुदान से '**हिन्दुस्तानी के लिए शब्दावली असूल**' नामक पारिभाषिक शब्दावली का प्रकाशन भी हुआ। इसमें दिए गए कतिपय पारिभाषिक शब्दों के उदाहरण देखिए–

Chairman	—	मसनदी	Psychology	—	मनविद्या
Government	—	शासनिया	Half Heartendness	—	अधदिलापन
Simplify	—	आसानियाना	Pedagogy	—	तालीमविद्या

परंतु यह विचारधारा भी स्वीकृत न हो सकी। इसके भी अनेक कारण थे। इसका सबसे बड़ा दोष यह था कि देशज, विदेशज शब्दों को भी स्वीकार करने से इस पारिभाषिक शब्दावली का स्वरूप अवैज्ञानिक, अतार्किक व अव्यावहारिक हो गया। दूसरा दोष यह था कि जिन पारिभाषिक शब्दों में विदेशज, विशेषकर अरबी व फारसी के शब्दों को आधार बनाया गया था, वे शब्द क्लिष्ट प्रतीत होते थे और वे ज्ञान-विज्ञान के मूल भाव को प्रकट करने में भी असमर्थ थे। अतः यह विचारधारा भी असामान्य हो गई।

ऐसे अटपटे, बनावटी पारिभाषिक शब्दों को देखकर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने खिन्न होकर लिखा था–**"यहाँ मैं यह जरूर कहूँगा कि आज पारिभाषिक शब्दों के लिए जो नए शब्द इस्तेमाल हो रहे हैं, उनमें बहुत-से इतने असाधारण रूप से बनावटी और सचमुच बेमानी हैं कि मुझे उनसे डर लगता है। इसका कारण यह है कि उनके पीछे कोई पृष्ठभूमि या इतिहास नहीं है।"**

(4) समन्वयवादी विचारधारा–इन तीनों विचारधाराओं के गुण-दोषों का अवलोकन कर कतिपय विद्वानों ने पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के संबंध में एक ऐसी विचारधारा प्रस्तुत की जिसे मध्यमार्गी या समन्वयवादी या अनतिवादी विचारधारा कहा जाता है। यह विचारधारा मूलतः उपर्युक्त तीनों विचारधाराओं के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती है। इसके अनुसार–

(i) जहाँ तक संभव हो, संस्कृत की धातु, प्रत्यय, उपसर्ग आदि के आधार पर पारिभाषिक शब्द का निर्माण किया जाए।

(ii) यदि संस्कृत में ही ज्ञान-विज्ञान से संबंधित कोई शब्द प्रयुक्त हो चुका हो, तब उसे उस क्षेत्र का पारिभाषिक शब्द मान लिया जाए।

(iii) जो शब्द अंग्रेजी भाषा में अत्यधिक प्रचलित हो चुके हैं और संस्कृत भाषा में उतना अनुकूल शब्द न मिल सके तब अंग्रेजी भाषा के ही उस शब्द को स्वीकार कर लिया जाए।

(iv) यदि किसी लोक-प्रचलित या अन्य भारतीय भाषा का शब्द उपयुक्त प्रतीत हो, तब उसे भी पारिभाषिक शब्द के रूप में स्वीकार किया जाए।

(v) यदि अंग्रेजी भाषा का कोई शब्द उच्चारण या प्रयोग में जटिल प्रतीत हो, तब उसका हिंदीकरण करके प्रयोग में लाना चाहिए।

(vi) यदि परंपरागत तद्भव शब्द उच्चारण में दुरुह न हो, तो उसे भी पारिभाषिक शब्दावली में स्थान दिया जा सकता है।

(ख) पारिभाषिक शब्द रचना विधि–निस्संदेह, पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के सिद्धांत में अनेक वाद प्रचलित हैं, परंतु सभी वादों में यह एक बात समान रूप से देखने को मिलती है कि इनमें पारिभाषिक शब्द निर्माण के लिए एक तर्कसम्मत पद्धति को अपनाया जाता है। पारिभाषिक शब्द की रचना करते समय सबसे पहले यह प्रयास किया जाता है कि वह पारिभाषिक शब्द संस्कृत भाषा की धातु, प्रत्यय, उपसर्ग आदि के प्रयोग से ही बन जाए। यदि यह प्रयास उपयुक्त न हो, तब हिन्दी भाषा के तद्भव, देशज शब्दों के साथ हिन्दी या संस्कृत के प्रत्यय, उपसर्ग आदि के योग से पारिभाषिक शब्द की रचना की जाए। यदि यह प्रयास भी उपयुक्त न रहे, तब अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों, उपसर्ग, प्रत्यय आदि को आधार बनाया जाए और सबसे अंत में अंतरराष्ट्रीय भाषाओं के या विदेशज शब्दों के प्रयोग द्वारा पारिभाषिक शब्द की रचना की जानी चाहिए।

हिन्दी भाषा में पारिभाषिक शब्दों की रचना मुख्य रूप से संस्कृत व हिन्दी भाषा के शब्दों, प्रत्ययों, उपसर्गों आदि के आधार पर ही की जाती है। उदाहरण के लिए, निम्न वर्गों के पारिभाषिक शब्दों को देखिए–

1. उपसर्ग के प्रयोग से निर्मित पारिभाषिक शब्द–हिन्दी व संस्कृत में उपसर्गों का प्रयोग स्वतंत्र रूप से न होकर, शब्दों के पूर्व में लगकर ही होता है। हिन्दी में संस्कृत व हिन्दी भाषा दोनों के ही उपसर्गों के प्रयोग से पारिभाषिक शब्दों की रचना की जाती है, यथा–

संस्कृत के उपसर्ग–

अति	–	अति	+	रिक्त	=	अतिरिक्त(Surplus)
अधि	–	अधि	+	नियम	=	अधिनियम(Act)
अभि	–	अभि	+	कर्ता	=	अभिकर्ता(Agent)
प्र	–	प्र	+	शासन	=	प्रशासन(Administration)
उप	–	उप	+	अध्यक्ष	=	उपाध्यक्ष(Vice-chairman)
अनु	–	अनु	+	दान	=	अनुदान(Grant)

हिन्दी के उपसर्ग–

अन	–	अन	+	जान	=	अनजान(Unknown)
नि	–	नि	+	डर	=	निडर(Fearless)

इनके अतिरिक्त आवश्यकता पड़ने पर विदेशज उपसर्गों की सहायता से भी पारिभाषिक शब्दों की रचना की जाती है, जैसे–नापसंद (ना + पसंद) = Disliked आदि।

2. प्रत्यय के प्रयोग से निर्मित पारिभाषिक शब्द–उपसर्गों की भाँति प्रत्ययों का भी स्वतंत्र रूप से प्रयोग नहीं होता है, वे शब्द के अंत में लगकर नए शब्द की रचना करते है। हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली में तत्सम, तद्भव प्रत्ययों के साथ-साथ विदेशज व देशज प्रत्ययों से भी पारिभाषिक शब्दों की रचना की जाती है; यथा–

तत्सम या संस्कृत के प्रत्यय–

–अन	–	पंजी	+	अन	=	पंजीयन(Registration)
–इका	–	निर्देश	+	इका	=	निर्देशिका(Directory)
–ईय	–	राष्ट्र	+	ईय	=	राष्ट्रीय(National)
–तर	–	लघु	+	तर	=	लघुतर(Smaller)

तद्भव या हिन्दी के प्रत्यय–

–आई	–	महँगा	+	आई	=	महँगाई(Dearness)
–आहट	–	आकुल	+	आहट	=	अकुलाहट(Anxiety)

देशज एवं विदेशज के प्रत्यय–

–दार (विदेशज)	–	वफा	+	दार	=	वफादार(Faithful)
–अक्कड़ (देशज)	–	घूमना	+	अक्कड़	=	घुमक्कड़(Wanderer)

3. सामासिक विधि से पारिभाषिक शब्दों की रचना–हिन्दी में कई बार दो या अधिक शब्दों के परस्पर योग से (उपसर्ग या प्रत्यय से नहीं) भी पारिभाषिक शब्दों की रचना की जा सकती है। ऐसी स्थिति में दोनों सामासिक शब्द तत्सम, तद्भव, तद्भव व तत्सम, विदेशज व तत्सम, विदेशज व तद्भव आदि हो सकते हैं। उदाहरण के लिए–

राष्ट्रध्वज (National Flag) = राष्ट्र + ध्वज (तत्सम + तत्सम)

बाजार मूल्य (Market Value) = बाजार + मूल्य (विदेशज + तत्सम)

पहचान पत्र (Identity Card) = पहचान + पत्र (तद्भव + तत्सम)

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि पारिभाषिक शब्दों की रचना ऐसी होनी चाहिए जिससे संबंधित वस्तु या तथ्य पूर्णतः स्पष्ट, बोधगम्य व सरल प्रतीत हो।

(ग) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली निर्माण विधि–भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा सन् 1950 में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने तकनीकी व वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण में कुछ महत्त्वपूर्ण संकेत दिए हैं, जो कि निम्नलिखित हैं–

1. अंग्रेजी या विदेशी भाषाओं के अति प्रचलित वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों को यथासंभव उसी रूप में अपनाना चाहिए परंतु उनका लिप्यंतरण भारतीय भाषाओं की प्रकृति के अनुरूप ही किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए–ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, लीटर, मीटर, किलोग्राम आदि।
2. अंग्रेजी भाषा में अतिप्रचलित प्रतीक नामों या संक्षिप्त रूपों को देवनागरी लिपि में लिखा जा सकता है; यथा– c.m. = से.मी., kg = कि.ग्रा. आदि।
3. ज्यामितीय आकृतियों के साथ देवनागरी लिपि के वर्णों, यथा–क.,ख.,ग. आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए, परंतु त्रिकोणमिती में केवल रोमन अक्षर ही प्रयुक्त होने चाहिए; यथा–साइन A, थीटा B, कॉस C आदि।
4. जनसामान्य में प्रचलित हो चुके विदेशज शब्दों; यथा–इंजन, डीजल, मीटर, टॉर्च, कैंची आदि को पारिभाषिक शब्दावली में पूर्ववत ग्रहण करना चाहिए।
5. संकल्पनाओं को व्यक्त करने वाले शब्दों का सामान्य ढंग से अनुवाद होना चाहिए।
6. अंग्रेजी शब्दों के देवनागरी लिप्यंतरण के समय उनके उच्चरित मूल रूप को यथासंभव निकट रखने का प्रयास किया जाना चाहिए; यथा–Report = रिपोर्ताज अथवा रिपोर्ट, Academic= अकादमिक।
7. वैज्ञानिक शब्दावली में संकर शब्दों की रचना करते समय उनकी स्पष्टता, संक्षिप्तता व बोधगम्यता पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए, उदाहरण के लिए–Ionization = आयनीकरण आदि।
8. वैज्ञानिक शब्दावली में यदि सामासिक शब्दों का प्रयोग होता है, तब उनके बीच योजक-चिह्न लगा देना चाहिए ताकि वे बोधगम्य बन सकें; यथा–Assessment officer= कर-निर्धारण अधिकारी।
9. रोमन लिपि के शब्दों का हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली में लिप्यंतरण करते समय पंचम वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) के अर्ध रूप के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना चाहिए; यथा–Lens = लेंस, Patent = पेटेंट आदि (न कि लेन्स, पेटेण्ट)।
10. हिन्दी में अपनाए गए अंतरराष्ट्रीय शब्दों को, यदि विशेष कारण न हो तब, पुल्लिंग रूप में ही अपनाना चाहिए; यथा–रन (भारत ने 326 रन बनाए), गोल (भारत ने एक गोल किया), स्पेन से जर्मनी हारा आदि।
11. हिन्दी शब्द चयन में सरलता, अर्थ की परिशुद्धता, सुबोधता आदि की ओर विशेष ध्यान रखना चाहिए।
12. पारिभाषिक शब्दों का निर्माण करते समय यह प्रयास भी होना चाहिए कि इनसे भारतीय भाषाओं के शब्दों में यथासंभव एकरूपता आ सके।
13. वे देशज या तद्भव शब्द, जो किसी भी वैज्ञानिक या पारिभाषिक शब्द के स्थान पर सामान्य रूप से प्रयुक्त होने लगे हैं, उन्हें ही पारिभाषिक शब्द के रूप में अपना लेना चाहिए। उदाहरण के लिए–टेलीग्राम (Telegram) = तार, कॉंटिनेंट (Continent) = महाद्वीप, एटम (Atom) = परमाणु आदि।

(घ) **अन्य क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली निर्माण विधि**–प्रशासन, समाज विज्ञान, राजनीति शिक्षा आदि के क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाले पारिभाषिक शब्दों की रचना के संबंध में भी वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने अनेक महत्त्वपूर्ण कदम उठाए हैं। उदाहरण के लिए, निम्न पारिभाषिक शब्दों को देखिए जिनमें उपर्युक्त मापदण्ड ही अपनाए गए हैं–

Fee	–	फीस या शुल्क	Academic	–	अकादमिक	Jury	–	जूरी
Pension	–	पेंशन	Clerk	–	लिपिक	Liftman	–	लिफ्टचालक
Adhoc	–	तदर्थ	Agent	–	अभिकर्ता	Operator	–	प्रचालक
						Secretary	–	सचिव

◆◆◆

5. पारिभाषिक शब्दावली के अपेक्षित गुण कौन-कौन से हैं?

उत्तर–पारिभाषिक शब्दावली के अपेक्षित गुण–किसी भी भाषा के पारिभाषिक शब्द के लिए निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक माना जाता है।

1. पारिभाषिक शब्द का अर्थ निश्चित, नियम तथा स्पष्ट होना चाहिए। अर्थात् इन्हें अर्थ-विस्तार तथा अर्थ-संकोच दोष से मुक्त होना चाहिए।
2. पारिभाषिक शब्द उच्चारण की दृष्टि से सरल तथा सुबोध होने चाहिए ताकि प्रयोक्ता के लिए सुविधा हो।
3. पारिभाषिक शब्द के नियम अर्थ में प्रत्यय, उपसर्ग, या अन्य उपयुक्त शब्द जोड़कर परिवर्तन किए जाने की गुंजाइश रहनी चाहिए। जैसे secretary शब्द के लिए इसमें 'सचिव' प्रयुक्त होता है किन्तु उससे पहले Under शब्द जुड़ जाने से Under Decretary हो जाएगा और हिन्दी में 'अवर सचिव'।
4. समान पारिभाषिक शब्दों में एकरूपता होनी चाहिए।
5. पारिभाषिक शब्द विषय-वस्तु या ज्ञान-क्षेत्र से सम्बद्ध 'संकल्पनाओं' तथा वस्तुओं के लिए सम्बद्ध (अनुरूप) होने चाहिए।
6. किसी अन्य भाषा से कोई पारिभाषिक शब्द यदि अपना लिया जाए तो अनुकूलन की प्रक्रिया से अपनी भाषा की प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुसार ढाल लेना चाहिए।
7. प्रत्येक पारिभाषिक शब्द की स्वतंत्र सत्ता तथा अर्थवत्ता होनी चाहिए। अर्थात् प्रत्येक पारिभाषिक शब्द एक-दूसरे से सर्वथा अलग होना चाहिए।
8. पारिभाषिक शब्द का निर्माण यथासम्भव एवं यथास्थिति एक ही मूल शब्द से किया जाना चाहिए ताकि उसमें सुबोधा, स्पष्टता तथा अर्थ की निश्चितता विद्यमान रहे।
9. पारिभाषिक शब्द का रूप यथासम्भव लघु होना आवश्यक है ताकि बार-बार प्रयोग करने में प्रयोक्ता को असुविधा न हो।

◆◆◆

6. पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में आने वाली प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिए।

अथवा

पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में कौन-कौन-सी समस्याएं आती हैं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में आने वाली समस्याएं–शब्द निर्माण की नियत प्रक्रिया के सहारे नए शब्दों की रचना करना निर्माण प्रक्रिया कहलाता है। यह प्रक्रिया मूलतः तीन प्रकार की होती है–(क) उपसर्ग से शब्द निर्माण, (ख) प्रत्ययों से शब्द निर्माण, (ग) समास पद्धति से शब्द निर्माण।

शब्द निर्माण प्रक्रिया के संदर्भ में तीन समस्याएँ आती हैं–

1. स्रोत भाषा की समस्या। 2. रचना-विधान की समस्या।
3. किन शब्दों का निर्माण करें।

1. स्रोत भाषा की समस्या–हमारे देश में प्रमुख रूप से दो परिवार की भाषाएँ व्यवहृत हैं। अतः समस्या यह है कि स्रोत भाषा के रूप में किस भाषा का चयन करें? डॉ. **सत्यव्रत** कहते हैं–**"ग्रहण, संचयन, अनुकूलन की तीनों प्रक्रियाएँ तो सभी भाषाओं में संभव हैं, परंतु यह निर्माण प्रक्रिया विशुद्ध रूप में केवल संस्कृत, चीनी, ग्रीक और लैटिन–इन चार भाषाओं में ही संभव है। इन चारों में ही इस प्रक्रिया की क्षमता है और इनमें भी संस्कृत भाषा का स्थान सर्वोपरि है। धातु, उपसर्ग और प्रत्यय–ये तीन संस्कृत की शब्द-निर्माण प्रक्रिया के महनीय तत्त्व हैं। संस्कृत को स्रोत भाषा के रूप में अपनाने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए; क्योंकि यूरोप में भी अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, रूसी आदि समृद्ध भाषाएँ अपनी पारिभाषिक शब्दावली के लिए ग्रीक-लैटिन का सहारा लेती रही हैं।"**

2. रचना-विधान की समस्या–शब्दों के रचना-विधान में प्रत्यय, उपसर्ग तथा समास सम-स्रोतीय हों या विषम-स्रोतीय, पुनरुद्धारवादी, राष्ट्रीयतावादी या संस्कृतवादी, इस संदर्भ में अधिकतर विद्वान संस्कृत के पक्षपाती हैं। शब्दों के निर्माण में या तो इन्होंने संस्कृत-उपसर्ग-प्रत्ययों की सहायता ली या नए प्रत्यय बनाए; किंतु हिंदी के बहुप्रचलित उपसर्ग, प्रत्ययों, जैसे–ना, बे, दार, बंद, की आदि का पूर्ण बहिष्कार किया है। साथ ही मूल शब्द संस्कृत में प्राप्त न हो, तो नए धातु बनाए गए हैं। इससे शब्द आम शब्दों के समान सरल नहीं होते हैं। इनका तर्क है कि अंग्रेजी में भी ग्रीक तथा लैटिन धातुओं से पारिभाषिक शब्दों का निर्माण हुआ है। ये शब्द भी निरंतर प्रयोग और संपर्क के कारण सरल तथा स्पष्ट लगने लगे हैं। अंग्रेजी शब्दावली की अभ्यस्त पीढ़ी को संस्कृत से बने शब्द क्लिष्ट लगना संभव है। लेकिन आने वाली पीढ़ी इन शब्दों की अभ्यस्त होगी। भारत सरकार के पारिभाषिक शब्दावली आयोग ने अगस्त, 1962 में शब्द रचना की इन समस्याओं का समाधान करने के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार दिए थे–

(i) जहाँ तक संभव हो, एक योजनाबद्ध तरीके से उचित प्रत्यय लगाकर शब्द बनाए जाएँ, परंतु प्रत्यय लगाने से पहले व्याकरण की दृष्टि से मूल शब्द का वास्तविक रूप भली-भाँति समझ लेना चाहिए।
(ii) केवल हिंदी के तद्भव उपसर्गों और प्रत्ययों का प्रयोग सीमित रूप में होना चाहिए।
(iii) जहाँ तक बन सके, समासों में संधि की उपेक्षा की जाए। अधिकांश शब्दों में दो शब्दों के बीच 'हाइफन' लगाया जाए।
(iv) संकर शब्दों को भी स्वीकृत माना गया है।
(v) विद्वानों का एक वर्ग ऐसा है, जो संस्कृत के अलावा प्रचलित भाषा को अपना कर शब्द-रचना करना स्वाभाविक मानता है। उनकी मान्यता रही है, **"वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो आज हिंदुस्तानी भाषा की चर्चा एक प्रयोगात्मक वृत्ति की द्योतक है। सांस्कृतिक और राजनैतिक समन्वय की दृष्टि से वर्तमान भारत में उर्दू-हिंदी का 'दीन-ए-इलाहीकरण' करने की इच्छा ही मिटती हुई हिंदुस्तानी भाषा को प्राणवायु प्रदान करती है।"**
(vi) इस वर्ग के विद्वानों ने पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में तत्सम शब्दों के साथ तद्भव और विदेशी शब्दों को अपनाने पर बल दिया है। शब्द-रचना प्रक्रिया में उर्दू और हिंदी तथा उपभाषा के व्याकरण का भी नवीन पद्धति से प्रयोग किया है; जैसे–रसीद (नाम धातु), रसीदियाना (रसीद + इयाना), Impartial – बेपक्ष। यहाँ क्रिया और नाम धातु से हिंदी-उर्दू के प्रत्यय लगाकर प्रयोगात्मक वृत्ति से शब्द तैयार किए गए हैं।

3. किन शब्दों का निर्माण करें?–इस समस्या के दो पहलू हैं–1. क्या संस्कृत के पूर्व शब्दों का प्रयोग पारिभाषिक रूप में किया जाए? 2. क्या बोलचाल तथा व्यवहार में बहुप्रचलित शब्दों की उपेक्षा कर सभी शब्दों का फिर से निर्माण करें? राष्ट्रीयतावादी, पुनरुद्धारवादी वर्ग ने एक ओर संस्कृत के पुराने शब्दों का जीर्णोद्धार किया है, साथ ही बहु-प्रचलित तद्भव, विदेशी शब्दों से परहेज कर नए शब्द बनाए हैं; जैसे–

अंग्रेजी	नया शब्द/जीर्णोद्धार	प्रचलित शब्द
Arsenic	नेपालज (सुश्रुत)	संखिया
Sulpher	शुल्वारि (अभिधान चिंतामणी)	गंधक
Neutral	उदासीन (अर्थशास्त्र)	तटस्थ
Tehsil	भुक्ति (अशोक का शिलालेख)	तहसील

इसी तरह हर शब्द को 'संस्कृत शब्द' में परिवर्तित करने का दुराग्रह समर्थनीय नहीं हो सकता। इसीलिए समन्वयवादी वर्ग की मान्यता रही है—"ऐसे विदेशी, देशज तथा तद्भव शब्द जो खूब चल पड़े हैं या नए हैं, किंतु जिनके लिए नए शब्द लेने या गढ़ने की आवश्यकता नहीं, वे लिए जाएँ।"

- शब्दावली आयोग ने कहा है—"कुछ प्रसंगों में संस्कृत पर्याय की अपेक्षा स्थानीय हिंदी शब्दों एवं हिन्दी में आत्मसात अन्य भाषा के शब्दों को भी स्वीकृत किया जाए, क्योंकि वे जनसामान्य के प्रयोग में आते हैं। ऐसे प्रसंगों में अन्य भाषाओं को भी अपने पर्याय रखने की छूट होगी।"
- डॉ. गोपाल शर्मा कहते हैं—"संस्कृत तत्सम और तद्भव शब्दों से युक्त शब्द-भंडार के अनिवार्य प्रयोग से नई समस्याएँ सामने आई हैं। विज्ञान की एक ही संकल्पना विभिन्न शब्दावली निर्माताओं ने अलग-अलग पर्यायवाची शब्दों द्वारा स्थापित की है।..... हिंदी और अन्य भारतीय भाषा विज्ञान शिक्षा के सबल माध्यम के रूप में अभी ठोस धरातल पर स्थित नहीं हो सके हैं। फलस्वरूप वैज्ञानिक विषयों पर जो साहित्य लिखा गया है, वह नगण्य है। शब्दावली के संगठित रूप से विकसित होने से पुस्तकों के लेखन-प्रकाशन में व्याघात पहुँचा, तो दूसरी ओर एक संकल्पना के लिए प्रयुक्त विविध शब्द रूपों से अध्येता भ्रमित हैं। इससे मुक्ति पाने के लिए कुछ शब्द रूपों का मानकीकरण अनिवार्य हो जाता है।"

◆◆◆

7. विशिष्ट राजभाषा शब्दावली का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

अथवा

पारिभाषिक शब्दावली के उदाहरण लिखिए।

उत्तर–विशिष्ट राजभाषा शब्दावली–सरकारी कामकाज या सरकारी विभाग या उनसे संबद्ध अधिकारियों और कर्मचारियों के लिए राजभाषा आयोग ने कुछ शब्दों को प्रामाणिक मान्यता प्रदान की है। इन शब्दों को पारिभाषिक शब्दावली कहते हैं। वित्तीय संस्थान, जनसंचार माध्यम आदि जीवन के सभी क्षेत्रों में पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग हो रहा है। अतः यहाँ पारिभाषिक शब्दावली दी जा रही है–

विभिन्न विषयों की विशिष्ट राजभाषा शब्दावली

प्रशासन

Account	लेखा/खाता, हिसाब-किताब
Account-book	लेखा बही
Account-head	लेखा शीर्ष
Account-joint	संयुक्त लेखा
Accountant	लेखाकार
Account-general	महालेखाकार
Accounts Officer	लेखा अधिकारी
Acknowledgement	पावती/प्राप्ति-सूचना/अभिस्वीकृति
Act	अधिनियम/कार्य
Acting	कार्यकारी
Action	कार्रवाई

Adhoc	तदर्थ
Adjournment	स्थगन
Administration	प्रशासन
Administrative	प्रशासनिक/प्रशासी/प्रशासकीय
Administrator	प्रशासक
Admissibility	ग्राह्यता/स्वीकार्यता
Admonition	भर्त्सना
Advalorem	यथामूल्य
Advance	अग्रिम/पेशगी
Adviser	सलाहकार
Affidavit	शपथपत्र/हलफनामा
Affirmation	पुष्टि/प्रति ज्ञान
Agenda	कार्यसूची/कार्यक्रम
Agreement	करार/अनुबंध
Allegation	आरोप/अभिकथन
Allotment	आवंटन
Allowance	भत्ता
–City Compensatory	नगर प्रति-पूरक भत्ता
–Dearness	महँगाई भत्ता
–Over time	समयोपरि भत्ता
–Travelling	यात्रा भत्ता
Amendement	संशोधन
Annexure	अनुलग्नक
Anomaly	असंगति
Antecedents	पूर्ववृत
Anticipated Expenditure	प्रत्याशित व्यय
Appendix	परिशिष्ट
Appointing Authority	नियुक्ति अधिकारी
Appointment	नियुक्ति
Appropriation	विनियोजन
Approval	अनुमोदन
Article	अनुच्छेद/नियम/वस्तु

Assessment	कर निर्धारण
Assessor	मूल्यांकक/कर-निर्धारक
Assistant	सहायक
At Par	सममूल्य
Attached	संलग्न/सम्बद्ध
Attestation	साक्षांकन/तसदीक
Audit	लेखा परीक्षा
Auditor	लेखा परीक्षक
Autonomous	स्वायत्त
Authority	प्राधिकारी/प्राधिकार/प्राधिकरण
Bill	विधेयक/हुंडी/बिल
Brochure	विवरणिका
Bonafide	वास्तविक/असली/सद्भावी
Bond	बंध पत्र
Bulletin	समाचारिका
By-law	उपविधि
Branch Manager	शाखा प्रबंधक
Bill Collector	बिल संग्रहकर्ता
Cabinet	मंत्रिमंडल
Candidate	अभ्यर्थी/प्रत्याशी/उम्मीदवार
Caretaker	अवधायक/रखवाला
Cashier	रोकड़िया/खजांची
Cell	कक्षा/प्रकोष्ठ
Centralization	केन्द्रीयकरण
Chancellor	कुलाधिपति
Charge Sheet	आरोप पत्र
Chronological Summary	तारीखवार सार
Circular	परिपत्र
Clerical Error	लेखन-अशुद्धि
Clerk	लिपिक
–Lower Division	अवर श्रेणी लिपिक
–Upper Division	प्रवर श्रेणी लिपिक

Code	संहिता
Collector	समाहर्ता
Commission	आयोग
Commissioner	आयुक्त
Communique	विज्ञप्ति
Competent Authority	सक्षम-अधिकारी
Concurrence	सहमति
Consultant	परामर्शदाता
Contingencies	आकस्मिक व्यय
Corrigendum	शुद्धि पत्र
Counter Signature	प्रतिहस्ताक्षर
Compensatory Allowance	प्रतिकर या प्रतिपूरक भत्ता
Competent	प्राधिकृत
Custody	अभिरक्षा
De Facto	वस्तुतः
Demotion	पदावनति
Denovo	नए सिरे से
Deputation	प्रतिनियुक्ति
Designation	पद नाम
Dispatch	प्रेषण
Directive	निदेश
Director	निदेशक
Directorate	निदेशालय
Directory	निर्देशिका
Discrepancy	विसंगति
Discretion	विवेक/विवेकाधिकार
Discretionary Power	विवेकाधिकार
Dissent	विसम्मति/असहमति
Division	प्रभाग/मंडल
Document	प्रलेख/दस्तावेज़
Draft	प्रारूप
Drafting	प्रारूपण/मसौदा लेखन

Draftsman	प्रारूपकार/नक्शानवीस
Efficiency Bar	दक्षतारोध
Emergency	आपातस्थिति/आपातिक
Emoluments	परिलब्धियाँ
Employee	कर्मचारी
Employer	नियोक्ता
Enclosure	संलग्नक
Endorsement	पृष्ठांकन
Enquiry	जाँच/पूछताछ
Errata	शुद्धिपत्र
Estimate	प्राक्कलन
Exchequer	राजकोष
Executive	कार्यपालिका/कार्यपालक
Exigencies of Work	कार्यहित
Ex-officio	पदेन
Exparte	एकपक्षीय
Eligibility	पात्रता
Earned Leave	अर्जित अवकाश
Faculty	संकाय
File	मिसिल/फाइल
Movement	मिसिल संचलन
Financial Year	वित्तवर्ष
Fund	निधि
–Provident	भविष्य निधि
Formal	औपचारिक
Gazette	राजपत्र, गज़ट
Gazetted Holiday	राजपत्रित छुट्टी
Gazetted Officer	राजपत्रित अधिकारी
Grant	अनुदान
Headquarter	मुख्यालय
Honorarium	मानदेय
Honorary	अवैतनिक

Identity Card	पहचान पत्र
Interim Letter	अंतरिम उत्तर
Investigator	अन्वेषक
Invoice	बीजक
Ipso Facto	यथातथ्य/इसी बात से
Ipso Jure	विधितः
Issue	निर्गम/जारी करना
Job Work	छुटपुट कार्य
Joining Date	कार्य ग्रहण तारीख
Judicial	न्यायिक/अदालती
Judiciary	न्यायपालिका
Junior	कनिष्ठ/अवर
Jurisdiction	क्षेत्राधिकार
Leave	अवकाश
–Duty	कायार्थ अवकाश
–Earned	अर्जित अवकाश
–Extraordinary	असाधारण अवकाश
–Maternity	प्रसूति अवकाश
–Paternity	पितृत्व अवकाश
–Quarantine	संगरोध छुट्टी
–Restricted	वैकल्पिक, प्रतिबंधित, सीमित
Legislature	विधायिका
Liasion Officer	संपर्क अधिकारी
Lien	पूर्वाग्रहणाधिकार
Licence	अनुज्ञप्ति
Mailing List	डाक सूची
Maintenance	अनुरक्षण
Management	प्रबंध/व्यवस्था
Manager	प्रबंधक
Mandate	अधिदेश
Mayor	महापौर
Minister	मंत्री

-Chief	मुख्यमंत्री
-Deputy	उपमंत्री
-Prime	प्रधानमंत्री
-of State	राज्य मंत्री
-Without Portfolio	निर्विभाग मंत्री
Ministry	मंत्रालय
Minutes	कार्यवृत्त
Misappropriation	दुर्विनियोग
Modus Operandi	कार्य-प्रणाली
Motion	प्रस्ताव
Needful	आवश्यक कार्यवाही
No Demand Certificate	बेबाकी पत्र
No Objection Certificate	अनापत्ति प्रमाणपत्र
Non-gazetted	अराजपत्रित
Non-official	गैरसरकारी/अशासनिक
Notice	सूचना
Notification	अधिसूचना
Noting	टिप्पणी लेखन
Office Memorandum	कार्यालय ज्ञापन
Officer on Special Duty	विशेष कार्याधिकारी
Official	शासकीय/सरकारी/आधिकारिक
Officiating	स्थानापन्न
On Probation	परिवीक्षाधीन
Panel	नामिका
Parliament	संसद
Part File	खंड मिसिल
Passport	पारपत्र/पासपोर्ट
Pay Scale	वेतनमान
Pending	लंबित/रुका हुआ
Plan	योजना
Post	पद
Posting	तैनाती

Sinedie	अनिश्चितकाल के लिए
Standing	स्थायी
Statutory	सांविधिक
Subordinate	अधीनस्थ/मातहत
Substitute	स्थानापन्न/एवजी
Superintendent	अधीक्षक
Supervisor	पर्यवेक्षक
Supplementary	अनुपूरक
Surety Bond	जमानतनामा
Technical	तकनीकी
Transfer	स्थानांतरण
Treasurer	कोषाध्यक्ष
Treasury	कोष
Undertaking	उपक्रम/वचनबद्धता
Verification	सत्यापन
Vice-chancellor	उप-कुलपति
Warrant	अधिपत्र
Whip	सचेतक
Write-off	बट्टे खाते डालना

वाणिज्यिक

Acceptance	स्वीकृति
Accessory	उपसाधक
Account Broken	बंद खाता
Current Account	चालू खाता
Fixed Deposit Account	सावधिक जमा खाता
Saving Bank Account	बचत बैंक खाता
Account Day	निपटारा दिन
Adjustment	समायोजन
Advertisement	विज्ञापन
Aggregate Value	कुल मूल्य
Annual Return	वार्षिक विवरणी